आलमगीर

[ऐतिहासिक उपन्यास]



आचार्य चतुरसेन शास्त्री



दी प्रचारक पुस्तकालय
वाराणसी-१
फोन : २११६

[मूल्य १००

अगस्त १९६६
[२१००]

●

मूल्य
६.०० मात्र

प्रकाशक
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
पो. बॉ. नं ७०, पिशाचमोचन
वाराणसी—१

मुद्रक
न्यू किरण प्रेस
[illegible]
वाराणसी—१

आलमगीर



परिच्छेद-सूची

—



प्रवचन

– १ –

मुहीउद्दीन मुहम्मद औरंगजेब, शाहजहाँ और मुमताज महल की सातवीं सन्तान था। उसका जन्म दोहद में जो बम्बई सूबे के पंचमहल जिले में इसी नाम के ताल्लुके का प्रधान नगर है, २४ अक्टूबर सन् १६१८ में हुआ।

वह शाहजादा, तीव्र बुद्धि, गम्भीर और विलक्षण स्मृति का युवक था। उसका कुरान का ज्ञान तथा हदीस का अध्ययन सम्पूर्ण था। वह बात-बात में उनका उल्लेख करता था। अरबी, फारसी का वह पण्डित था। वह इन भाषाओं को विद्वान की भाँति लिख और बोल सकता था। उन दिनों मुगल हरम की घरेलू भाषा हिन्दी थी, औरंगजेब को भी उसका अच्छा ज्ञान था। वह हिन्दी की लोकप्रिय कहावतों का बातचीत में बहुधा प्रयोग करता था। शृंगारिक काव्य-साहित्य से उसे घृणा थी। उपदेशात्मक वाक्य, कविताएँ उसे पसन्द थीं। धार्मिक ग्रन्थ और कुरान की टीकाएँ, मुहम्मद के जीवनवृत्त वह चाव से पढ़ता था। इमाम मुहम्मद गजाली की कृतियाँ, मुनीर निवासी शेख शर्फयहिया और शेख जैनुद्दीन कुतुबमुही शीराजी के चुने हुए पत्र वह प्रेम से पढ़ता था। चित्रकारी भी उसे पसन्द न थी और गान विद्या का भी उसे शौक न था। न उसे स्थापत्य से प्रेम था। हाँ, चीनी के सुन्दर बर्तनों का उसे शौक था।

इसी औरंगजेब ने आलमगीर प्रथम के नाम से मुगल तख्त पर बैठकर पचास वर्ष पर्यन्त शासन किया।

– १ –

बादशाह शाहजहाँ के फीलखाने में दो दिग्गज हाथी थे। एक का नाम था 'सुधाकर' और दूसरे का 'सूरत सुन्दर'। २८ मई सन् १६३३ के दिन प्रभात में बादशाह ने इन दोनों हाथियों की लड़ाई का आयोजन आगरा में यमुना के समतल तट पर किया। दो भिन्न दिशाओं से दौड़ते हुए वे दोनों हाथी किले के उस झरोखे के नीचे, जहाँ सुबह में बादशाह प्रजा को दर्शन देता था आपस में भिड़ गए। हाथियों की यह लड़ाई देखने को उत्सुक शाहजहाँ शीघ्रता से वहाँ पहुँचा। उसके तीनों बड़े पुत्र उससे कुछ कदम आगे घोड़े पर सवार खड़े थे। उत्सुकतावश औरंगजेब हाथियों के बहुत निकट पहुँच गया था।

कुछ देर बाद दोनों हाथी एक दूसरे को छोड़कर पीछे हटे। 'सूरत सुन्दर' एक ओर को भाग गया। अपने प्रतिद्वन्द्वी को पास न पाकर 'सुधाकर' ने पास खड़े औरंगजेब पर हमला कर दिया। उस समय औरंगजेब की अवस्था चौदह वर्ष की थी। परन्तु यह निडर अल्पवयस्क शाहजादा हाथी से नहीं डरा, अपने घोड़े को सम्हाले वहीं डटा रहा और अवसर पाकर उसने निश्शंक आगे बढ़कर हाथी के सिर पर भाले का वार किया। लोग घबरा कर इधर उधर भागने लगे। हाथी को भगाने के लिये पटाखे छोड़े गए, पर हाथी बढ़ता ही चला आया। उसने अपने बड़े-बड़े दाँतों की टक्कर से औरंगजेब के घोड़े को गिरा दिया। परन्तु बहादुर शाहजादा फुर्ती से उठ खड़ा हुआ और तलवार खींच कर क्रुद्ध हाथी पर वार करने लगा। इसी समय उसका भाई शुजा घोड़ा दौड़ा कर वहाँ आन पहुँचा और हाथी पर भाले से चोट करने लगा। महाराज जयसिंह भी फुर्ती से आ गए और हाथी पर पिल पड़े। फिर भी हाथी पीछे न हटा। इसी समय 'सूरत सुन्दर' भी घूमता हुआ आ गया। भालों और तलवारों से

चिंघाड़ और पत्थरों की आवाज से बौखलाया हुआ 'सुधाकर' चिंघाड़ता हुआ भागा। 'सूरत सुन्दर' ने उसका पीछा किया और शाहजादा औरंगजेब बच गया। बादशाह ने दौड़कर उस हाथी से लिपट लिया—और 'बहादुर' की पदवी देकर उसकी प्रशंसा की। पर इस अविवेकी साहस के लिए प्यार से उसे कोसा। तब औरंगजेब ने कहा—'इस लड़ाई में मैं यदि मारा भी जाता तो शर्म की क्या बात थी। मौत तो बादशाहों पर भी परदा डालती है।'

— ३ —

१३ दिसम्बर १६३४ को जब कि औरंगजेब केवल पन्द्रह बरस का था उसे दस हजार घोड़ों का शाही मनसब मिला और इसके एक वर्ष बाद उसे तीन सेनाओं का अधिपति बनाकर बुन्देलखंड पर आक्रमण करने भेजा गया। इस मुहिम को उसने एक ही मास में जय किया, ओरछा का प्रसिद्ध मन्दिर ढहा दिया और एक करोड़ का लूट का माल ले कर पीछे फिरा।

— ४ —

१४ जुलाई १६३६ को औरंगजेब को दक्खिनी सूबों का सूबेदार बनाया गया। वहाँ की स्थिति बहुत पचीली थी। अहमदनगर के निजामशाही राज्य के अन्तिम सुलतान हुसैन शाह कैद कर लिए गए थे। पर, बीजापुर और गोलकुण्डा के सुलतानों ने अपने राज्यों से संलग्न अहमदनगर राज्य के मुख्य प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था। शिवाजी के पिता शाहजी ने बीजापुर राज्य की सहायता से एक नए निजाम शाह सुलतान को अहमदनगर राज्य के सिंहासन पर ला बैठाया था, जो वास्तव में उनके हाथ की कठपुतली था। वास्तव में शाहजी ही तब अहमदनगर के अवशिष्ट प्रदेशों पर शासन कर रहे थे।

बादशाह शाहजहाँ ने सुव्यवस्था के विचार से दौलताबाद और अहमदनगर को खानदेश से पृथक करके स्वतन्त्र सूबा बना दिया था। सन् १६३६ में स्वयं बादशाह ने ५० हजार मुगल सैन्य लेकर बीजापुर और गोलकुण्डा पर आक्रमण किया था। दोनों राज्यों ने पराजित हो मुगल राज की अधीनता स्वीकार कर ली थी। इस प्रकार दक्षिण में मुगल राज्य की सीमा निर्धारित कर तथा बीजापुर, गोलकुण्डा और अहमदनगर राज्यों को अधीन कर शाहजहाँ ने सन् ३६ में औरंगजेब को दक्षिण का सूबेदार बनाया था। औरंगजेब ने औरंगाबाद नगर बसा, उसे राजधानी बना, वहाँ का चातुर्यपूर्ण शासन किया।

— १ —

२१ जनवरी सन् १६४७ में औरंगजेब को बल्ख और बदख्शाँ का सूबेदार तथा प्रधान सेनापति नियुक्त किया गया। ये दोनों प्रान्त हिन्दुकुश पर्वत के उस पार काबुल के ठीक उत्तर में बुखारा राज्य के आश्रित थे। वहाँ का शासक सुलतान नजर मुहम्मद खाँ एक कमजोर और अयोग्य शासक था। उसके राज्य में निरन्तर विद्रोह होते रहते थे। ये दोनों प्रान्त तैमूर की राजधानी समरकन्द की राह में थे और कभी इन पर बाबर का अधिकार रहा था। इसी दावे पर शाहजहाँ ने उन पर अधिकार करके अपनी सेनाएँ भेजी थीं। पहले वहाँ मुराद बख्श को भेजा गया। पर वह मध्य एशिया में रहना नहीं चाहता था और उजबकों का सामना करने से हिचकता भी था। वह दो महीने वहाँ रहकर बिना बादशाह की आज्ञा लिए वहाँ से भाग आया और तब औरंगजेब को वहाँ भेजा गया।

औरंगजेब को कभी न थकनेवाले चपल उजबकों से कठिन मोर्चा लेना पड़ा। और निरन्तर युद्ध करना पड़ा। रसद और कठिनाइयाँ बहुत थीं। एक-एक सेरी का मूल्य दो रुपया हो गया था और पानी भी ऐसा ही महँगा मिलता था। पर औरंगजेब ने धीरज, दृढ़ता और

नियन्त्रण से सेना को नियन्त्रण में रखा। अन्त में नजर मुहम्मद से संधि हो गई। इस युद्ध में धन-जन की बहुत हानि हुई। चार करोड़ रुपया खर्च हुआ और एक इंच जमीन भी न मिली।

— ६ —

सन् १६४८ से ५२ तक वह सिन्ध और मुलतान का सूबेदार रहा। मुलतान और सिन्ध के प्रान्तों में बसनेवाली अफगान और बलूच जातियाँ बहुत ही जंगली और पिछड़ी हुई थीं। मुग़ल साम्राज्य के इन सीमान्त प्रदेशवासियों को औरंगज़ेब नाम मात्र को साम्राज्य के आधीन कर सका। फिर भी उसने इस प्रान्त को बहुत व्यवस्थित किया और सिन्धु नदी के निचले भाग में एक नया बन्दरगाह स्थापित किया।

— ७ —

इस बीच वह ईरानियों से कन्धार छीनने दो बार वहाँ भेजा गया। भारतवर्ष में पश्चिमी दिशा से आनेवाले मार्ग के मुख-द्वार पर स्थित दक्षिण से काबुल को जानेवाली राह को रोकने वाला, कन्धार का यह किला, इन दो महत्वपूर्ण मार्गों की निगहबानी करता था। कन्धार से आगे पूरे १६० मील तक समतल मैदान चला गया है। और इस मैदान के पश्चिमी छोर पर हिरात का प्रसिद्ध किला था। हिरात के पास ही हिन्दुकुश की पर्वतश्रेणी की ऊँचाई कम होने लगती है जिस से मध्य एशिया और फारस से भारत पर आक्रमण करनेवालों को हिन्दुकुश पार करने में कोई कठिनाई नहीं होती थी। हिरात से भारत को आनेवाली इसी राह पर स्थित होने के कारण कन्धार का यह किला सैनिक दृष्टि से बहुत महत्व रखता था। उन दिनों काबुल का सूबा दिल्ली साम्राज्य में सम्मिलित था, इसलिए भारत की सुरक्षा के लिए कन्धार का किला सबसे अधिक महत्वपूर्ण और अत्यावश्यक मोर्चे की श्रेणी में गिना जाता था।

इन दिनों हिन्द महासागर पर पुर्तगालियों की जल-सेना का एकाधिपत्य था, जिसके कारण भारत से फारस की खाड़ी तक के जल मार्ग प्रायः बन्द से ही रहते थे। भारतवर्ष और मसाले उत्पन्न करनेवाले द्वीपों से पश्चिमी देशों में जानेवाला सारा व्यापारी सामान स्थल-मार्ग ही से मुलतान, पिशिन और कन्धार की राह ही फारस और योरोप जाता था। उन दिनों प्रतिवर्ष विभिन्न माल से लदे हुए कोई १४ हजार ऊँट इस मार्ग से फारस जाते थे। इसी कारण कन्धार शहर उन दिनों अत्यन्त सम्पन्न और व्यापार का केन्द्र भी बन गया था और उसका व्यापारिक महत्त्व भी उतना ही था जितना सामरिक। इस प्रकार इस भौगोलिक, आर्थिक और सामरिक स्थिति के कारण कन्धार का किला भारतवर्ष और फारस के महाराज्यों के बीच कशमकश का एक प्रधान कारण बन गया था। सन् १६२२ में जहाँगीर के अन्तिम दिनों में ईरान के शाह अब्बास ने ४५ दिन घेरा डालकर इसे वश किया था। इसके बाद वहाँ के ईरानी सूबेदार अलीमर्दानखाँ ने अपने स्वामी से विश्वासघात करके यह किला चुपचाप शाहजहाँ को सौंप दिया था। परन्तु ईरानियों ने ५७ दिन घनघोर युद्ध कर उसे फिर कब्जे में कर लिया था।

परन्तु केवल सामरिक और आर्थिक महत्त्व के ही कारण नहीं, *अपनी प्रतिष्ठा और मर्यादा के विचार से भी अब यह आवश्यक हो* गया था कि यह किला फिर मुगल छीन लें—शाहजहाँ के पुत्रों ने कन्धार के तीन घेरे डाले, पर सफलता नहीं मिली। पहिला घेरा था सन् १६४९ में औरंगजेब और वजीर सादुल्ला खाँ के सेनापतित्व में डाला गया था उसमें ५० हजार मुगल सेना थी। जिसके साथ तोपखाना भी था। पर शाही सेना के सारे ही प्रयत्न विफल हुए। दूसरी बार किला लेने की तैयारियाँ और भी बड़े पैमाने पर की गई—औरंगजेब और सादुल्ला खाँ ने सन् १६५२ में फिर किले को जा घेरा।

वारों को दहान को तोपें काम में लाई गईं, और खाइयों तक सुरंगें खोदी गईं तथा खाई का पानी सुखाने के प्रयत्न किए गए। 'सेतल तीना' लगाकर बुर्जों पर चढ़ने की चेष्टा की गई। परन्तु ये सभी प्रयत्न व्यर्थ हुए और दो महीने बाद शाही फ़ौज पीछे फिर आई। निस्संदेह यह औरंगजेब की असफलता थी और बादशाह इस पर अप्रसन्न भी हुआ। परन्तु इस असफलता का कारण दूषित युद्ध नीति ही थी।

– ८ –

कन्धार से काबुल लौट आने पर औरंगजेब को दूसरी बार सन् १६५२ में दक्षिण का सूबेदार बनाया गया।

सन् १६४४ में उसने जब दक्षिण की सूबेदारी छोड़ी थी तब से वहाँ की शासन-व्यवस्था बहुत ही खराब थी। यद्यपि इन सूबों में शान्ति बनी रही। किन्तु बहुत-सी उपजाऊ ज़मीन पड़ती रहकर जंगलों में बदल गई। किसानों की संख्या कम हो गई। उनकी आर्थिक स्थिति बिगड़ गई। इससे सूबों की आय भी कम हो गई। वहाँ कभी पूरी वसूली नहीं हुई, पर शाही खज़ाने का बहुत धन दक्षिणी सूबों पर खर्च होता था। सम्पूर्ण दक्षिणी सूबों की वार्षिक आय तीन करोड़ बासठ लाख रुपये थी, पर वसूल होता था एक करोड़ रुपयों से भी कम। इसलिए इन प्रान्तों में सुव्यवस्था बनाए रखने को अन्य समृद्धिशाली प्रान्तों की आय खर्च करनी पड़ती थी।

औरंगजेब को दक्षिण पहुँच कर सबसे प्रथम इस कठिन आर्थिक परिस्थिति का सामना करना पड़ा। उसे खेतीबाड़ी सुधारने उसे बढ़ाने और किसानों की दशा को सुधारना था, पर इसके लिये पर्याप्त धन चाहिए था। निरन्तर युद्धों के कारण प्रान्तों में अराजकता फैली हुई थी, और देश उजाड़ हो गया था। दस वर्षों से भी अधिक काल से शासन प्रबन्ध अव्यवस्थित था।

परन्तु औरंगजेब का साहस और धैर्य तथा बुद्धिबल सर्वत्र कार्य करता था। उसने नए सिरे से जमीन का बन्दोबस्त किया और मालगुजारी व्यवस्था स्थापित की। इस काम में खुरासान के मुर्शिद कुली खाँ ने—जो कन्धार से वहाँ के ईरानी सूबेदार अलीमर्दान खाँ के साथ ही भाग आकर भारत में बस गया था—औरंगजेब की भारी सहायता की। वही विचक्षण मनस्वी पुरुष दक्षिण में औरंगजेब का दीवान था।

इससे पहिले दक्षिण में मालगुजारी की कोई स्थायी व्यवस्था न थी। जमीन को अलग-अलग विभागों में बाँट कर उनकी सीमाएँ निश्चित करना, खेतों का क्षेत्रफल मापना, प्रतिबीघा के हिसाब से मालगुजारी निर्धारित करना, अथवा मालगुजार और किसानों के बीच कुल उपज के बटवारे आदि के तरीके-कायदे निश्चित करना इन सब बातों को औरंगजेब ने दक्षिण में जारी किया। पहिले वहाँ का किसान एक हल और एक जोड़ी बैल से मनचाही जमीन जोत-बो लेता था और प्रति हल के हिसाब से राज्य को थोड़ा-सा कर दे देता था। मालगुजारी की दर भिन्न-भिन्न थी, जो शासकों के इच्छानुसार होती थी। किसान बरसों तक लगातार वर्षा के अभाव और निरन्तर मुगलों के साथ होते रहते युद्धों से पूरे बर्बाद हो चुके थे। वे घर-बार छोड़ भाग गए थे, गाँव उजाड़ पड़े थे। खेत जंगल हो गए थे। औरंगजेब ने इस नए सुधार को योग्य हाकिमों की देखरेख में व्यवस्थित किया। सब जगह चतुर अमीनों तथा ईमानदार पैमाइश करने वालों, जमीन नापनेवालों—खेतों के रकबे आदि का ठीक लेखा-जोखा रखने तथा खेती की जमीन को पथरीली भूमि से तथा नदी-नालों से पृथक निश्चित करने के लिए उपयुक्त कार्यकर्त्ता नियुक्त किए। गाँव के मुखिया मुकद्दम वहाँ के चरित्रवान जनों को बनाया। शाही खजाने से, खेती के पशु, बीज और तकावी दी। इससे देखते

ही-देखते दक्षिण के उजाड़ गाँव आबाद हो गए और खेत फिर लहराने लगे।

उसने दक्षिण में राज्यशासन में भी भारी सुधार किए। अयोग्य—बूढ़े लोगों को हटा कर महत्त्वपूर्ण पदों पर विश्वसनीय और योग्य अधिकारी नियुक्त किए। सैनिक संगठन के कुप्रबन्ध को दूर किया और अनुभवी सेनानायकों की नियुक्ति की। किलों के शस्त्रागारों, अन्न भण्डारों को सुव्यवस्थित किया तथा उन्हें सम्पन्न किया। बढ़िया तोपची और मातसदार नियुक्त किए। अयोग्यों को अलग किया। इससे वहाँ फ़ौज व्यवस्थित हो गई वहाँ साथ में ५० हजार रुपया सालाना की बचत भी हुई।

— ९ —

अन्त में वह समय भी आया जब वह अपनी सबसे बड़ी मुहिम पर संसार का सबसे बड़ा बादशाह होने को दक्षिण से चला। विजय ने उसके चरण चूमे और उसने भाइयों के रक्त से सने हाथों का धो-पोंछ कर पचास वर्ष उन्हीं हाथों से मुग़ल साम्राज्य का महान् चक्र चलाया।

— १० —

इस महान् बादशाह का चरित्र ही सत्रहवीं शताब्दी के पिछले पचास वर्षों का भारतवर्ष का इतिहास है। भारत के इतिहास में उसका शासन-काल बहुत महत्त्वपूर्ण है। उसके आधिपत्य में ही मुग़ल साम्राज्य की सीमाएँ अपनी अन्तिम हद को पहुँच गई थीं। ग़ज़नी से लेकर चटगाँव तक और काश्मीर से लेकर कर्नाटक तक भारत महादेश इसी एक शासक के आधीन था। इस्लाम ने अपना आख़िरी ज़ोर इसी शासन-काल में पूरा किया। इस अभूतपूर्व विस्तृत साम्राज्य की राजनैतिक एकता अभूतपूर्व थी। इसके साम्राज्य में

विभिन्न प्रान्तों का प्रबन्ध छोटे-छोटे स्वाधीन राजाओं के हाथ में न रहकर सीधा बादशाह द्वारा नियुक्त कर्मचारियों द्वारा ही होता था। और इसी से इतिहासकार इसके साम्राज्य को अशोक, समुद्रगुप्त या हर्ष के साम्राज्य से कहीं अधिक विशाल और परिपूर्ण कहते हैं। इसी बादशाह के शासनकाल में दो महान् घटनाएँ हुईं—एक दक्षिण में महाकालीन मराठा राजवंश के भग्नावशेषों से मराठा-राष्ट्रीयता का उदय हुआ और दूसरे उत्तर में सिख सम्प्रदाय ने सैनिक रूप धारण कर मुगल साम्राज्य के विरुद्ध तलवार उठाई। इस प्रकार अठारहवीं उन्नीसवीं शताब्दियों में विकसित प्रमुख भारतीय ऐतिहासिक घटनाओं का प्रारम्भ भी इसी महान् सम्राट् के राज्यकाल में हुआ।

इसी सम्राट् के जीवन-काल में मुगल तख्त डगमग होने लगा। साम्राज्य के खजाने और गौरव का दिवाला निकल गया। शासन व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई और मुगल राजसत्ता देश में शान्ति और राज्य की एकता बनाए रखने में असमर्थ हो गई। भारत के भावी शासकों के पैर भारत में जम गए। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सन् १६३९ ई० में मद्रास प्रान्त, १६८७ में बम्बई और १६९ में कलकत्ता प्रेसेडेन्सी की नींव डाली। जिससे उन योरोपीय आश्रय स्थानों ने साम्राज्य के भीतर दूसरे स्वाधीन राज्य का रूप धारण कर लिया। सत्रहवीं शताब्दी के आखीर में मुगल साम्राज्य की जड़ें खोखली हो चली थीं। खजाना खाली पड़ा था, मुगल सेना दुश्मनों से पराजित व अपमानित हो चुकी थी। देश में नवीन राज्य स्थापित होने लगे थे। मुगल साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो रहा था। साम्राज्य का नैतिक पतन हो चुका था। लोगों की निगाह में मुगल साम्राज्य के प्रति आदर का भाव नाम मात्र को भी न था। सरकारी कर्मचारी ईमानदारी व कार्यकुशलता खो चुके थे, न मन्त्री शासनपटु थे, न राजा। सेना निस्तेज-निर्बल और अनियन्त्रित थी। आगे चलकर नादिरशाह और

अहमदशाह ने मुगलों की महिमामयी राजधानी दिल्ली और मुगल सम्राट् की इज्जत खराब करके उसकी महत्वहीनता सिद्ध कर दी।

औरंगज़ेब निर्बुद्धि, आलसी और व्यसनी न था। उसकी मानसिक सतर्कता प्रसिद्ध थी। वह गम्भीर मनन और गहरी लगन से राजकाज देखता था। मानवीय ज्ञान उसका सम्पूर्ण था। युद्ध और कूटनीति का भी वह विशारद था; फिर भी इस बड़े बादशाह के पचास वर्ष के शासन का परिणाम निकला असफलता-अशान्ति-पतन !!!

— ११ —

यह राजनैतिक वैषम्य भारतीय राजनीति और इतिहास के विद्यार्थी के लिये मनन करने योग्य है। औरंगज़ेब की जीवनी एक ऐसे भाग्यहीन मनुष्य की जीवनी है जो जीवन भर निष्ठुर भाग्य के साथ लड़ता और पराजित होता रहा। उसके पचास वर्ष के कठोर शासन का अन्त घोर असफलता में हुआ। उसके जीवन के प्रारम्भिक चालीस वर्ष इस महान् साम्राज्य के योग्यतम सम्राट् बनने योग्य आत्मशिक्षण में बीते। एक वर्ष तख्त-ताऊस के लिए कठिन युद्ध में बीता जिसमें उसकी सारी शक्तियों की परीक्षा हो गई। यद्यपि उसके शासन के प्रारम्भिक २१ वर्ष शान्त और समृद्ध व्यतीत हुए। जब कि वह उत्तर भारत की राजधानियों में ठाठ से रहा। उसके सब शत्रु नष्ट हो चुके थे। उसके सतर्क शासन के संकेत पर भारत का विशाल साम्राज्य-चक्र चल रहा था। धन धान्य बढ़ रहे थे और वह मुगल बादशाह कीर्ति और ऐश्वर्य के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच गया था।

परन्तु मुगल खून का प्रभाव ही उसका दुर्भाग्य बन गया और उसी का पुत्र मुहम्मद अकबर उसका विद्रोही बन बैठा। इस विद्रोही शाहजादे ने मराठा राजा की शरण ली और वह औरंगज़ेब को दक्षिण खींच ले गया। जहाँ उसके २६ वर्ष व्यतीत हुए। साम्राज्य का

खजाना, सेना का संगठन और बादशाह का स्वास्थ्य दक्षिण के असफल युद्ध में बर्बाद हो गया।

अभी भी ऊपरी दृष्टि से सब ठीक-सा लग रहा था। बीजापुर और गोलकुण्डा मुग़ल साम्राज्य में मिल गए थे। मराठा राजा मार डाला गया था, और उसकी राजधानी नष्ट हो चुकी थी। तथा उसका सारा कुटुम्ब बन्दी बना लिया गया था। प्रगट में औरंगज़ेब एक विजयी सम्राट् ही प्रतीत होता था। परन्तु उसके अन्तिम जीवन के १८ वर्ष अपने विरुद्ध एकत्रित बलिष्ठ शक्तियों से संघर्ष करने में और उसमें निरन्तर असफल होने में बीतते चले गए। उसने बहुत चालें चलीं, अनेक नए साधनों और उपायों का प्रयोग किया। वह ८८ वर्ष की आयु में स्वयं युद्धस्थल में उतरा, परन्तु बेकार!!!

अन्त में मृत्यु ने उसका दामन पकड़ा और अहमदनगर में उसकी ज़िन्दगी का सफ़र ख़त्म हुआ!!!

ज्ञानधाम
दिल्ली शाहदरा
प्रथम श्रावण
सं० २००८

चतुरसेन

: १

दिल्ली में उत्साह की लहर

सन् १८५७ की सातवीं जुलाई को दिल्ली की सब सारी कचहरियाँ बन्द थीं। कुल दफ्तरों की छुट्टियाँ थीं। बादशाह सलामत की आज्ञा से तमाम हिन्दू मन्दिरों में विशेष आरती हो रही थी। उनके शंख और घड़ियालों के प्रमुख नाद से नगरनिवासी उस दिन बहुत जल्द जग गए थे। सारे नगर में एक चहल-पहल मच गई थी, तमाम मस्जिदों में सामूहिक प्रार्थनाएँ हो रही थीं, सारा शहर कई दिन से सजाया जा रहा था। बाजार की सफाई हो गई थी, और तमाम खास रास्ते रङ्ग-बिरङ्गी झण्डियों से सजाए गए थे। सड़कों पर पिछली रात से ही छिड़काव हो रहा था। सरकारी बरकन्दाज और प्यादे दौड़-धूप करके बन्दोबस्त कर रहे थे। अमीर उमराव सज-धज कर लवाजमे के साथ भाँति भाँति की सवारियों पर किले की ओर जा रहे थे। किले की सड़क हाथियों, पालकियों, और घोड़ों की सवारियों से भरी हुई थी। रङ्ग-बिरङ्गी पोशाकें पहने झुण्ड के झुण्ड नागरिक किले की ओर तेजी से जा रहे थे। किले में आज एक बड़ा भारी दरबार होने वाला था, जिसमें शरीक होने के लिये बादशाह सलामत ने हर खासोआम को हुक्म दिया था। इस खुशी के कारण का ठीक-ठीक पता किसी को न था। लोग आपस में ईह-वाह कर रहे थे, बहुत लोग बहुत तरह की बातें कर रहे थे। गप्पी लोगों को गप्प उड़ाने का काफी मसाला मिल गया था। जो जिसके मन में आता था बकता था। कोई कहता था, हजरत शाहजादा दारा शिकोह आज बड़ी भारी मुहिम फतह करने के लिए कूँच करने वाले हैं। कोई कहता था, जी नहीं जनाबे आलम

आम खास का दरबार खास तौर पर सजाया गया था। उसका प्रत्येक खम्भा ज़री के काम के बहुमूल्य परदों से मढ़ा गया था। छत में रेशमी चंदोवे तने थे, जिनमें रेशम और ज़री के फुंदने टंके हुए थे। फर्श पर बहुत बढ़िया नर्म रेशमी क़ालीन बिछे थे। बाहर एक बड़ा भारी खीमा खड़ा था जो सहन में आधी दूर तक फैला हुआ था। उसके चारों ओर चाँदी की पत्तियों से मढ़ा हुआ कटहरा लगा था। इस खीमे में लकड़ी के तीन बड़े खम्भे गड़े थे जो दूर से जहाज़ की मस्तूल की भाँति बोझ पकड़ते थे। इस खीमे के बाहर की ओर लाल रङ्ग का कपड़ा लगा था और भीतर मछलीपट्टम की छींट थी। यह छींट इसी काम के लिए तैयार कराई गई थी। उसके बेल बूटे ऐसे मालूम थे और उसका रङ्ग ऐसा चटकीला एवं स्वाभाविक था कि देखते ही बनता था।

अमीरों को खास तौर पर इस अवसर पर हुक्म दिया गया था कि आम खास के चारों ओर की मेहराबें अपने खर्च से सजावें। उन्होंने शाही कृपा प्राप्त करने के लिए एक-से-एक बढ़कर अपनी-अपनी मेहराब सजाई थी। आम खास की सारी दीवारें कमख़ाब और ज़री के काम के दुशालों से ढक गई थीं और ज़मीन बहुमूल्य सुन्दर क़ालीनों से भर गई थी।

: २ :

तख़्ते-ताऊस

सम्राट् अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ ने तीन पीढ़ियों में बहुत से रत्न हीरे-मोती जमा किए थे। बादशाह ने सोचा इन रत्नों को यदि लोगों ने नहीं देखा तो फिर बात ही क्या? उस समय बादशाह के पास ६ करोड़ रुपयों के जवाहरात थे। इनमें दो करोड़ रुपये मूल्य के

जवाहरात हरम में दासियों के पास रहते थे, शेष तीन करोड़ रुपये मूल्य के रत्न बाहर क्रीत दासों के पास रहते थे। इनके सिवाय दो करोड़ मूल्य के रत्न शाहजादों, शाहजादियों तथा अन्य लोगों के पास थे।

बादशाह ने क्रीत दासों के पास जो रत्न थे उनमें से कुछ उत्तम रत्न जिनका मूल्य सोलह लाख रुपया था—चुनकर निकाल लिए और सरकारी सुनारों को बुलवाकर ये सब रत्न तथा एक लाख तोला सोना जिसका मूल्य उन दिनों सिर्फ चौदह लाख रुपया था, देकर सुनारों के प्रधान बेबादल खाँ को हुक्म दिया कि ठोस सोने का एक ऐसा रत्न जटित सिंहासन तैयार करो जैसा पृथ्वी पर किसी बादशाह के पास न हो।

बेबादल खाँ ने दो सौ चुने हुए कारीगरों की सहायता से आठ वर्ष में यह तख्ते ताऊस तैयार किया था। यह सिंहासन साढ़े तीन गज लम्बा और सवा दो गज चौड़ा तथा पाँच गज ऊँचा था। सिंहासन की छतरी के नीचे के हिस्से में मीनाकारी की हुई थी। छतरी के भीतर बहुत कम हीरे जड़े थे परन्तु ऊपरी हिस्से में असंख्य बहुमूल्य पत्थर लगाए गए थे। पन्ने के बारह खम्भों पर सिंहासन की छत थी। उसके ऊपर मणि-मुक्ता के दो मोर बने हुए थे। इन मोरों के बीच में हीरा जड़ा एक वृक्ष बना था। गद्दी पर चढ़ने को तीन सीढ़ियाँ थीं, सीढ़ियाँ रेलिंग से घिरी थीं। केवल सम्राट की बैठक के सम्मुख रेलिंग नहीं थी। रेलिंग के भीतर सम्राट के बैठने का मसनद था। इस बैठक के बनाने में दस लाख रुपए खर्च हुए थे। इसमें एक ऐसी मणि जड़ी थी जिसका अकेले का ही मूल्य एक लाख रुपया था। इस मणि को फारस के शाह अब्बास ने सम्राट जहाँगीर को उपहार में दिया था। इसमें तैमूर, मीर शाहरुख, मिर्ज़ा उलुग बेग, शाह अब्बास, जहाँगीर और शाहजहाँ के नाम खुदे हुए थे। सिंहासन के भीतर हाजी मुहम्मद जान कुदसी की बनाई हुई चालीस पंक्तियों

की एक कविता मीनाकारी के अक्षरों में खुदी हुई थी। कविता के शेष तीन शब्द थे—औरंग इ शाहंशा-इ-आदिल, अर्थात् न्यायपरायण राजाधिराज का सिंहासन।

सुनारों के वेतन को छोड़कर केवल सिंहासन बनाने के मसालों को खरीदने में एक करोड़ रुपया खर्च हुआ था।

विश्व के महार्घ रत्नों से निर्मित वह अप्रतिम सात करोड़ रुपये मूल्य का सिंहासन वास्तव में आत्मीयों के रक्त से निर्मित हुआ था।

आज पहली बार ही बादशाह सलामत इस अलौकिक सिंहासन पर बैठकर दरबार करने वाले थे। इस अलौकिक तख्त को देखने के लिए छोटे-बड़े सब लोग बहुत उत्सुक थे। तख्त पर तीन मसनद निहायत नर्म मखमल के पड़े थे। एक बड़ा था जो पाँच बालिश्त गोल था, यह बादशाह की पीठ के सहारे के लिए था। दो गोल और थे जो दोनों बाजुओं में रखे थे। नीचे एक अति बहुमूल्य चटाई पर कारचोबी काम की गद्दी बिछी थी। तख्त के इर्द-गिर्द एक कदम के फासले पर एक ऊँचा सुनहरी कंगला था जिसमें केवल शाहजादे ही जा सकते थे। इसी स्थान पर वे लोग तस्लीमात बजाकर तख्त के नीचे खड़े हो सकते थे। तख्त के पीछे बहुत से कद्दावर गुलाम छत्र, छतरियाँ, पीकदान, हुक्का, पानदान, तलवार, चोरी आदि लिये मुस्तैद खड़े थे। तख्त से नीचे वजीर और बड़े-बड़े उमराओं के लिए जगह थी जो एक रुपहले कटहरे से घिरी थी। अमीर और वजीर अपनी जगह पर चुपचाप भारी-भारी कसे पटके नीचे सिर झुकाए और दोनों हाथ कुहनियों पर रखे खड़े थे। कटहरे के चारों ओर गुर्जबरदार लोग मुस्तैद थे। उनके हाथों में सुनहरे गुर्ज थे, वे बड़ी फुर्ती से शाही अहकाम शाहजादों, वजीरों और सिपहसालारों तक पहुँचा रहे थे। इससे एक कदम पीछे हटकर खुला स्थान था, जहाँ फौज के अफसर

रबारी राजाओं को सूबों के हाकिमों, सिपहसालारों और शाहज़ादों के उसी भाँति पहुँचा रहे थे। इनके चारों तरफ़ किरमची रंग का ज़रकारी के काम का लकड़ी का बँगला था जो सारे दरबार को चारों ओर से घेरे हुए था।

जिस जगह पर यह तख्त बिछा था, उसमें बीस जड़ाऊ स्तून थे, जिन पर उस आमख़ास की छत थी। यह छत उस तमाम जगह पर फैली हुई थी जिसमें रुपहली बँगला लगा था। इसके आगे भाग में ज़रबफ़्त का एक क़ीमती शामियाना तना था जो सोने के स्तूनों पर खड़ा था। लकड़ी के बँगले के बाहर एक विस्तृत मैदान था, जहाँ सजे सजाये नौ घोड़े एक तरफ़ और नौ ही दूसरी तरफ़ खड़े थे। इनके बाद दो चार बड़े-बड़े हाथी खड़े थे जो सिर से पैर तक सुनहरी झूलों से सजे थे, ये हाथी बादशाह सलामत को सलाम करने की रस्म अदा करने के लिए लाए गए थे। इनके बाद बहुत से पहरेदार सिपाही सफ़ बाँधकर खड़े थे। सबके अन्त में एक बड़ा भारी दालान था जहाँ ८० प्रकार के बाजे वाले मुस्तैद खड़े थे। बादशाह के आते ही ये बाजे बजाए जानेवाले थे। कुछ अफ़सर सब व्यवस्था की निगरानी मुस्तैदी से कर रहे थे। दरबार में आश्चर्यजनक सन्नाटा और व्यवस्था थी। प्रबन्ध के लिए जो नक़ीब फिर रहे थे, उनके हाथ में सुनहरी असे थे, वे रुपहली बँगले के भीतर भी आ-जा सकते थे। ये लोग अत्यन्त सावधानी से देख रहे थे कि कोई ऐसा काम, जिससे बादशाह अप्रसन्न हों, न होने पाए।

तख्त के बिलकुल निकट सुनहरी कटहरे से सटकर, तख्त के नीचे और एक छोटा-सा तख्त था जो शाही तख्त के समान ही इस समय सजा था। यह तख्त बादशाह के बड़े पुत्र शाहज़ादा दारा के लिए था—जिनके अभी वारिस होने की घोषणा बादशाह कुछ दिन प्रथम कर चुके थे, और जिसे अकेले को ही केवल बादशाह के दरबार में बैठने का सम्मान प्राप्त था।

: ४ :

पादशाह सलामत

दरबार में हजारों आदमी आ चुके थे। फिर भी भीड़ बढ़ती ही आ रही थी। इतना होने पर भी सर्वत्र गजब का सन्नाटा था। सब व्यवस्था एक जादू की भाँति हो रही थी और सब लोग बादशाह सलामत के आने की प्रतीक्षा में चुपचाप खड़े थे।

एकाएक तमाम बाजे बड़े जोर से बज उठे। कटहरे के बाहर खड़े हाथियों ने महावतों का संकेत पाकर सूँड़ें उठा उठाकर बादशाह सलामत को सलाम करना प्रारम्भ किया। धीरे-धीरे बादशाह हवादान पर सवार होकर रंगमहल से निकलते दीख पड़े। तातारी युवतियाँ हवादान को उठा रही थीं। आगे-पीछे खोजे नंगी तलवार लिए चल रहे थे। उनके पीछे गुलाम-बांदे, छोकरियाँ, पानदान, पीकदान, तलवार और चौरी लिए आ रहे थे। नकीबों ने ललकार कर आवाज लगाई "अदब होशियार—निगाह बराबर" सब लोग जमीन पर दृष्टि किए झुककर तस्वीर की भाँति खड़े रहे। बादशाह तख्त पर आकर बैठ गए। बादशाह की पोशाक एक बहुत सुन्दर फूलदार रेशम की बनी थी और उस पर बहुत अच्छा जरी का काम किया हुआ था। सिर पर जरी का मन्दील था, जिस पर बड़े-बड़े बहुमूल्य हीरों का तुर्रा लगा था। उसमें एक पुखराज तो ऐसा था जिसकी जोड़ का पत्थर संसार में न था, वह सूर्य की भाँति चमक रहा था। उनके गले में बड़े-बड़े मोतियों का कण्ठा था जो पेट तक लटकता था।

बादशाह ने इस समय अपने सिर, गले, बाँह और कमर में जो रत्न धारण किए थे उनका मूल्य दो करोड़ रुपए था। पगड़ी के सरपेंच

में बहुत दाम के अलभ्य रत्न लगे हुए थे। इसमें ५ बड़ी-बड़ी चुन्नियाँ और चौबीस मोती थे। बीच वाली का ही वजन २१८ रत्ती और मूल्य २ लाख रुपए था। सरपेंच का मूल्य सब वस्तुओं के साथ १२ लाख रुपये प्रथम ही था, आज इस दरबार की खुशी में बादशाह ने इसमें चालीस हजार रुपये मूल्य का एक देदीप्यमान मुक्ता बढ़वाया था, यह मुख्य सरपेंच की सबसे बड़ी चुन्नी से कुछ छोटा था। इस दरबार के उपलक्ष्य में एक अलौकिक चुन्नी जो ४७ रत्ती वजन की थी और मूल्य में ११ लाख रुपये की थी—युवराज दारा ने बादशाह को नजर की थी और बादशाह उस सूर्य के समान देदीप्यमान चुन्नी को सरपेंच में लगाकर सिंहासन पर सुशोभित हुए थे। सम्राट के रत्नागार का सबसे बड़ा हीरा जिसका वजन ४१० रत्ती और मूल्य दो लाख रुपया था वह भी सरपेंच में लगा हुआ था। सम्राट के हाथ में जो तसबीह थी उसमें ५ चुन्नी और तीस मोती पिरोए हुए थे। प्रत्येक दो दानों के बीच में एक-एक याकूत था। तसबीह के सुमेरु का वजन ११ रत्ती और मूल्य ४० हजार रुपये था। समूची माला का मूल्य बीस लाख रुपये था।

बादशाह का चेहरा अत्यन्त गम्भीर और प्रभावशाली था। बादशाह की आयु सड़सठ वर्ष की थी। उनके सिर और दाढ़ी के सब बाल सफेद हो गए थे किन्तु चेहरा सुर्ख और दृष्टि तेज थी। सबसे पहिले शाहजादा दारा ने सहमते-सहमते सामने आ, जंगले के पास खड़े होकर झुककर आदाब बजाया। फिर रुपहले कटहरे से कुछ कदम आगे बढ़कर सुनहरे जंगले के पास पहुँचकर तीन बार सलाम किया, और पीछे हटकर अपनी जगह पर बैठ गया।

एकाएक दरबार के बाहर बहुत-सा शोर हुआ। कदम बढ़ाते बहुत से गुर्जबरदारों ने आगे बढ़कर रास्ता किया। नकीब ने हाथ ऊँचा करके आवाज लगाई और एक तेज वृद्ध बहुमूल्य रेशमी वस्त्र पहने धीरे-

धीरे दरबार में आगे को बढ़ा। यह आदमी ठिगना-पतला और फुर्तीला था। उसका रङ्ग गोरा, नाक उभरी हुई और माथा चौड़ा था। वह एक बहुमूल्य हीरों का सरपेंच पगड़ी में लगाए था। उसके गले में भी हीरों का एक अमूल्य कण्ठा था। उसका कमरबन्द कीमती रत्नों से जड़ा था। उसके दरबार में आते ही हलचल मच गई। प्रत्येक व्यक्ति उस प्रभावशाली वृद्ध पुरुष को कौतुक और आश्चर्य से देखने लगा। हजारों दृष्टि उसपर केन्द्रित हो गईं।

असल में यही वह व्यक्ति था जिसके स्वागत के लिए आज के दरबार की धूमधाम की गई थी। इस आदमी का नाम मीरजुमला था और यह गोलकुण्डा के बादशाह का प्रधान वज़ीर था। इसी के लिए बाज़ार, शहर, किला और दरबार ठीक उसी भाँति सजाए गए थे जैसे किसी बादशाह के लिए सजाए जाते हैं। मीरजुमला के पीछे कई शाही अमीर थे जो बादशाह के हुक्म से उसके स्वागत के लिए भेजे गए थे। मीरजुमला पहले चौखटे के निकट, बादशाह से कोई पचास फुट के अन्तर पर आकर खड़ा हो गया। फिर उसने तीन बार ज़मीन तक झुककर बादशाह को आदाबअर्ज़ किया। बादशाह ने नज़र उठाकर मीरजुमला की ओर देखा और मुस्कुराया। मीरजुमला आगे बढ़ा और सुनहरी कटहरे के पास जाकर उसने फिर तीन बार झुककर बादशाह को सलाम किया। अन्त में झुककर तख्त को चूम लिया। फिर उसने साढ़े बारह लाख रुपये की अशर्फ़ियाँ, कुछ अच्छे मोती और १ लाल बादशाह को नज़र किया। जिसका मूल्य १ लाख रुपया था। इसके सिवा सोलह चुने हुए अच्छी नस्ल के अरबी घोड़े, ६ जड़ाऊ तलवारें और एक हीरों का हार बादशाह की सेवा में पेश किया। साथ ही बहुत से थाल जो फलों और मेवों से भरपूर थे, नज़र किए। इसके बाद वह दस कदम पीछे हटकर रुपहले कटहरे के भीतर वज़ीरों की बगल में खड़ा हो गया।

तमाम दरबार में सन्नाटा छाया था। बादशाह ने धीमे स्वर से कहा—"अमीर मीरजुमला, तुम्हारी बहादुरी, वफादारी और लियाकत, जो तुमने बीदर के किले को फतह करने में प्रगट की है, को देखकर हम तुम्हारे निहायत मशकूर व ममनून हैं, और इस खैरख्वाही और खिदमत के सिले में हम तुम्हें वजीरे आज़म और मुअज्जम खाँ का खिताब अता फरमाते हैं।"

मीरजुमला कुछ कदम फिर आगे बढ़ा और फिर तीन बार बादशाह को सलाम करके बोला—"जहाँपनाह की कद्रदानी और मेहरे इनायत का यह खादिम तहेदिल से शुक्रिया अदा करता है। और अपनी दिली आर्जू अर्ज करता है कि हुजूर सलामत ताजीस्त इस गुलाम को खिदमतगार ही पायेंगे।"

बादशाह कुछ देर चुपचाप मुस्कुराते रहे। फिर उन्होंने कहा—"बेशक, हमें बड़ी उम्मीद है। और हमारी मन्शा है कि तुम्हारे जेरे कमान एक बड़ी फौज शाहे फारस पर भेजें। हमने उस बादशाह से कन्धार छीननेका, मुद्दत हुई करार किया था और अब वह वक्त आया है कि हम तुम्हें इस मुहिम पर भेजें। इसके लिए उम्दा शाही तोपखाना और चुनींदा रिसाला हमने रवाना कर दिया है।"

मीरजुमला क्षण भर चुपचाप सिर नवाए खड़ा रहा। फिर उसने धीरे से अपने वस्त्रों में से एक तेजस्वी हीरा निकाला—जो नारियल के समान था। वह बिना तराशा हुआ जवाहर था। उसके प्रकाश से दरबार जगमगा उठा। और सब दरबारी उस अद्भुत रत्न को आश्चर्य और कौतुक की नजर से देखने लगे। मीरजुमला ने अदब से आगे बढ़कर दोनों हाथों में वह रत्न उठाकर बादशाह की सेवा में पेश करके कहा—"जहाँपनाह, जिस तरह हुजूर तमाम दुनिया के बादशाहों में सबसे बड़े हैं, उसी तरह यह जवाहर भी तमाम दुनिया के जवाहरात का सरताज है। इसका वज़न १६० कैरट है और ऐसे जवाहरात हुजूर ही जैसे शहनशाहों की सेवा में रहने लायक है। कन्धार की राजधानी

में अगर इस किस्म के जवाहरात पैदा होते हों तो हुजूर जरूर ही वहाँ तशरीफ़ ले जाएँ या किसी मर-मिटने वाले खादिम को भेजने की तकलीफ़ गवारा करें। लेकिन इस गुलाम की तो ख्वाहिश यह है कि हुजूर उन मुल्कों को फतह करने का इरादा फरमाएँ, जहाँ ऐसे-ऐसे बेश कीमती जवाहर सचमुच पैदा होते हैं, गोलकुण्डा, बीजापुर, कर्नाटक, सीलोन इस किस्म के मुल्क हैं।'

यह कहकर उसने एक बार अपना हाथ ऊपर को उठाया—जिसमें पैसे ही बड़े-बड़े हीरों के भुजबंद बँधे थे। फिर उसने भेदभरी नजर से बादशाह की ओर देखकर जरा धीमे स्वर में कहा—'आलमपनाह, बेअदबी माफ हो, कन्धार के कंकर पत्थरों की बनिस्बत, जहाँ चढ़ाई करने का जहाँपनाह कस्द कर चुके हैं, गोलकुण्डा के राज्य पर, जिसकी खानों में ऐसे-ऐसे अनगिनत जवाहर भरे पड़े हैं कब्जा कर लेना ज्यादा मुफ़ीद है। (धीरे से) जहाँपनाह, गुलाम तो यह भी कहने की जुर्रत करता है कि हुजूर को उस वक्त तक गोलकुण्डा के मुखालिफ़ फौजकशी करनी चाहिए, जब तक कि कन्याकुमारी तक का मुल्क तख्ते मुगलिया के कब्जे में न आ जाय।' यह कहकर मीरजुमला ने वह अलौकिक हीरा बादशाह को नजर कर दिया।

मीरजुमला की प्रगल्भ बातें सुन कर बादशाह बड़ी देर तक उस हीरे को देखते रहे। कुछ ठहर कर उन्होंने वह हीरा मीरजुमला को देते हुए कहा—'अमीर मीरजुमला, यह लासानी जवाहर अमानतन अपने पास रखो और किसी उमदा कारीगर से कटवा लो, तुम्हारी बातें काबिले गौर हैं और उन पर गौर किया जायगा। फ़िलहाल तुम्हें हुक्म होता है कि शाही महल के सामने जो वजीर सादुल्ला खाँ का महल है उसमें मुकीम हो।'

मीरजुमला ने प्रथम बादशाह को और फिर दारा को तीन बार सलाम किया—और पीछे हट कर अपनी जगह पर खड़ा हो गया।

बाजे बजने लगे और बादशाह तख्त से उठे। नकीबों ने आवाज बुलन्द की। तमाम दरबारी जमीन तक झुक गए। धीरे-धीरे बादशाह सलामत और दारा दोनों महल में चले गए।

सब अमीर उमरा तितर-बितर हो गए। आम का दरबार बर-खास्त हुआ।

५ :

अमीर मीरजुमला

पिछले परिच्छेदों में जिस महत्त्वपूर्ण घटना का वर्णन किया गया है—उससे २६ वर्ष पहिले सन् १६१० के बैसाख महीने में एक ईरानी घोड़ों का सौदागर गोलकुण्डा में कुछ अच्छी नसल के घोड़े बादशाह को बेचने के लिए लाया था, उसी के साथ एक ईरानी नवयुवक नौकर था जो बड़ा चतुर, फुर्तीला और अच्छा घुड़सवार था। उसका नाम मुहम्मद सैयद था। वह फारिस्तान के इलाके का निवासी था और इसका बाप इस्फहान में तेल का कारोबार करता था। वह अपनी जन्मभूमि को छोड़ कर दक्षिण भारत के सुलतानों के दरबार में भाग्यपरीक्षा के लिए चला आया था। वहाँ की अच्छी जलवायु और धन कमाने की महत्त्वाकांक्षा ने उसे गोलकुण्डा ही में रख लिया। कुछ दिन तो वह मुंशी बनकर गुजारा करता रहा। परन्तु जल्द ही वह उस नगर का एक प्रतिष्ठित व्यापारी हो गया। अपनी मिलनसारी और उदारता से उसने अपने अनेक मित्र बना लिए। उच्च राजकर्मचारियों से साँठ-गाँठ करके इसने कई जहाज खरीदे। भाग्य ने उसका साथ दिया, वे जहाज समुद्र में सफलतापूर्वक यात्रा करते रहे और उसके पास बहुत-सा धन इकट्ठा हो गया। वह धार्मिक प्रवृत्ति का भी आदमी था और बुद्धिमान भी। अपनी उद्योगशीलता, व्यापार, चातुर्य और

जन्मजात तेजस्वी शक्ति के कारण मीरजुमला को अपने प्रत्येक काम में निश्चित सफलता मिलती गई। शीघ्र ही राजदरबार में उसकी पहुँच हो गई और वह देखते-ही-देखते शाह गोलकुण्डा अब्दुल्ला कुतबशाह की नाक का बाल बन गया। उसके मित्रों ने उसे बादशाह के सामने बहुत बढ़ा-चढ़ा कर उपस्थित किया। अवसर पाकर उसने कई बढ़िया हाथी तथा योरोप और चीन के बने नायाब वस्त्रों के बहुमूल्य थान बादशाह को नजर किए। इस प्रकार उसकी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई, और उसे गोलकुण्डा का प्रधान मन्त्री बना दिया गया, जिससे उसे अधिक आमदनी होने लगी।

उसने अपने कामों को खूब मन लगा कर किया और बादशाह का उस पर बहुत विश्वास बढ़ गया। राज्य-शासन और युद्ध-क्षेत्र दोनों ही में अपूर्व योग्यता के कारण वह गोलकुण्डा का वास्तविक शासक बन गया। अन्त में बादशाह ने उसे कर्नाटक का गवर्नर बनाकर भेज दिया। वहाँ जाकर उसने अपनी खूब प्रतिष्ठा बढ़ाई और वह गोआ के पोर्चुगीज गवर्नर डामफिलिप्स मस्करेनिया का गहरा दोस्त बन गया। दोनों बहुधा एक दूसरे को मूल्यवान तोहफे भेजते रहते थे। गोआ के गवर्नर की भेंट में चीन और योरोप की अद्‌भुत चीजें हुआ करती थीं। इनके बदले यह कर्नाटक की खानों से निकले मूल्यवान हीरे और जवाहरात उसकी भेंट करता था। कर्नाटक का हाकिम होने के बाद उसने इस सूबे के बहुत से हिन्दू मन्दिर और खजानों को लूट कर प्रचुर धन संग्रह कर लिया था फिर भाग्य और उद्योग की खूबी से उसे कई हीरे की भी खानें भी मिल गई थीं।

कर्नाटक के गवनर होने के बाद उसने शाह गोलकुण्डा की फौज के अलावा एक अपनी खास फौज भरती कर ली थी, जिसमें उत्तम श्रेणी का तोपखाना पोर्चुगीज तोपचियों और अफसरों के हाथ में था, जिसके बराबर अच्छा निशानेबाज उन दिनों भारत भर में नहीं था।

उसने बहुत-सी तोपें ढलवाईं और अपनी सेना को सुनियन्त्रित किया तथा कड़पा ज़िले पर अधिकार कर लिया। साथ ही गंडीकोटा का दुर्गम दुर्ग भी जीत लिया। उसके सेनापति बढ़ कर बढ़ते हुए कर्नाटक के उत्तर में तिरुपति और चन्द्रगिरि तक बढ़ते चले गए। उन्होंने धर्मोदेव खजाने का पता लगाया और लूट लिया—इन विजयों से उसके पास प्रचुर सम्पत्ति एकत्र हो गई और उसने अपनी कर्नाटक की जागीर को एक स्वतन्त्र राज्य में परिणत कर लिया, और अपने स्वामी से पूर्णतया स्वतन्त्र होकर वस्तुतः कर्नाटक का बादशाह बन बैठा।

इन सबसे ऊपर एक बात यह थी कि शाह गोलकुण्डा की एक बेगम से इसकी आशनाई हो गई थी और वह सुन्दरी इस पर जान माल वार चुकी थी।

धीरे-धीरे शाह गोलकुण्डा को ये सब बातें मालूम होने लगीं। उसकी इस बढ़ती के कारण उसके बहुत से दुश्मन दरबार में उत्पन्न हो गए थे। उन सबने भी बादशाह के कान भरे। अपनी बेगम का इससे गुप्त प्रेम भी बादशाह पर प्रकट हो गया, फलतः वह इसका जानी दुश्मन हो गया। परन्तु तब तक इसकी ताकतें बहुत बढ़ गईं थीं। शाह उससे भय खाने लगा था। फिर भी वह उसे नष्ट कर देने की चिन्ता में लगा ही रहता था। इसी बीच एक और वारदात घटना हो गई। मीरजुमला का पुत्र मुहम्मद अमीन कई वर्षों से मीरजुमला का प्रतिनिधि बनकर राज-शासन का काम करता था—वह खुलेआम दरबार में भी सुलतान का बहुत कम अदब करता था। एक दिन वह खूब शराब पीकर नशे में लड़खड़ाता हुआ दरबार में आया और खुद सुलतान की गद्दी पर जा लेटा और कै करके गद्दी को खराब कर दिया। इस बात से शाह गोलकुण्डा बहुत ही गुस्सा हो गया।

अन्ततः उसने मीरजुमला को दरबार में बुला भेजा—और भरे
रबार में उसे बहुत-से अपशब्द कहे, और उसे कड़ा दण्ड देने की
मकी दी। उस समय अवसर न समझ वह चिकनी-चुपड़ी बातें
नाकर वहाँ से चला आया। परन्तु उसे अपनी प्रेमिका बेगम तथा
 मुहम्मद अमीन खाँ और अन्य मित्रों से पता लग गया कि बादशाह
सकी जान का गाहक हो रहा है और उसे तुरन्त वहाँ से भाग जाना
ाहिए। इसलिए वह रातों-रात वहाँ से भाग गया। इस पर शाह ने
हम्मद अमीन और उसके सब बाल-बच्चों को कैद कर लिया। इस
 मीरजुमला ने गोलकुण्डा राज्य को विध्वंस करने और तख्त को
लट देने की ठान ली।

उन दिनों शाहजादा औरंगजेब औरंगाबाद में रहता था, जो वहाँ
 १६ दिन का रास्ता था। औरंगजेब की आयु उस समय केवल
८ वर्ष की थी। वह दक्षिण का हाकिम था। मीरजुमला ने औरंगजेब
ो एक खत लिखा—खत का मजमून इस प्रकार था—

ल्ले आलम,

मैंने गोलकुण्डा की वह बड़ी बड़ी खिदमतें की हैं कि जिनको
माम जमाना जानता है और जिनके लिए उसे मेरा बहुत ही ममनून
ना चाहिए। मगर इतने पर भी वह मेरे खान्दान की बर्बादी की
क्र में है। इसलिए मैं आपकी पनाह लेना और आपके हुजूर में
ाजिर होना चाहता हूँ और इस दरख्वास्त की कबूलियत के शुक्राने
, जिसकी पिजीराई की आपकी जानिब से कामिल उम्मीद है, एक
नुसखा पेश करता हूँ जिसके जरिये से आप बआसानी बादशाह
कुण्डा को गिरफ्तार करके उसके मुल्क पर कब्जा कर सकते हैं। आप
रे वादे की सच्चाई पर एतबार और भरोसा फरमाएँ। ऐसा अन्दाज
ह मुहिम न तो कुछ मुश्किल ही होगी न कुछ खतरनाक ही। यानी
प्राप ५ हजार चीदा सवारों के साथ बहुत जल्द बिला तवक्कुफ कूच

करते हुए गोलकुण्डा की तरफ से आवें, जिसमें आपको सिर्फ सोल
दिन लगेंगे और यह मशहूर कर दें कि शाहजहाँ का वज़ीर शाह
गोलकुण्डा से बाज ज़रूरी मुआमिलात में गुफ्तगू करने को भागनग
(भागनगर अब हैदराबाद दकन है।) आ रहा है और यह फौज
उसी की अरदली में है। चूँकि यह वज़ीर जिसकी मार्फत हमेशा अमू
की इत्तला बादशाह को हुआ करती है, मेरा करीबी रिश्तेदार है औ
उस पर मुझे कामिल यकीन है, इसलिए मैं वादा करता हूँ कि एक ऐस
हुक्म जारी हो जायगा कि जिससे आप बिला रोको-टोक भागनग
के दरवाजे तक पहुँच जायेंगे। और जब शाह गोलकुण्डा फर्मान
इस्तकबाल के लिए जो वज़ीर के पास हुआ करते हैं—आवे, तो आ
उसे बआसानी पकड़ कर जैसा मुनासिब समझें पेश आ सकते हैं
अलावा बाकी इस मुहिम का कुल खर्च मैं दूँगा और इसके इस्तता
तक ५० हजार रुपये रोज देता रहूँगा।

—मुहम्मद मीरजुमला"

गोलकुण्डा बहुत ही उपजाऊ और सिंचाई के साधनों से पूर
तरह सुसज्जित देश था। यहाँ की जनसंख्या बहुत अधिक थी औ
निवासी परिश्रमी थे। इस राज्य की राजधानी वही भागनगर उ
समय—केवल एशिया भर ही में नहीं—सारे संसार में हीरों
व्यापार की प्रधान मण्डी थी। देश-विदेश के व्यापारी यहाँ सदैव
रहते थे। बंगाल की खाड़ी में मछलीपट्टम का बन्दरगाह इस राज
का प्रधान शहर और महत्वपूर्ण बन्दरगाह था। यहाँ के जंगलों
हाथियों के बड़े-बड़े झुण्ड मिलते थे। जिससे राज्य की सम्पत्ति में वृ
होती थी। तम्बाकू और ताड़ यहाँ बहुत अधिक मात्रा में होते थे
जिससे तम्बाकू और ताड़ी पर लगाए करों से ही राज्य को एक अच्छी
खासी आमदनी हो जाती थी।

पूर्व की सन्धियों के आधार पर गोलकुण्डा राज्य प्रतिवर्ष १ लाख हून मुगल दरबार को वार्षिक कर देता था। परन्तु वर्षों से यह कर उस पर बकाया ही रहता था। प्रत्येक तकाजे के उत्तर के जवाब में वह मुगल सूबेदार को कुछ कारण बताकर अधिक समय की मोहलत माँग लेता था।

मुहम्मद अमीन की और मीरजुमला के परिवार की गिरफ्तारी की खबर बादशाह तक पहुँची। मीरजुमला औरंगजेब से सम्बन्ध भी स्थापित कर रहा है। यह खबर भी दारा के भेदियों ने वहाँ पहुँचा दी। दारा नहीं चाहता था कि मीरजुमला जैसा शक्तिशाली आदमी औरंगजेब से मिल जाय। उधर वजीर सादुल्ला की आकस्मिक मृत्यु से मुगल साम्राज्य को एक ऐसे ही विलक्षण पुरुष को वजीरे आज़म बनाने के लिए आवश्यकता थी जैसा मीरजुमला था। अतः बादशाह के फर्मान शीघ्र ही शाह गोलकुण्डा के पास पहुँच गए कि अमीर मीरजुमला और मुहम्मद अमीन को शाही दरबार में भेज दे। तथा उसकी सम्पत्ति आदि पर भी कोई प्रतिबन्ध न लगाए। साथ ही औरंगजेब को भी एक शाही खरीता मिल गया कि यदि शाह गोलकुण्डा शाही हुक्म में देरी करे तो उसपर आक्रमण कर देना।

अब अमीर मीरजुमला के इस पत्र को पढ़ते ही औरंगजेब की बाछें खिल गईं। वह अत्यन्त महत्त्वाकांक्षी आदमी था, और ऐसी ही किसी घटना से लाभ उठाना चाहता था। वह झटपट सब तैयारियाँ करके इस होशियारी से चला कि किसी को तनिक भी शक नहीं हुआ। अपने बड़े शाहजादे को सैन्य सहित नान्देड़ के पास गोलकुण्डा की सीमा में प्रवेश कराकर उसे आदेश दे दिया कि "कुतुबुल मुल्क बहुत ही बुजदिल है। मुमकिन है वह सामना न करे, पर तुम लोग सीधा धावा बोल दो और उसके जिस्म को उसके सर के भार से हल्का कर दो।"

औरंगजेब सही-सलामत भागनगर के फाटक तक पहुँच गया, और बादशाह उसकी अगवानी के लिए वहाँ तक आ भी गया। वह बिल्कुल निकट था कि कार्बीनाना गुलाम—जो इसी काम के लिए मुस्तैद कर लिए गए थे—बादशाह को पकड़ लेते, कि एक अमीर के मन में पश्चात्ताप हुआ और उसने कहा—'जहाँपनाह, मालिए यह औरंगजेब है, शहज़ादी नहीं।'

बादशाह घबरा कर एकाएक वहाँ से भागा और जो घोड़ा हाथ लगा—सवार हो, तीन मील के फासले पर गोलकुण्डा के किले की ओर तेज़ी से निकल गया।

शिकार फँसकर निकल जाने पर भी औरंगजेब निराश नहीं हुआ। उसने तत्काल हमला बोलकर भागनगर के महलों को लूट लिया और समस्त बहुमूल्य वस्तुएँ अपने अधिकार में कर लीं। फिर बादशाह को कैद करने की नीयत से गोलकुण्डे के किले की ओर उसने रुख किया। इसके पास तोपें नहीं थीं, और वह गोलकुण्डा के किले पर उनके बिना हमला नहीं कर सकता था। पर उसने किले के चारों ओर डेरा डाल कर उसकी रसद-पानी सब बन्द कर दी, किले में आवश्यक सामान काफी न था—वह दो महीने घेरा डाले पड़ा रहा। और निकट था कि किलेवाले आत्मसमर्पण कर देते पर उसी समय बादशाह शाहजहाँ का आज्ञापत्र मिला कि तुरन्त वह अपने सूबे को लौट जाय।

औरंगजेब बहुत खीझा। वह जान गया था कि यह सब कारस्तानी दारा और जहाँआरा बेगम की है, जो हमेशा उसके विरुद्ध बादशाह को भड़काते रहते हैं और बादशाह को अपनी मुट्ठी में रखते हैं। परन्तु उसने बादशाह की आज्ञा का उल्लंघन करना ठीक नहीं समझा, और किले का मुहासरा छोड़ देने को तैयार हो गया, परन्तु उसने शाह से सेना की सब क्षतिपूर्ति के एक करोड़ रुपये वसूल किए तथा रामगिरि का इलाका भी ले लिया। और शाह की लड़की से अपने बेटे सुलतान

मुहम्मद का विवाह करके प्रतिज्ञा करा ली कि उसी का लड़का राज्य का उत्तराधिकारी रहेगा। इन सबके साथ उसने अपने दोस्त मीरजुमला के कुटुम्ब और धन-दौलत को भी राज्य से बाहर जाने की आज्ञा ली और वह लौटा।

गोलकुण्डा के पड़ाव में जब अमीर मीरजुमला औरंगजेब की सेना में उपस्थित हुआ तो उसका ठाट-बाट बादशाहों से कम न था। उसके साथ ६ हजार घुड़सवार, १५ हजार पैदल, १५० हाथी और कई उम्दा तोपखाने थे। औरंगजेब ने उसकी खूब चापलूसी की और कहा—कि बाबाजी, शाहजहाँ दारा के बाप हैं परन्तु मुझे आपसे बढ़कर मेहरबान बाप मिलना मुश्किल है। मेरी उम्मीदें आपसे वाबस्ता हैं, और मैं आप ही को अपना सरपरस्त समझता हूँ, और अर्ज करता हूँ कि मुझ पर और मेरे बाल-बच्चों पर रहम करें। मैं वादा करता हूँ कि तख्त नशीन होने पर मैं आपको दरबार में सबसे बड़ा और आपके लड़के मुहम्मद अमीन खाँ को आपसे दूसरा दर्जा दूँगा। और जो हुकूक शाहजादों के हैं उसे वे दूँगा। बस, आप दारा से कोई ताल्लुक न रखें। इस प्रकार कौल-करार करके मीरजुमला शाही दरबार में दिल्ली को रवाना हुआ। बादशाह उसे वजीरे आजम बनाना चाहता था और दारा उसे औरंगजेब से दूर कन्धार की दुर्गम भूमि पर दफेला देना चाहता था। ऐसी ही उन दिनों मुगलों की राजनीति थी।

परन्तु अमीर मीरजुमला को औरंगजेब पसन्द था। दोनों शीघ्र ही दिली दोस्त बन गए। यद्यपि दोनों बहुत कम साथ-साथ रहे फिर भी दोनों ने बड़े-बड़े साहस के काम किए। दोनों ने दौलताबाद में मिल कर भावी महत्त्वाकांक्षाओं के मनसूबे बाँधे। मुगल इतिहास में इन दोनों आदमियों की मित्रता एक निराली वस्तु है। यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि औरंगजेब को जो कुछ बड़प्पन और प्रसिद्धि मिली, वह मीरजुमला ही की बदौलत मिली।

बादशाह ने उसे बहुत आदरमान से दिल्ली बुलाया और रास्ते में सबको हुक्म जारी कर दिए कि जहाँ जहाँ होकर वह गुज़रे, उसकी पूरी आव भगत की जाय।

दिल्ली पहुँचने पर भी उसकी पूरी आव भगत हुई—पर दारा की चाल पूरी न हुई। उसने बादशाह को आते ही प्रभावित कर लिया और बादशाह का मन कन्धार की चढ़ाई से हटा दिया।

६

वली-अहद

बादशाह का सबसे बड़ा बेटा दाराशिकोह था। इस समय दारा की आयु ४२ वर्ष की थी। उसे शाही खजाने से एक लाख रुपया मासिक वेतन मिलता था। इसके सिवा उसे २ करोड़ रुपया वार्षिक आय की निज् जागीर भी थी। उसका महल पृथक् था और उसमें सैकड़ों दासियाँ, बाँदियाँ, मुग़लानियाँ, कंचनियाँ भरी पड़ी थीं। उस महल में वह बादशाह की भाँति ठाठ-बाट से रहता था।

देखने में वह युवक रुआबदार, सुन्दर और छबीला जवान था। वह दिल का साफ, स्पष्टवक्ता, मृदुभाषी और उदार था। परन्तु उसमें एक दोष यह था कि वह घमंडी और ज़िद्दी था। वह सदा यही समझता था कि उसे किसी की सलाह की आवश्यकता नहीं। सलाहकारों और मन्त्रियों को वह तुच्छ दृष्टि से देखता था, बहुधा उनकी हँसी उड़ाया करता था। तिरस्कार भी कर बैठता था। इस कारण उसके निकटस्थ और अति विश्वासी व्यक्ति भी उसे सम्मति देते भय खाते थे।

फिर, यह आदमी इतनी ऊँची तबियत का था कि उसके संकल्प से नियमित होना अति साधारण बात थी। कदाचित् ही वह कोई बात गुप्त रख सकता था। उसे अपने भाग्य पर बड़ा भरोसा था, वह

सदा यही सोचा करता था कि उसका भाग्य सदा प्रबल रहा है और संसार की कोई आपत्ति उस पर आ ही नहीं सकती। उसे यह भी विश्वास था कि प्रत्येक व्यक्ति उसे प्रेम और आदर की दृष्टि से देखता है और वह उसका यथार्थ पात्र है। वह मान-रक्त और आनन्द में मस्त रहने वाला जीव था।

वास्तव में वह बहुत विनोदी स्वभाव का आदमी था। बहुधा वह विनोद में मर्यादा से आगे बढ़ जाता था। पेशेवर मसखरे सदा उसे घेरे रहते, और एक-न-एक चुटकुला छिड़ता ही रहता। ये लोग जो मुसाहिब कहाते थे—बहुत भड़कीले और बहुमूल्य वस्त्र पहन कर प्रति दिन दरबार में आते जो प्रायः कमीने, खुशामदी और बेवकूफ होते थे और प्रायः दारा के सम्मुख मूर्खतापूर्ण हास्य किया करते थे। जिसे देखकर वह महान् मुगल-साम्राज्य का भावी-वारिस कुत्तों की भाँति मुँह बनाकर हँस दिया करता था।

बहुधा इनका प्रमुख विनोद यह होता था कि जब कोई सिपाही या दूसरा व्यक्ति नौकरी की आशा से शाहजादा के दरबार में आता तो उसे फुसला कर ये लोग इस बात पर राजी कर लेते कि वह हाथ-पैरों के बल पशुओं की भाँति शाहजादा के सामने चल कर आए और जब वह बेचारा आपत्ति का मारा इनके चक्कर में आकर ऐसा करता तो शाहजादा खूब हँसता था।

बहुधा ये मसखरे लोग किसी अपरिचित सिपाही या शहर के किसी आदमी को खूब बनाते, और एक उनमें से कहता कि मैं बड़ा भारी हकीम हूँ। तुम्हें बड़ा भारी मर्ज हो गया है, इलाज न कराओगे तो मर जाओगे। वह बेचारा घबरा उठता—तब वे मसखरे उसे सलाह देते—बेहतर है कि तुम्हें भभारा दिया जाय और फिर वह बेवकूफ एक बड़े बरतन में मय हथियार के बन्द कर दिया जाता। जब वह बर्तन शाहजादा के सामने लाया जाता और ढकना उठाकने पर

उनमें से एक हथियारबन्द सिपाही नज़र आता तो शाहज़ादा उसे देखकर बहुत हँसता और वह सिपाही घबराकर भाग जाता।

साम्राज्य में कुछ राज्य के सच्चे शुभ-चिन्तक विद्वान् और शिष्ट पुरुष भी थे जो शहनशाहे-हिन्द के वली-अहद के ऐसे छिछोरे चरित्र को देखकर उससे कुढ़े रहते थे।

परन्तु इतना होने पर भी वह अच्छा विद्वान् था। अरबी, फ़ारसी की तो उसने उत्तम शिक्षा पाई ही थी, हिन्दी, संस्कृत का भी वह अच्छा पण्डित था। उसने संस्कृत के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद कराया था। बहुधा वह विद्वानों के साथ धर्म-सम्बन्धी बहस भी किया करता था। परन्तु सब लोग यह जानते थे कि वह न हिन्दू है न मुसलमान। उसका कोई दीन ही न था। वह बहुधा मुल्लाओं और ईसाई पादरियों से शास्त्रार्थ कराया करता और इसमें उसे बड़ा मज़ा आता था।

वह फ़िरंगियों का बहुत शौक़ीन था। उन्हें उसने बहुत से आसरे दे रखे थे। वह प्रायः उनकी बातें सुना करता, उनके देश के हालात पूछा करता, और उन्हें दिल खोलकर शराब पिलाता था। दारा के दरबार के तीन पादरी बहुत प्रसिद्ध थे—जिनमें एक फ्लाम्बोलो और दूसरा पुर्तगीज़ था, इनसे दारा बहुत प्रेम करता था और बहुधा इनके साथ शराब पीता—और जब ये विदा होते तो इन्हें पचास रुपए और एक-एक दुशाला भेंट देता था।

दारा में एक दोष यह भी था कि वह बहुत जल्द क्रुद्ध हो जाता था और कभी-कभी बहुत नीच और अयोग्य काम कर बैठता था।

महाबत ख़ाँ एक बूढ़ा और महान् सेनापति था। वह एक प्रतिष्ठित क्षत्रिय कुल का व्यक्ति था जो मुसलमान हो गया था। उसके एक सेवक ने किसी कारण वश दारा के एक नौकर को मार डाला। इस पर दारा ने क्रोध में अंधा हो कर हुक्म दे दिया कि महाबत ख़ाँ को

बाँध कर घसीटते हुए उसके हुजूर में ले आया जाय। परन्तु वह ऐसी मैल न था। महाबत खाँ मुक़ाबिला करने को तैयार हो गया। बादशाह ने जब यह सुना तो उसने शाहज़ादे को बुला कर समझा-बुझा कर ठण्डा किया। परन्तु महाबत खाँ ने यह सिला मन में रखा और समय पर *वैर लिया।*

औरंगज़ेब के पक्षपाती होने के सन्देह पर दारा ने सल्तनत के प्रधान वज़ीर सादुल्ला खाँ को ज़हर दे कर मरवा डाला था। यह वज़ीर एशिया भर में बड़ा भारी विद्वान और राज्य का भारी शुभचिन्तक था। बादशाह और सारा दरबार उससे प्रेम करता था। आमेर के महाराज जयसिंह को बाईस हज़ार सवारों और डेढ़ लाख पैदलों के स्वामी थे, उन्हें उसने मौकूफ़ कर दिया था। जिसका बदला महाराज ने समय पर लिया।

इसी प्रकार के ऐसे ही कामों से दरबार के बहुत से योग्य वज़ीर उमरा उससे मन ही मन नाराज़ रहते थे। इतना होने पर भी अब तक वह बादशाह का बड़ा अदब करता था। वह उनकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करता और उनकी प्रतिष्ठा और शान के खिलाफ़ कोई काम नहीं करता था।

एक साधारण सिपाही को दारा ने तोपखाने का अफ़सर बना दिया था। इस सिपाही पर कृपा होने का कारण यह था कि एक बार एक बत्तख़ दारा के महल पर बैठ कर बोलने लगा, इस सिपाही ने उसे तीर का निशाना बना दिया। एक बार उसने अपने उमरावों और सेनापति से कहा कि इसकी बराबरी का बहादुर आदमी हमारी सल्तनत में दूसरा नहीं है। इस बात से सब लोग बड़े नाराज़ हुए तथा उन्होंने इसमें अपना अपमान समझा।

वह ज्योतिषियों का बड़ा *विश्वासी था।* उसके दरबार में अनेक ज्योतिषी थे, उनमें बहुत से अहमक थे। वह चिकनी-चुपड़ी बातों से

तथा पाखण्ड से उसे उल्लू बनाए रहते थे। बहुधा वे उल्टे-सीधे हिसाब लगाया करते और शाहजादे को अपने जाल में फँसाए रहते थे।

बादशाह ने कश्मीर-काबुल और लाहौर का इलाका दारा को जागीर में दे रखा था। जिसकी वार्षिक आय दो करोड़ रुपयों से भी अधिक थी। बादशाह ने इसे कुछ ऐसे भी अधिकार दे रखे थे जिन में कोई तत्त्व तो न था परन्तु वे बहुत सम्मान जनक समझे जाते थे। तथा मुगल-साम्राज्य में किसी दूसरे को प्राप्त न थे। जैसे हाथियों का लड़ाना, अपने सामने सोने-चाँदी के गुर्ज रखना, जो केवल बादशाह ही रख सकता था। इसके सिवा उसने शाही दरबार में उसे बैठने के लिए अपने तख्त के पास एक दूसरा तख्त रखवा दिया था। बादशाह ने अपने तमाम उमरा को हुक्म दिया हुआ था कि सुबह का सलाम पहिले दारा को देकर तब वे शाही हुजूर में जाएँ।

इन तमाम कारणों से दरबारे शाही में दारा की इज्जत बहुत बढ़ गई थी। इससे वह बहुधा उमरा के साथ घमंड और सख्ती से पेश आया करता था। और कभी-कभी वह अत्यन्त प्रतिष्ठित उमरा का भी अपमान करने में नहीं हिचकता था, जिनके एक-दो उदाहरण ऊपर दिए जा चुके हैं।

दारा की बड़ी बेगम से उनके दो बेटे थे—एक शाहजादा सुलेमान शिकोह और दूसरा सिपर शिकोह।

निस्सन्देह उनके आदर्श उनके दादा अकबर के समान ही उदार थे। हिन्दू और मुसलमानों में सांस्कृतिक समन्वय करने का वह पक्षपाती था। हिन्दू योगी लाल दास और मुस्लिम सूफी संत सरमद का वह शिष्य था। मुस्लिम फकीर मियाँ मीर को भी वह अपना धर्मगुरु मानता था। उसने अपने जीवन में इस्लाम के सिद्धान्तों की कभी अवहेलना नहीं की हाँ आदर सभी धर्मों के प्रति रखा। वास्तव में वह कट्टरपन्थी न था।

परन्तु उसकी सबसे भारी हानि का कारण उसके प्रति पिता का आवश्यकता से अधिक प्रेम था। उसे सदैव दरबार में रक्खा गया। केवल कन्धार के तीसरे अभियान को छोड़ कर उसने न तो कभी किसी युद्ध का संचालन किया, न कभी किसी प्रान्तीय शासन-व्यवस्था के लिए उसे कहीं भेजा गया। फलतः में उसे न तो राज्य करने का अनुभव था न युद्ध का। कठिनाई और खतरों से वह सदा दूर रहा। सेना के साथ भी उसका कभी संपर्क न रहा। इसके अतिरिक्त उसके एकछत्र प्रभाव और उसकी अतुल सम्पदा—उसमें शील-संयम—और दूरदर्शिता के बीज न उगा सकी। झूठे चापलूसों से घिरे रह कर मुगल साम्राज्य के उत्तराधिकारी होने की स्वाभाविक भावना ने उसे घमंडी और प्रमादी बना दिया। वह पण्डित अवश्य था, पर न नर-चरित्र को नहीं परख सकता था। कोई भी स्वाभिमानी और सुयोग्य व्यक्ति उस घमंडी और अविवेकी स्वामी से प्रसन्न न था। निस्सन्देह वह एक प्रेमी पति, प्यारा पुत्र और स्नेह पिता था—पर संकटापन्न प्रजा-पालक राजा नहीं। पुरखों से चली आती हुई शान्ति और सम्पदा *में उसके रक्त की उत्तेजना ठण्डी कर दी थी। कोई संगठन करने या* साहस करने का खतरा वह नहीं उठा सकता था। न वह परिश्रमी और बुद्धिमान ही था। विरोधित दृढ़ता तो उसमें थी ही नहीं, जो मृत्यु से विजय को छीन लाती है। न वह सेनापति था, न शासक। इस प्रकार युद्ध-कला, राजनीति, साहस, शौर्य और दूरदर्शिता तथा सावधानता से सर्वथा रहित इस सीधे-सादे नागरिक व्यक्ति का, प्रतापी मुगलतख्त के लिए खूली लड़ाई पर आमादा औरंगजेब जैसे सेनानायक और कूट-नीति के पण्डित से पाला पड़ा था।

७

जहाँआरा

बादशाह की बड़ी लड़की का नाम जहाँआरा था। परन्तु शाही हलकों में वह बड़ी बेगम के नाम से प्रसिद्ध थी। वह एक विदुषी, बुद्धिमती और रूपसी भी थी। वह बड़े प्रेमी स्वभाव की थी। साथ ही दयालु और उदार भी। बादशाह ने उसके जेबखर्च के लिए तीस लाख रुपए साल नियत किए थे तथा उसके पानदान के खर्च के लिए सूरत का इलाका दे रखा था, जिसकी आमदनी भी तीस लाख रुपए सालाना थी। इसके सिवा दारा और बादशाह अपनी-अपनी गर्ज के लिए उसे प्रेम भेंट या रिश्वत की तरह आप बहुधा बहुमूल्य भेंट देते रहते थे। बादशाह का उसके प्रति आकर्षण देख यह मशहूर हो गया था कि बादशाह का उससे अनुचित प्रेम है। उपर्युक्त कारणों से उसके पास धन-रत्न बहुत एकत्र हो गया था और वह खूब सज-धज कर ठाठ से रहती थी।

मुगलों के शाही खानदान की दो विशेषताएँ थीं। एक यह कि शाही खानदान की स्त्रियाँ पर्दे में रहती हुई भी राजनीति में पूरा भ लेती थी। दूसरे शाहजादियों की शादी नहीं हो सकती थी। य उनके गुप्त प्रेम के बहुत से मामले आए दिन प्रकट होते रहते थे पर बादशाह किसी को भी दामाद नहीं बनाना चाहता था। शाहजादि की शादी न हो यह नियम बादशाह अकबर ने बना दिया था। इन शाही शाहजादियों के गुप्त प्रेम के बड़े-बड़े झूठे-सच्चे किस्से लोगों की ज़बान पर चढ़ गए थे।

वह दारा की पक्षपातिनी थी और दारा ही को राज्य दिलाना चाहती थी। क्योंकि दारा ने इससे वादा किया था कि वह बादशाह

होने पर उसकी शादी मनचाहे दूल्हे से कर देगा। वह बादशाह को दारा पर कृपालु बनाए रखने में भी कुछ उठा न रखती थी। तथा सब अमीर उमरा को भी सन्तुष्ट रखती थी। उसने अपनी सारी चतुराई बादशाह को प्रसन्न रखने और उसकी सेवा करने में लगा दी थी। वह आँख मीच कर बादशाह की सब उचित-अनुचित इच्छाओं की पूर्ति करती थी। बादशाह उस पर ऐसा मिहरबान था कि लोग कहने लगे थे कि शाहजहाँ के शासन-काल में वही तमाम साम्राज्य पर शासन करती थी। इसीसे उसका नाम 'बड़ी बेगम' प्रसिद्ध हो गया था।

दारा चाहता था कि उसकी शादी सियादतखाकार नजाबतखाँ से हो जाय जो वलख के शाही खानदान से सम्बन्ध रखता था। वह पुरुष वीर और सुन्दर भी था। परन्तु बादशाह के साले शाइस्ता खाँ ने बादशाह के कान भर दिये थे कि यदि ऐसा किया जायगा तो उसे अवश्य ही शाहजादों की बराबरी का रुतबा देना पड़ेगा। इसके सिवा यह भी बात थी कि बादशाह शाहे बलख पर चढ़ाई करने के मंसूबे भी बाँध रहा था।

फिर भी शाहजादी जी-जान से बादशाह की सेवा करती रही और अपने चाहने वालों ही पर सन्तुष्ट रहती रही।

वह राज्य के बड़े-बड़े जिम्मेदारी के काम करती, पर शाम को नाच रङ्ग में मस्त हो जाती। वह अंगूरी शराब की बहुत ही शौकीन थी जो काबुल, फारिस और काश्मीर से मँगाई जाती थी। वह बहुधा अपने इन्तजाम में बढ़िया शराब बनवाती, जो अंगूरों में गुलाब और मेवाजात डालकर एवं बहुत-सी चीजें डालकर बनाई जाती थी। रात को वह कभी-कभी नशे में इतनी गप्प-गप्प हो जाती थी कि उसका खड़ी हो सकना भी सम्भव न होता और उसे प्रायः उठाकर बिस्तर पर डाला जाता था।

इस शाहजादी की ज्यादा इज्जत इसीलिए की जाती थी कि बादशाह से वह सब कुछ करा सकती थी और अमीर उमरा अपने अपने स्वार्थों के लिए उसे प्रसन्न रखना प्रत्येक मूल्य पर बहुत आवश्यक समझते थे। शाही मुहर इसी के पास रहती थी, और उसे महान् मुगल साम्राज्य में सब कुछ स्याह सफेद करने की शक्ति थी। यह एक बड़ी ही अनोखी बात थी कि पर्दे में रहने वाली एक महिला किस तरह उस काल में उस बड़े साम्राज्य का शासन-सूत्र चलाती थी जब कि यातायात की सुविधाएँ भी नहीं थीं।

: ८ :

शाही परिवार

बादशाह का दूसरा बेटा सुलतान शुजा दारा से अधिक विनयी और दृढ़ विचार वाला था। वह कूटनीति में भी कुशल था। इसने धन और विनय से अनेक प्रसिद्ध अमीरों और राजाओं को अपना मित्र बना लिया था। वह बड़ा बुद्धिमान था। परन्तु उसका सबसे बड़ा दुर्गुण यह था कि यह भारी विलासी, आरामतलब और पियक्कड़ था। जब वह नाच-रंग में मस्त होता तब उसका कोई भी दरबारी कितना ही जरूरी काम होने पर भी कुछ कहने का साहस नहीं कर सकता था। इस दोष के कारण उसकी प्रबन्ध-व्यवस्था खराब रहती थी। वह शिया धर्मी था। पर इस धर्म को भी उसने एक गूढ़ उद्देश्य से ग्रहण किया था। वह जानता था कि दरबार के बड़े बड़े ईरानी पदाधिकारी शिया हैं और उनसे बहुत काम निकल सकता है। वह इस समय बंगाल और उड़ीसा का सूबेदार था।

तीसरा शाहजादा औरंगजेब था। वह गौरवयुक्त एक असाधारण आदमी और दृढ़ विचार का युवक था। वह एक घुन्ना आदमी था और उसके मन की बात का पता लगाना टेढ़ी खीर थी। आदमी को

सुनना उसे आता था, वह उन्हीं लोगों को पास फटकने देता जो उसके काम के होते। वह उन्हें भरपूर इनाम देकर खुश रखता था। वह अपने भेद छिपाकर रखने में एक था। वह ईमानदारी और फकीरी का ढोंग रखता था।

बादशाह और दारा इससे बहुत भय खाते थे और इस बला को दूर ही रखना चाहते थे, इसी से बादशाह ने इसे दक्षिण भेज दिया था। उसका चित्त कुछ रोगी-सा था और वह हमेशा कुछ-न-कुछ करता ही रहता था। वह सिर्फ वहीं खर्च करता जहाँ अत्यन्त आवश्यकता होती। वह सदा इस बात में प्रयत्नशील रहता था कि दुनिया की नजर में वह त्यागी और धर्मात्मा एवं चतुर प्रतीत हो। बादशाह की दूसरी बेटी रोशन आरा इसी के पक्ष की थी। वह आगरे के रंगमहल में बैठी हुई शाही दरबार में उसी का हित साधन करने में संलग्न रहती थी। उसके द्वारा औरङ्गजेब को अपने विपक्षियों का राई-रत्ती हाल निरन्तर मिलता रहता था। वह भी अत्यन्त सुन्दरी, चतुर और वाकपटु में एक ही थी। दारा और बड़ी बहिन को वह घृणा की नजर से देखती थी। पर न तो इसका शाही दरबार में उतना रुतबा ही था न इतने अधिकार जितने कि जहाँआरा बेगम को थे। इसके सिवा बादशाह और बेगम दोनों ही इस पर सन्देह करते थे। परन्तु वह अपने भेद गुप्त रखने में खूब चौकस थी और निष्कंटक सब गुप्त हालात औरङ्गजेब को भेजती रहती थी।

शाहजादों का सबसे छोटा बेटा मुराद एक बाँका लड़ैया था परन्तु वह मूर्ख, विलासी और क्रोधी आदमी था। केवल अच्छे खाने-पीने, नाच-रंग, शिकार, हथियार चलाने में ही वह मस्त रहता था। तीर का निशाना लगाने में वह एक था। भाला और बर्छा फेंकने में अद्वितीय था। वह चारों भाइयों में सबसे बढ़कर शूरवीर था। अपनी ताकत का उसे बहुत ही घमण्ड था। लड़ाई की चर्चा उठाने पर वह

बड़ा बुरा होता था। अपनी तलवार और जवाँमर्दी का उसे बड़ा घमण्ड था। वह सब को तुच्छ समझता था। परन्तु सैन्यसंचालन की उसमें कुछ भी योग्यता न थी। चरित्र उसका बहुत ओछा था।

बादशाह शाहजहाँ ने उसकी अयोग्यता को समझ कर अलीनकी नामक एक चतुर और ईमानदार अफसर को उसका माल हाकिम तथा प्रधान सलाहकार बना कर भेजा था। परन्तु उसके खुशामदी दरबारी कृपापात्र शीघ्र ही अलीनकी के शत्रु बन गए। उन्होंने ऐसा एक चाल रचा कि जिससे इस निर्बुद्धि शाहजादे ने नशे की झोंक में क्रुद्ध होकर उसे भाले से मार डाला।

६

दिल्ली का लाल किला

किले के भीतर एक से बढ़कर एक शोभनीय लाल महल थे। उनकी पंक्तियों का चंचल प्रतिबिम्ब चन्द्रमा की स्निग्ध ज्योत्स्ना में यमुना के स्वच्छ जल में असाधारण शोभा विस्तार करता था। इन महलों में जो मुख्य वस्तु थी वह दीवाने आम की इमारत थी। जिस पर देखने वालों की सबसे पहिले दृष्टि पड़ती थी। इसके बाद ही दीवाने खास था, जिसमें बादशाह खास-खास दरबारियों से महत्वपूर्ण विषयों पर गुप्त मन्त्रणा करता था। इसके बाद एक-से-एक बढ़ कर गुम्बजों वाले महलों का ताँता बँधा चला था, ये सब बेगम महल कहाते थे। इनके भीतर सौन्दर्य की जो सुधा वर्षा होती थी, आनन्द का जो स्रोत बहता था, वैभव का जो अटूट भण्डार वहाँ एकत्र था—उसकी मानवीय मस्तिष्क कल्पना भी नहीं कर सकता।

इन सब संगीन इमारतों के साथ ज्वलित संगमरमर की बनी मोती मस्जिद चन्द्रमा की चाँदनी की मूर्ति की भाँति देदीप्यमान थी। इसके पार्श्व में ही उसका पूरक रूप सादा लाल शाही महल था। जिसमें

वह प्रतापी जगद्विख्यात सम्राट् निवास करता था। इस सम्राट् क
इसके इस वैभव को एक बार देख लेने पर फिर किसी को इस संस
में और कुछ देखने की इच्छा ही नहीं रह जाती थी। अथवा जगत
उसे और कुछ दर्शनीय ही न रह जाता था।

बेगम महल की बनावट ऊपर से संगमर्मर की थी। पर भी
उसकी छत पर सोने का निहायत मूल्यवान् कारीगरी का काम कि
गया था। खम्भों और दीवारों पर सच्चे जवाहरात की पच्चीकारी इत
भव्य और कलापूर्ण थी कि हम उसे उस युग की स्थापत्यकला का प
आदर्श नमूना कह सकते हैं। खास बेगम महल के बीचोंबीच प
खारी सी चित्रशाला थी और उससे सटा हुआ शाही नजरबाग
जिसमें देश देश के फूल फल, फुलवारी यत्न से संचित की गई थी
पर्दों पर जो क्रीड़ा-निकेतन बने थे, उन में चलता हुआ गुप्त प्रभा
रंगीन आभा प्रकट करता था; और जब बेगम महल के अनगिन
हजारा फानूसों में काफ़ूरी मामबत्तियाँ जल उठती थीं, उस समय व
इन्द्रभवन सहस्रों तारागणों से सुशोभित-सा जान पड़ता था। प्रा
में सुनहरी फव्वारों से गुलाब, केवड़ा और बेदमुश्क के जल की सद
धाराओं का अजस्र वेग सदा बहता ही रहता था। बेगम महल
प्रधान कक्ष की सजावट और भी निराली थी। वह पूर्णीय सौन्दर्य औ
वासना की सदेह मूर्ति थी। आराम और सजावट के एक से
कर एक सामान वहाँ एकत्रित थे, जिनके मूल्य का वर्णन करन
असम्भव है।

फर्शों पर ईरान और काश्मीर के बड़े-बड़े और अति कोमल मख
मूल्यवान् कालीन बिछे थे। कोने के चौखटों में लगे कदेआदम आई
| महल के प्रतिबिम्ब को—शत सहस्र गुण कर देते थे। जगह जग
भिन्न-भिन्न कौशल और कारीगरी से लगाई गई पुष्पमालाओं

इस रहस्यपूर्ण महल में बादशाह और शाहजादों को छोड़ और किसी मर्द का गुजर न था। दरवाजों पर भीमकाय खोजे और भीतरी ड्योढ़ियों पर सशस्त्र तातारी बाँदियाँ भारी-भारी तलवारें लिए रात दिन पहरा लगाती थीं। इसलिए किसी भी मनुष्य का उस रंग-महल में भीतर पहुँच जाना और पहुँच कर बाहर जीवित निकल जाना एक प्रकार से असम्भव ही था।

१०

हरम

बादशाह के हरम में दो हजार से ऊपर स्त्रियाँ थीं। इस हरम के वैभव, विलास और ऐश-आराम की कहानियाँ अनेक रूप धारण करके देश-देशान्तर में विख्यात हो गई थीं। योरोप और एशिया के सभी देशों में मुगल ऐश्वर्य की धूम थी। कोई भी तत्कालीन विश्वसम्राट् शान-शौकत में मुगल-सम्राट् बादशाहों से स्पर्धा नहीं कर सकता था। उन्होंने दिल्ली, आगरे आदि नगरों को सुदृढ़, विशाल और भव्य भवनों से सुशोभित किया था। महल, मस्जिदें और मकबरे ऐसे बनवाए थे कि जिन्हें देख कर बड़े-बड़े स्थापत्य-कला-विज्ञान के विशारद भी चकित हो जाते थे। सब प्रकार के सम्पद और कल्पनातीत राजभोग मुगल-बादशाह के अन्तःपुर में नित्य व्यवहार में आते थे। संसार भर की सुन्दरियाँ, मदिराएँ और इन्द्रिय भोग की वस्तुएँ वहाँ एकत्र थीं। वह शाही राज-प्रसाद उन सब भोगों का केन्द्र बना हुआ था और अपनी सीमा को उल्लंघन कर रहा था।

सम्राट् के हरम में बेगमात के अतिरिक्त बाँदियाँ, कंचनियाँ, मुगलानियाँ और उस्तादनियाँ रहती थीं। हरम का प्रबन्ध अत्यन्त सुव्यवस्थित था। जैसे राज्य के भिन्न-भिन्न शासन-विभागों का अनुशासन होता था वैसे ही हरम का भी होता था। मुगल महिलाओं

उस समय आनन्द में शराब, संगीत और फूलों की महक में व्यतीत होता था। रसराज, क्रीड़ा-लिप्त हरम के निवासी रात-दिन देश के करोड़ों दीन-हीन कृषकों की कमाई से निष्ठुरतापूर्वक उगाहे हुए धन को पानी की तरह बहाते रहते थे। यह कोई आश्चर्य की बात न थी—सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी की राजनीति ही ऐसी थी। उस समय साम्यवाद और समाजवाद की क्रान्ति का जन्म नहीं हुआ था। मुगल साम्राज्य में ही नहीं, सारे भूमण्डल में स्वेच्छाचारिता की तूती बोल रही थी। फिर भी मुगल हरम विविध षड्यन्त्रों के केन्द्र बने हुए थे। शाहज़ादे और शाहज़ादियाँ नाक तक विलास और ऐश्वर्य में डूबे रहने पर भी सुखी न थे। प्रेम पिपासु बेगमात को बहुधा गुलामों और खवासों के प्रपञ्च और कपट के कारण बड़े-बड़े खतरे और कष्ट उठाने पड़ते थे। कभी-कभी उन्हें जान से भी हाथ धोना पड़ता था।

शाही हरम में सब मिलाकर भिन्न-भिन्न जाति और नस्लों की लगभग दो हज़ार स्त्रियाँ थीं। जिनमें से प्रत्येक के कर्तव्य पृथक् पृथक् थे। किन्हीं का काम तो बादशाह की भिन्न-भिन्न सेवाएँ करना था और किन्हीं का बेगमों, शाहज़ादियों और बादशाह की माताओं की खिदमत बजा लाना होता था। इनमें से प्रत्येक को पृथक्-पृथक् कमरे बेगम महल में मिले थे जिनकी निगरानी ख़ोजे पहरेदार करते थे। इनके सिवा इनमें से प्रत्येक को बहुधा दस या बारह बाँदियाँ भी मिली थीं। इन स्त्रियों को अपने अपने पदों के अनुसार सौ से लेकर पाँच सौ रुपये तक मासिक वेतन मिलता था तथा इनकी दासियों को पचास से लेकर दो सौ रुपये तक। इनके सिवा पाँच सौ गाने वालियाँ कंचनियाँ भी महल में थीं। उन्हें ऊँची तनख़ा तो मिलती ही थी पर शाहज़ादों, शाहज़ादियों, बेगमों और बादशाह के भाँति भाँति के मनोरंजनों के अवसर पर सदा बहुमूल्य भेंटें भी मिला करती थीं। ये मादक दासियाँ यौवन की मदमाती, इठलाती बिजली की भाँति महल में इधर-से उधर अपनी चमकीली छवि तरुणाइयों के साथ घूमा करतीं और

इच्छा करते ही तुरन्त चाहे जिस बेगम या शाहज़ादी की सेवा में उपस्थित होकर अपनी कला का विस्तार करती थीं। इनकी सुरीली तानों से सदैव ही बेगम महल तरंगित होता रहता था। ये सब बहुमूल्य कमख़ाब और ज़री के वस्त्र पहनती थीं, जिन पर सच्चे जवाहरात जड़े रहते थे। इनके नाच के समय इनकी पोशाक से बहुधा जवाहरात टूट-टूट कर फ़र्श पर गिर जाते थे जिन्हें झुककर उठाना ये अपमानजनक समझती थीं। प्रातःकाल जब फ़राश फ़र्श पर झाड़ू देने आती तो उन्हें मुट्ठियों भरे हीरे, मोती, मानिक, पुखराज फ़र्श पर बिखरे मिलते थे, जो अब उनके बाप-दादों के थे। ऐसी ही एक कंचनी को बादशाह ने ऊँचा रुतबा देकर अपने हरम में रख लिया था, और जब एक वज़ीर ने बादशाह से कहा कि इस दर्जे की औरतों को महल में दाख़िल करना अच्छा नहीं—तो उसने जवाब दिया था कि माल अच्छा हो दूकान चाहे कैसी हो।

बहुत सी स्त्रियाँ उस्तादनी मुग़लानी थीं जो बेगमों और शाहज़ादियों को पढ़ाया करती थीं। महल की ख़ातूनें बहुधा गुलिस्ताँ और बोस्ताँ पढ़ा करती थीं। इनके सिवा प्रेम की बहुत-सी कविताएँ तथा अश्लील क़िस्से-कहानियों की पुस्तकें पढ़ा करती थीं।

हरम में जो स्त्रियाँ राज-काज में बादशाह की सेवा करती थीं उनके दर्जे पृथक्-पृथक् थे। उनका मासिक वेतन उनकी पद-मर्यादा के अनुसार १६ सौ रुपये तक नियत था।

बादशाह की सेवा में जो औरतें नियत थीं उनके दर्जे अलग अलग थे। बाहर जिस तरह दरबारी मनसबदार अमीर उमरा होते थे, उसी भाँति महल के भीतर ये औरतें भी होती थीं और जब बादशाह सलामत अन्दर से तशरीफ़ लाना चाहते तो इन्हीं बनाने और देहातन के द्वारा बाहर के दफ़्तरों पर आज्ञाएँ प्रकाशित करते थे। इन महत्त्वपूर्ण ओहदों पर जो स्त्रियाँ नियत की जाती थीं उन्हें बहुत सोच

बेगम महल का शाही खर्चा लगभग एक करोड़ रुपए था। इसमें वे रुपए सम्मिलित न थे जो समय-समय पर बादशाह या शाहजादियाँ प्रसन्न होकर दान, खिलअत, या भेंट के रूप में अपने कृपापात्रों को देते थे। बेगम महल के बड़े बड़े खर्च तो भाँति भाँति के इत्र और सुगन्ध द्रव्य में होते थे जिनकी खरीद ही महल में नहीं चलती थी। पानों की मद भी बड़ी खर्चीली थी। जिसमें मोतियों का चूना काम में लाया जाता था। एक-एक बेगम हजारों रुपए रोज पान का ही खर्च रखती थीं।

दीवाने खास से सटा हुआ एक चतुर और फुर्तीली स्त्री का दफ्तर था, इस स्त्री का नाम फीरोज बानू था। यह स्त्री हरम के खर्च की देखभाल करती थी तथा नकद रुपए और माल असबाब का हिसाब रखती थी। यदि कोई स्त्री ऐसी चीज माँगती थी जिसका मूल्य उसके वेतन से अधिक होता था तो उसे तहवीलदार से प्रार्थना करनी पड़ती थी। तहवीलदार मुन्शी के पास एक नोट भेजता था, मुन्शी इसकी जाँच करता था जिससे शाही खजाने से रुपया मिल जाता था। मुन्शी ही वार्षिक आय-व्यय का लेखा-जोखा रखता था। जिन्हें रकम देनी होती उनके नाम का एक प्रकार का चिक कट देता था। उस पर वजीरों के दस्तखत होते थे, इसपर एक मुहर लगती थी जो हरम संबंधी फर्मानों पर लगाई जाती थी। जब यह चिक सरकारी खजाञ्चय के पास जाता था तब वह तहवीलदार को रुपया दे देता था और तहवीलदार अपने मातहतों को रुपया बाँटने के लिए दे देता था।

हरम के भीतर रक्षा करने के लिए जो स्त्रियाँ तयनात रहती थीं, वे बड़ी फुर्तीली और बहादुर होती थीं, तथा शराब नहीं पी सकती थीं। इनमें जो अति विश्वसनीय होती थीं वे बादशाह के शयनागार के निकट रहती थीं।

हरम चारों ओर खवीसों से घिरा था। खवीस के बाहर दिक्के और राजपूत सामन्त राजा लोग बारी-बारी से पहरा देते थे। दरवाजों

पर दरबान रहते थे। बेगम महल के चारों ओर अमीर, अहदी और खासी फौज का पहरा रहता था।

यदि किसी अमीर या राजा की कोई प्रतिष्ठित महिला हरम में जाना चाहती थी, तो उसे पहिले हरम के दारोगा को इस बात की सूचना देनी पड़ती थी। उस पर बाक़ायदे की कार्रवाई होने के बाद जब प्रार्थना स्वीकृत हो जाती थी तब वह स्त्री हरम में आने पाती थी।

यह सब प्रबन्ध रहते हुए भी बादशाह स्वयं हरम पर कड़ी निगरानी रखता तथा हरम से सम्बन्ध रखनेवाली छोटी-छोटी बात की भी बड़ी मुस्तैदी से जाँच-पड़ताल करता था।

बहुमूल्य और दुष्प्राप्य जवाहरात जो मुगल हरम में भर कर गये थे, जिन्हें बेगमात सदैव पहने रहती थीं। इन बेगमात को अपने अपने जवाहरात का बड़ा घमण्ड था। वे बहुधा उन्हें बड़ी-बड़ी किश्तियों में सजाकर आने जानेवालियों को दिखाया करती थीं और उनकी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न हुआ करती थीं। वे हीरे और लालों को निपुणता से बीच से छिदवा कर उनकी मालाएँ गले में पहनती थीं। बहुधा वे लाल नारियल के बराबर होते थे। इन मालाओं को वे अपने कन्धे के दोनों ओर चाँदनी की भाँति पहनती थीं। उनके साथ दोनों तरफ़ मोतियों की तीन-तीन लड़ें लटकती थीं। ये मोतियों की लड़ें पेट तक लटकती थीं।

इन जवाहरात को बेगमात और शाहज़ादियों को छोड़ कोई दूसरा नहीं पहन सकता था। न वे बेचे जा सकते थे। साधारणतया बेगमात मोतियों का झूमर पहनती थीं, जिसका एक बड़े-बड़े मोतियों का गुच्छा माथे तक लटकता रहता था। प्रत्येक बेगम और शाहज़ादी के पास इन बहुमूल्य गहनों के छै-छै या सात-सात जोड़े रहते थे। जिन्हें वे इच्छानुसार पहनती थीं।

बेगमात और शाहज़ादियों की पोशाक हरम में सर्वश्रेष्ठ रहती थी। वे प्रतिदिन नई-नई पोशाकें बदलती थीं। ये पोशाक इतनी बारीक

होती थी कि कई कई पोशाक पहनने पर भी उनका भीतर का बदन झीलता रहता था। इनमें से प्रत्येक पोशाक का वजन आधी छटाँक से अधिक नहीं होता था। परन्तु इनका मूल्य पचास रुपए से पाँच हजार रुपए तक होता था। इन पोशाकों में वे मुलहरा जवाहर, गोटा, ठप्पा, और बहुमूल्य मोती-हीरे टाँकती थीं जिन्हें वे एक ही बार बदल कर दुबारा नहीं पहनती थीं। फिर वे जिसके भाग्य में बदा होता उसी किसी बाँदी के शरीर की शोभा बढ़ाती थीं।

रात का सारा रङ्गमहल रङ्ग-बिरङ्गी मशालों की रोशनी से जगमगा जाता था। सैकड़ों हजारों फानूसों की मद्धिम रोशनी से जो जगह-जगह लगे रहते थे, महल की शोभा जादुभरी दीख पड़ती थी। इन फानूसों में सुगन्धित मोमबत्तियाँ जलाई जाती थीं। मोम की बनी मशालों की भीनी सुगन्ध निकल कर रङ्गमहल के वातावरण को मस्त कर देती थी। कभी-कभी बेगमात रोशनी में लाख-डेढ़ लाख रुपया खर्च कर देती थीं। कुछ शाहजादियाँ बादशाह की खास आज्ञा से सिर पर पगड़ी भी बाँधती थीं जिन पर मोतियों और बहुमूल्य जवाहरों से जड़ा तुर्रा खास तौर पर लगाया होता था।

यद्यपि शाही हरम में हजारों बेगमात बाँदियाँ और कंचनियाँ थीं, फिर भी उसे इन पर सन्तोष न था। हर साल खिराज के तौर पर साम्राज्य भर के सूबेदारों को एक नियत तादाद में रङ्गमहल के लिए खूबसूरत लड़कियाँ भेजनी पड़ती थीं। इतने पर भी बादशाह के अनुचित सम्बन्ध अनेक रईस और उमरा की औरतों से थे, जो छिपे नहीं थे। प्रकट में वे रईस और उमरा बादशाह के खिलाफ कुछ नहीं कर पाते थे। पर भीतर ही भीतर वे उससे जलते थे। अन्त में यही बादशाह के पतन और सर्वनाश का कारण हुआ।

इस प्रकार की आशना औरतों में सबसे प्रमुख थी जाफर खाँ की पत्नी थी। उसके प्रेम में अन्धा होकर बादशाह जाफर खाँ की जान लेने पर तुला हुआ था। पर उस स्त्री ने बादशाह की अनुनय-विनय

करके उसे पटने का हाकिम बना कर भिजवा दिया था। यहाँ पाठकों को यह बता देना आवश्यक है कि इस प्रकार का उच्च अधिकार देकर दूर देश में भेजे जाते थे तो उनके कबीले बादशाह अमानत के तौर पर दिल्ली या आगरे में ही रखते थे। बिना बादशाह की विशेष अनुमति लिए कोई उमरा दिल्ली या आगरे से बाहर अपने बाल-बच्चों को नहीं ले जा सकता था। जिन स्त्रियों से बादशाह इतमीनान से रमरण किया चाहता था उनके पतियों का वह इसी प्रकार हाकिम बनाकर दूर प्रान्तों में फेंक देता था।

अमीर खलीलुल्ला खाँ एक और प्रभावशाली सिपहसालार था, जिसकी स्त्री से बादशाह का गुप्त सम्बन्ध था। वह स्त्री जो जूते पहनती थी उनमें तीस लाख रुपये कीमत के जवाहर जड़े रहते थे। जफर खाँ और खलीलुल्ला खाँ की स्त्रियों के साथ शाहजहाँ का सम्बन्ध इस कदर प्रसिद्ध हो गया था कि जब वे दरबार में जातीं तो रास्ते में बैठे हुए मुँहफट फकीर पुकारने लगते कि ऐ नाश्ते ऐ शहनशाह, हमें भी याद रखना। ऐ लुक्मये शाहेजहाँ, हमें भी कुछ दे।

अपनी बढ़ी चढ़ी कामलिप्सा की पूर्ति के लिए बादशाह ने अपने रङ्गमहल में मीना बाजार की बुनियाद डाली थी। यह मेला आठ दिन तक रहता था। इसमें मर्दों का दाखिला और किसी का दाखला निषिद्ध था। ऊँच-नीच सभी जाति की स्त्रियाँ वहाँ अपना-अपना माल बेचने को लाती थीं और माल की आड़ में अपने आपको ऊँचे-से-ऊँचे मूल्य पर बादशाह तथा शाहजादों के हाथ बेचती थीं। बादशाह नित्य इस मेले में जाता। उसका हाथ-सा सुन्दर तख्त कुछ तातारी बाँदियाँ उठाए रहती थीं। आस-पास अनेक स्त्रियाँ हाथों में आसा लिए होतीं। बहुत से ख्वाजासरा भी होते थे। बादशाह बड़े गौर से सुन्दरियों को ताकता जाता तथा उनमें जो स्त्री पसन्द होती उसी को प्यार करता और उसी की दूकान पर जाकर खूब भाव-ताव कर मोल करता, फिर भूल से रुपयों के साथ अशर्फियाँ भी गिन दी जातीं

जो वास्तव में नूरजहाँ या उसकी बेटी के रूप का मोल होती थी। इसके बाद वह एक मुकर्रर इशारा करके आगे चल देता, अब बाद वाली स्त्री का यह काम होता कि वह उस स्त्री को किसी तरह फुसला-फुसलाकर बादशाह के शयनागार में पहुँचा दे। इन स्त्रियों में बहुत-सी तो ऐसे अवसरों की ताक में ही रहती थीं और बादशाह की इच्छा पूर्ति कर मालामाल होकर बाहर निकलती थीं। बहुत-सी हरम में सदा के लिए किसी-न-किसी पद पर बहाल करके रख ली जाती थीं।

इन आठ दिनों में रङ्गमहल में खूब नाच-रङ्ग होते। किला बन्द रहता और बादशाह के सिवा कोई दूसरा व्यक्ति भीतर नहीं रहने पाता था। इस प्रकार इस मेले में तीस हजार तक स्त्रियाँ आती थीं। बादशाह यद्यपि हर तरह बड़ी शानशौकत से रहता था, परन्तु इन मामलों में वह बहुत गिर गया था। दुनिया के इस सबसे बड़े बादशाह की नफ़्सपरस्ती इतनी बढ़ गई थी कि वह इस प्रकार के गन्दे और बदनामी के काम कर बैठता था, जो न केवल उसकी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल थे, प्रत्युत् अन्त में उसके सर्वनाश का कारण बने। क्योंकि उसकी नफ़्सपरस्ती और अमीरों की स्त्रियों से अनुचित सम्बन्ध की बातें इतनी प्रसिद्ध हो गई थीं कि बहुत से भारी भारी अमीर जो साम्राज्य के स्तम्भ थे बादशाह के दिल से कट्टर शत्रु हो गए थे।

११

महान् साम्राज्य

यहाँ हम तत्कालीन राज्य की परिस्थिति का भी थोड़ा वर्णन करना आवश्यक समझते हैं।

यह वह समय था जब मुग़लों के तेज और वैभव का सूर्य मध्याह्न को पहुँच चुका था तथा उस प्रतापी साम्राज्य की अलौकिक कीर्ति-कथा देश-देशान्तरों में फैल चुकी थी और वह वैभव और प्रतिष्ठा की

पराकाष्ठा को पहुँच चुका था। उस मध्यवर्ती युग में दिल्ली और आगरा पृथ्वी की सभी विभूतियों के केन्द्र बने हुए थे। बादशाह के बेगम-महल से लेकर यहाँ के चौक बाजार की पान बेचने वाली ताम्बोलिन की दुकान तक प्रत्येक स्थान यथासाध्य सुखोपयोगी कौतूहलों और रहस्यों का क्रीडास्थल बना हुआ था। आमोद-प्रमोद और आनन्द विलास की धाराएँ बे रोक-टोक यहाँ बहा करती थीं। तात्पर्य यह कि उस समय मुगल बादशाह का दरबार ऐश्वर्य और शानशौकत में पृथ्वी भर में अद्वितीय था।

इस बादशाह के शासनकाल में गोलकुण्डा से गजनी और कन्धार तक जो ढाई हजार मील से भी अधिक लम्बाई का प्रदेश है और उस समय तीन महीने का मार्ग था—मुगल बादशाह का साम्राज्य फैला हुआ था। उस जमाने में जो चावल और गेहूँ इस देश में पैदा होते थे—मिस्र की किस्मों से बढ़कर थे तथा रेशम, रुई और नील आदि जो यहाँ बे हिसाब पैदा होते थे वे दूसरे देशों में पैदा होते ही न थे। कारीगरी की चीजों में कालीन, चिकन, कमख्वाब, कारचोबी, जरदोजी आदि के काम और हर प्रकार के सूती और रेशमी वस्त्र जो देश भर में बरते जाते थे तथा विदेशों को करोड़ों रुपयों के भेजे जाते थे—बहुतायत से तैयार होते थे। मुगल साम्राज्य की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि सोना चाँदी संसार भर में घूमघाम कर जब भारतवर्ष में पहुँचता था तो यहीं रम जाता था।

अमेरिका से जो सोना आकर सारे योरोप में फैलता था उसमें से कुछ तो तुर्किस्तान से खरीद की हुई चीजों के बदले में वहाँ पहुँच जाता था और बहुत-सा स्मरना के बन्दरगाह से ईरान पहुँचता था, जहाँ से योरोप को रेशम बहुत बड़ी संख्या में जाता था। परन्तु टर्की, यमन और ईरान का काम उन दिनों भारतवर्ष की चीजों के बिना चलता ही न था। जो मुखा बन्दर से—जो लाल समुद्र के किनारे बाबुल मन्दब के पास था, तथा बसरे से—जो फारस की खाड़ी के

सिर पर था, और अब्बास बन्दर से—जो हुरमुज टापू के पास था—सोना चाँदी भारत की ओर खिंचा चला आता था। इसके सिवा जब हिन्दुस्तानी पोर्तुगीज जहाज जो हर साल भारत का माल पेगु, टेनासरीम, सीलोन अचीन, मगाखिर, मलाया आदि टापुओं में ले जाते थे उनके बदले में चाँदी सोना ही लाते थे और वह सब यहीं पर रह जाता था। जो सोना चाँदी जापान की खानों से निकलता था, उसका बहुत-सा भाग डच लोगों के द्वारा तथा फ्रांसीसी और पुर्तगीजों के द्वारा लाया हुआ भी सोना चाँदी छोड़कर भारत से बाहर नहीं जाने पाता था।

अलबत्ता, उन दिनों ताम्बा, लौंग, जायफल, दारचीनी, और हाथी आदि वस्तुएँ डच लोग सीलोन, जापान, मलाया, इंग्लैंड आदि से लाते थे। सीसा इंग्लैंड से और बानात फ्रान्स से आती थी। प्रतिवर्ष २५ हजार घोड़े दक्खन देशों से या कन्धार होकर ईरान से आते थे। उसी भाँति सूखे और ताजा मेवे, समरकन्द, बलख, बुखारा और ईरान से आते थे। कौड़ियाँ मलय द्वीप से आती थीं, जो पैसे और धेले के स्थान पर चलती थीं। अम्बर ईरान, मलाया, मोजाम्बिक से आता था। गैंडे के सींग तथा हाथीदाँत, गुलाम हब्श देश से आते थे। मुश्क और चीनी के बर्तन चीन से, मोती तूतीकोरन और लंका से आते थे। अवश्य ही इन सबकी भारत को एक भारी रकम के रूप में कीमत चुकानी पड़ती थी। परन्तु वह कीमत चाँदी सोने के रूप में नहीं दी जाती थी। जो विदेशी व्यापारी इन वस्तुओं को देश-देशान्तरों से लाते थे, वे उनके बदले में यहाँ की तैयार चीजें ले जा के दूना नफा उठाते थे। इस प्रकार जो चाँदी-सोना यहाँ आता था वह मुश्किल ही से यहाँ से बाहर जाता था। यद्यपि समूचा भारतवर्ष मुगल सम्राट् के अधीन न था, तथापि उसका साम्राज्य-विस्तार, आय, और सैनिक सत्ता उस समय पृथ्वी भर में सबसे बढ़-चढ़कर थी। प्राच्य राजसिक ऐश्वर्य की गरिमा में उस समय भारतवर्ष का स्थान सर्वश्रेष्ठ था। समूचे

मुगल साम्राज्य में बीस करोड़ रुपये कर में वसूल होते थे। मीर, नवाबों और मुतफर्रिक मदों की आय पृथक थी। बादशाह के खास महल की आय ६॥ करोड़ रुपया थी। इसी से बादशाह का निजू खर्च चलता था।

बादशाह बहुत सोच-समझ कर खर्च करता था और उसने अपने शासनकाल के चालीस साल बिना लड़ाई-भिड़ाई किए बिताए थे। इससे बेअन्दाज दौलत उसके खजाने में इकट्ठी हो गई थी। उसके खजाने में बड़े बड़े कीमती जवाहरात कंकड़-पत्थर की तरह ढेर-के-ढेर पड़े रहते थे, जिनकी कीमत ८ करोड़ रुपये थी। इसके सिवा दो करोड़ रुपये मूल्य के जवाहरात शाहजादे, शाहजादियों के पास थे। बादशाह ने सूरत के हाकिम को, जो साम्राज्य में सबसे बड़ा बन्दरगाह था—यह हुक्म दिया था कि कोई कीमती और असाधारण रत्न जो विदेशी लावें—शाही खजाने के लिए अवश्य खरीद लिये जावें। यद्यपि तब तक सोने-चाँदी की खानों का पता नहीं लगा था, फिर भी बादशाह के खजाने में सोने-चाँदी के अम्बार लगे थे। शाहजहाँ के काल तक मुगल बादशाहों का यह नियम रहा था कि जब कोई अमीर उमरा मर जाता था तो उसकी सब सम्पत्ति शाही खजाने में दाखिल कर ली जाती थी। इस मद से अटूट धन-दौलत शाही खजाने में आती रहती थी।

बादशाह को जो रकम अमीर उमरा से मिलती थी, उसे वह अपने खजाने में नहीं रखता था बल्कि इसके लिए उसके पृथक् खजाने थे। एक सोने के लिए एक चाँदी के लिए। सोने वाले खजाने का नाम जरीना था और चाँदी वाले का भीम। वास्तव में ये दोनों बड़े बड़े हौज थे जिनकी लम्बाई सत्तर फुट और चौड़ाई तीस फुट थी। इनके बीच में संगमरमर के खूबसूरत खम्भे थे। ये खजाने चारदीवारी से बन्द किए जाते थे। इनके ऊपर बड़े-बड़े कमरे थे जिनमें वह खजाना रहता था जिसमें से प्रतिदिन खर्च किया जाता था। सोने वाले खजाने में [illegible] के सिक्के थे, जो [illegible] के बराबर

थे। और भी पुराने ज़माने के सिक्के जिनका चलन उन दिनों बन्द था और जिनकी क़ीमत सात सौ से सात हज़ार पताका तक थी, ख़ज़ाने में जमा थे। ये सिक्के बहुत सुन्दर होते थे, और बादशाह जब अपनी किसी चहेती पर प्रसन्न होता था तो कभी-कभी उसे इनमें से एकाध नज़राने के तौर पर दे देता था।

बादशाह की अपार आय का पता केवल एक इसी बात से लगता है कि वज़ीरे आज़म असदुल्ला ख़ाँ रोज़ाना तीस हज़ार रुपये रिश्वत के बेत में डाल लेता था।

इस बड़े बादशाह ने अपने राज्यकाल में बड़े-बड़े ख़र्चीले काम भी किए थे। अपने शासन के प्रारम्भिक बीस वर्षों में शाहज़ादों ने दान तथा पुरस्कार में साढ़े नौ करोड़ रुपए ख़र्च किए थे, जिनमें साढ़े चार करोड़ नक़द रुपए और पाँच करोड़ की चीज़ें थीं। आगरा, दिल्ली, लाहौर, काबुल, काश्मीर और कन्धार तथा अजमेर की शाही इमारतों और क़िलों की तैयारी में लगभग तीन करोड़ रुपया ख़र्च किया था। यह स्मरण रहे कि उस समय का रुपया आज के रुपए से सौगुनी वस्तु ख़रीद सकता था, अर्थात् एक रुपया आज के सौ रुपए के बराबर था।

इस महान् साम्राज्य की रक्षा तथा भारी राजकोष की हिफ़ाज़त के लिये बादशाह ने बहुत भारी सेना रखी हुई थी। वह अपने को ९ लाख सवारों का स्वामी कहता था। ९ लाख सवार, आठ हज़ार मनसबदार, सात हज़ार तीरंदाज़ सवार, और चालीस हज़ार तीरंदाज़ तथा गोलंदाज़ प्रतिदिन बादशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा करते रहते थे। १० हज़ार तीरंदाज़ और गोलंदाज़, जो हर समय बादशाह की सेवा में ही रहते थे। बाक़ी ३० हज़ार भिन्न-भिन्न सूबों में थे। शाहज़ादों, राजाओं और उमराओं के अधीन एक लाख पचासी हज़ार सवार और साढ़े चार लाख पलटन थी। भिन्न-भिन्न परगनों के फ़ौजदारों, ज़मींदारों, आदि के अधीन जो पल्टनें थीं, वे अलग थीं।

शाही सवारी के जो खास घोड़े होते थे, उनके रङ्ग, कद या चाल को देखकर उन्हें भिन्न-भिन्न नाम दिए जाते थे। वे सब अरबी, फारसी या तुर्क नस्ल के होते थे। उन्हें शोरे से दाग दिया जाता था। होशियार साईस इनकी सफाई और खिदमत करते थे। सहर के तौर पर इन्हें मक्खन और खाँड मिलाकर रोटी दी जाती थी। शाम को चावल पका कर इन्हें मक्खन, मिर्च, जीरा, लौंग और पान मिलाकर खिलाया जाता था, जिससे उनमें से रीह खारिज होती रहे। जब बादशाह किसी घोड़े पर सवारी करना चाहता था तो साईसों का दारोगा और जीन के २ अफ्सर उस पर सवारी करता था, जिससे उसकी चाल ठीक हो जाय और पैर हल्के हो जाय। बादशाह प्रथम एक घंटा ऊँटों पर सवारी करता था, फिर हाथी पर, फिर घोड़े पर। ये घोड़े तोप-बन्दूक आदि की आवाजों पर बिदकते न थे। इसकी उन्हें शिक्षा दी जाती थी। जब बादशाह दरबार करते थे तो यह नियम था कि चार खासे घोड़े कसे कसाये गुसलखाने के निकट तैयार रहते थे। यह नियम तैमूर के समय से था और बादशाह जब किसी शाहजादे या बड़े आदमी पर प्रसन्न होता था, तो अपने खासे घोड़ों में से एक घोड़ा उसे देता था, जिसके साथ २० या ५० घोड़े और होते थे।

बादशाह की खास सवारी में १०० बड़े-बड़े ऊँचे हाथी थे, इनके नाम भी पृथक्-पृथक् थे जो बादशाह ने उनके रूप गुणों को देखकर रखे थे। इन हाथियों को भी तोप-बन्दूक, पटाखा आदि की आवाज से न डरना सिखाया जाता था। बहुतों को शेर चीतों का शिकार करना सिखाया जाता था। युद्ध में उन्हें मस्त करने के लिए शराब पिलाई जाती थी। शाही महल के ठीक नीचे वाले छोटे फाटक पर एक हाथी पहरे पर तैनात रहता था। इन हाथियों में एक नगीना होता था जो सबसे बड़ा होता था। जब वह बादशाह के सामने आता था तो उस पर सुनहरी झूल पड़ी होती थी तथा उसके साथ कई अन्य हाथी होते थे और उसके साथ ढोल नगाड़े आदि बाजे बजते तथा झण्डे उड़ते

से अपार धन व्यय होता था, पर उसकी व्यवस्था बहुत ही खराब थी।

बादशाह के पास जल-सेना बिल्कुल थी ही नहीं, और समुद्रतटों की ओर से यह सोने और हीरों से भरा हुआ साम्राज्य सर्वथा अरक्षित था। कोई भी योरोप का बादशाह थोड़ी भी जल-सेना लेकर बंगाल को बिल्कुल आसानी से फतह कर सकता था, और उस अतूट धन का स्वामी बन सकता था, जो मैक्सिको और पेरू की चाँदी की खानों के मुकाबिले कहीं बढ़-चढ़ कर था।

मुगल राजनीति दोषपूर्ण और खोखली थी। सेना अव्यवस्थित और असंगठित थी। जल-सेना थी ही नहीं। सम्पूर्ण साम्राज्य में निरन्तर कहीं-न-कहीं विद्रोह होते ही रहते थे। नदियाँ और बन्दरगाह सब विदेशियों के लिए खुले थे। ऐसी हालत में यह समृद्ध साम्राज्य की सुखछाया में प्रविष्ट देश उसी प्रकार किसी भी योरोपियन शक्ति के द्वारा विजित किया जा सकता था जिस प्रकार अमेरिका के नंगे जंगलियों को उन्होंने विजित किया था।

इसके सिवा मुगल साम्राज्य की दो भारी त्रुटियाँ थीं। एक यह कि मुगल शासन, सैनिक शासन था। प्रबन्ध, दीवानी, फौजदारी एवं सेना व्यवस्था सब एक जगह थी। राजधानी से सुदूर प्रान्तों के सम्बन्ध शिथिल थे। समाचार देर से आते-जाते थे। मार्ग की असुविधाएँ थीं। एक केन्द्र में बैठकर शासन नहीं किया जा सकता था। इस कारण सुदूर प्रान्तों में वे उच्चाकांक्षी शाहजादे स्वतन्त्र बादशाह ही बन बैठे थे। लूटमार, अत्याचार से उन्होंने अधिक-से-अधिक धन संग्रह कर लिया था, और अपनी प्रबल स्वतन्त्र सेना बना ली थी। वे अपने प्रान्तों की आमदनी का स्वेच्छा से खर्च करते थे। कोई भी इस विषय में उनसे पूछने वाला न था। इससे उनकी शक्ति बहुत बढ़ गई थी।

दूसरी त्रुटि यह थी कि साम्राज्य की सारी व्यवस्था और राजनीति

में मुगल हरम का बराबर हाथ था। शाही हरम एक ऐसा गोरखधन्धा था कि वहाँ बेशुमार उलटी-सीधी बातें अन्धेरे में होती रहती थीं। हम बता चुके हैं कि इस समय शाही हरम में बादशाह की बड़ी बेटी जहाँआरा की तूती बोल रही थी। स्वयं बादशाह और दारा उसकी मुट्ठी में थे। चारों भाइयों के जासूस दरबार और हरम में घुसे बैठे थे। अमीर उमरा बेदिल, ईर्षा और द्वेष से भरे अवसर की ताक में थे। भीतर बाहर सर्वत्र अनगिनत षड्यन्त्र होते रहते थे। इस प्रकार बूढ़े और कामुक शाहजहाँ का दरबार और महल विद्रोह, अविश्वास और षड्यन्त्रों का एक केन्द्र बन रहा था। बादशाह को बहुत-सी बातें मालूम थीं, पर वह कुछ भी कर नहीं पाता था। इससे उसकी चिन्ताएँ और बेचैनी दिन-दिन बढ़ती ही जाती थी। उसे सबसे भारी डर औरङ्गजेब का था। उसे सबसे खराब सूबा दिया गया था, और उसके पास सबसे कम सेना थी, पर दारा सदैव उससे चौकन्ना रहता था। यही कारण था कि उसे ज्योंही औरङ्गजेब से मीरजुमला के मिल जाने तथा गोलकुण्डा पर आक्रमण की सूचना मिली, उसने तुरन्त बादशाह के नाम से उसे वहाँ से हट आने का हुक्म भेज दिया, तथा मीरजुमला को दरबार शाही में बुला भेजा। इसमें दारा का यह षड्यन्त्र था कि उसे कन्धार और ईरान की चढ़ाइयों में अटका दिया जाय। इस षड्यन्त्र में बड़ी बेगम जहाँआरा का भी हाथ था। उसे आशा थी कि इस तरह यदि कन्धार पर अधिकार हो गया तो उसका प्यारा सिपहसालार नजाबत खाँ—जो शाही दुलारे का सम्बन्धी था—दुलारे का शाह बना दिया जाय और फिर उससे शादी करके यौवन के हौसले पूरे किए जायँ। परन्तु अमीर मीरजुमला ऐसा विलक्षण कुटिलनीतिज्ञ और दूरदर्शी था, कि उसने एक ही वाक्य में बादशाह का मन कहीं का कहीं फेर दिया और यहीं से दारा की बदबख्ती का प्रारम्भ हुआ।

—:०:—

१२ :

मुकमए शाहजहाँ

दिल्ली में उन दिनों फकीरों का बड़ा ज़ोर था। ये फकी
सल्तनत की देन थे। मुसलमानों के राज्य की जड़ भारत में
इन्होंने बड़ा काम किया था। उनमें बहुतों की मज़ार पूजी
बहुतों को औलिया समझा जाता था। सब लोग इनकी बहुत
भगत करते थे और इनकी ज़्यादतियाँ बर्दाश्त करते थे। इन
दाद-फर्याद नहीं थी।

दिल्ली में इनके दो गिरोह थे, एक को 'बेकैद' कहते थे,
'बेशरअ' बेकैद फकीर बहुत मक्कार होते थे, और बड़ी बेदर
बात करते थे। छोटे-बड़े का ये कुछ लिहाज़ नहीं करते थे, जिसे
गालियाँ सुना बैठते। गन्दी फोश बातें बकते, चाहे जिसके
निधड़क घुस जाते, जो रोकता उसे बहुत गन्दी-गन्दी गालियाँ
फिर भी किसकी मजाल थी कि इनसे नाराज़ी प्रकट करे।
खुशामद और चापलूसी से इनके गुस्से को कम करते, उनसे
क्षमा माँगते और मुँहमाँगी भीख देकर पिण्ड छुड़ाते थे। यदि
दरवाज़े पर ही न रोका जाय तो ये सीधे मालिक के पास जाक
सलाम-बन्दगी किए—अपनी फटे-पुराने, गन्दे और धूल-मिट्टी
हुए हाथ-पाँव के साथ उसके बराबर जा बैठते और उसके
हुक्का छीन कर खुद पीने लगते थे। घर का स्वामी इसपर उनसे
न होता था—उलटे खुश होता था और उसे अपने लिए भारी
की बात समझता था। उन्हें बहुत-बहुत धन्यवाद देता, अपप
और उन्हें खुश करता था। भीख माँगने में ये ऐसी ज़िद करते

के नाम पर भीख नहीं माँगते थे—वे कहते थे कि उनके नाम पर कुछ माँगना उनका अपमान करना है। हर एक आदमी उन्हें अपनी शक्ति के अनुसार कुछ अवश्य देता था।

दूसरे किस्म के फकीर 'मतरस' कहलाते थे। वे हाथों में तेज छुरी लिए हुए भीख माँगते थे। उनका भीख माँगने का कायदा यह होता था कि वे दूकान के आगे जाकर खड़े हो जाते थे और जिस वस्तु की आवश्यकता होती थी, उसकी तरफ इशारा करके माँगते थे। यदि दूकानदार दे देता तब तो खैर—वरना वे अपनी छुरी से हाथ-पाँव-सिर आदि में जख्म करके खून दूकान के भीतर फेंक देते थे। बेचारे हिन्दू बनिये उनसे बहुत डरते थे। और खून देखते ही उनको मुँहमाँगी भीख देकर जान छुड़ाते थे।

ऐसा ही एक बेकैद फकीर 'सरमद' दिल्ली के बाजारों में घूमता रहता था। वह फकीर बिलकुल नंग-धड़ंग फिरता था। न नमाज पढ़ता था न रोजा रखता था। एक हिन्दू बोहरी का लड़का अभीचन्द था—उससे वह प्रेम करता था और जब उससे पूछा जाता—तेरा खुदा कौन है? तो वह झट फारसी भाषा में जवाब देता—'अभीचन्दस्त'। जब उससे लोग पूछते—तू कपड़ा क्यों नहीं पहनता—तो वह कहता—जो ऐबदार हैं वे अपने को छिपाते हैं। हम बेऐब हैं।

लोग उसे बहुत मानते थे। इसका एक कारण यह भी था कि शाहजादा दारा उसे बहुत मानता था। वह खड़ा होकर उसका स्वागत करता। और जब कभी वह सवारी पर बाहर निकलता—और सरमद दीख जाता तो सवारी खड़ी करके सलाम करता। कभी अपने साथ उसे हाथी पर बैठा लेता। बहुधा उसके चेले-चाँटे उसके पीछे फिरा करते थे। ये सब आवारा फकीर होते थे, जो उसकी आड़ में हराम के माल मलीदे चाट रहते थे। अमीर, उमरा, शाहजादा जिसको भी

सवारी बाजार में निकलती, उसके पीछे वे बुरी तरह दौड़ते और वे लोग भी इसमें रुपया-अशर्फी लन्ना-बन्ना देते रहते थे।

जिस दिन शाही दरबार हुआ उसी दिन की बात है कि बेगम अफ़्ज़ाँ की सवारी पालकी में किले की ओर जा रही थी। सरमद ने उसे देखा और अपने साथियों के साथ उसके पीछे लपका। सब जानते थे कि बादशाह शाहज़ादों के साथ उसका गुप्त सम्बन्ध है। इसलिए वे चिल्ला-चिल्ला कर पुकारने लगे—'ऐ हुस्नए शाहज़ादों, कुछ हमको भी देती जा, और बेगम ने एक मुट्ठी भर अशर्फ़ियाँ उनकी ओर फेंक कर सवारी आगे बढ़ाई।

: १२ :

ख़ासगाह

दरबार से लौट कर बादशाह सीधा अपनी ख़ासगाह में जा पहुँचा। यह शाही महलों के बीच एक विशाल कमरा था जो २४ हाथ लम्बा और ८ हाथ चौड़ा था। इसके चारों ओर बड़े-बड़े कदेआदम शीशे लगे थे, जो बड़े श्रम से विलायत से मँगाये गए थे। इस कमरे की सजावट में जो सोना खर्च हुआ था उसकी लागत डेढ़ करोड़ रुपए थी। इसके सिवा जो हीरे मोती इसमें लगे थे उनकी कीमत का अन्दाज़ लगाना बिल्कुल असम्भव था। कमरे की छत में दो विशाल शीशों के बीच सोने की धारियाँ जड़ी थीं जिनमें जवाहरात जड़े थे। शीशों के किनारों पर बहुमूल्य मोतियों के गुच्छे लटकाए गए थे। इसकी दीवारें संगियशब की थीं। हर सूरत में यह कमरा एक ऐसा अनोखा स्थान था कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। तमाम शीशे जो इस कमरे में लगाए गए थे वे इस ढंग पर लगाए गए थे कि जब बादशाह अपनी प्रेमिकाओं के साथ विहार करे तो उस दृश्य को अपनी आँखों से देख ले।

इस कमरे में हर किसी का आना निषिद्ध था। खास-खास ख्वाजासरा ही इसमें आ पाते थे, और यह कमरा बादशाह की खास खास बेगमों की मुलाकात के लिए बनाया गया था।

कमरे के बाहर दो सौ तातारी-बाँदियाँ नंगी तलवार हाथ में लिए, तीर-कमान पीठ पर कसे, रात-दिन पहरा देती थीं। इन सब का सरदार एक कद्दावर ख्वाजासरा था जिसका नाम अम्बास था। वही इस कमरे के भीतरी भेदों का जानकार था। इस कमरे के चारों कोनों पर चार कोठरियाँ थीं जिनमें चार प्रधान बाँदियाँ रहती थीं। ये नाम की बाँदी थीं—इनकी तनख्वाह और इनाम-इकराम में इन्हें बेअन्दाज धन मिलता था। इनके नाम चारों दिशाओं के नाम पर नियत थे और इनके जिम्मे बादशाह के गुसलखाने का भीतरी प्रबन्ध था। ये बड़ी सुन्दरी थीं और बड़े ठाठ-बाट में रहती थीं। इनमें की सरदार थी उसका नाम पुर्वेद बानू था। यह बाँदी बड़ी चपल, नौजवान, और बादशाह की मुँहलगी थी।

दरबार से लौट कर बादशाह सीधे अपने उसी कमरे में आकर एक निहायत मुलायम गद्देदार कोच पर मसनद के सहारे झुक गए। इस समय उनका चित्त प्रसन्न था, और आँखें चमक रही थीं, चेहरे पर निरन्तर छाई रहनेवाली उदासी इस समय न थी।

अम्बास ने बादशाह के कदमों बढ़के और आदाब झुक कर दस्तबस्ता कहा था, 'खुदावन्द, बेगम बहार बड़ी देर से हुजूर की कदमबोसी के लिए बैठी हैं।' बादशाह ने मुस्कुरा कर कहा—

'गुर्वेद को भेज दे और एक गिलास शोरबा भी।' अम्बास अदब से पीछे हटा, और कुछ देर में गुर्वेद धीरे से कमरे में आई। उसके पीछे दो बाँदियाँ और थीं। एक के हाथ में शोरबे का गिलास और दूसरे के हाथ में जड़ाऊ पानदान था। उसने गिलास बादशाह के सामने पेश किया।

शराब पीते-पीते बादशाह ने कहा—'माजरा क्या है, बानू, आज बेवक्त बेगम बक़र अली क्यों आई है ।'

'हुज़ूर, वे बहुत ही बदहवास हैं मैंने इतना समझाया है मगर वे रोती ही जा रही हैं ।

बादशाह की भृकुटी में बल पड़ गए, उन्होंने कहा—'उन्हें भेज दे और ख्याल रख कि भीतर कोई आने न पाए ।'

आदाब बजाकर सुर्वेद चली गई । कुछ ही देर में बेगम बक़र अली ने आँधी की भाँति कमरे में प्रवेश किया । अदब कायदे का बिना विचार किए ही उसने बादशाह के सामने जाकर कहा—"हुज़ूर, मैं बर्बाद हो गई, मुझे बचाइए—मेरी इज्जत बचाइए, वरना मेरी जान चली जाएगी ।"

बादशाह खड़े हो गए । उन्होंने बेगम का हाथ अपने हाथों में लेकर तसल्ली के स्वर में कहा—"प्यारी बेगम, हुआ क्या है, जो इस कदर परीशान हो ? मुफस्सल हाल तो कहो ।"

"हुज़ूर, मेरे खाविंद को सब कुछ मालूम हो गया है और वे या तो मुझे मार डालेंगे या तलाक दे देंगे ।"

'उसकी इतनी मजाल नहीं हो सकती,' गुस्से से बाहर हो बादशाह ने जवाब दिया, 'मैं अभी उसे तोप से उड़वाने का हुक्म देता हूँ ।' उन्होंने दस्तक देने को हाथ उठाया ।

बेगम ने लपक कर बादशाह के हाथ चूमते हुए कहा—नहीं नहीं, जहाँपनाह, रहम कीजिए—मुझे बेवा न बनाइए । वह एक ऐसा खाविन्द है जो किसी भी औरत के फ़ख्र का बाइस हो सकता है, वह बहुत नेक, दिलेर और मर्द है, वह मुझे जान से ज्यादा प्यार करता है हुज़ूर, मैं बदबख्त ' बेगम बादशाह के ऊपर गिर कर फफक-फफक कर रोने लगी ।

बादशाह को अभी भी गुस्सा आ रहा था, उन्होंने कहा—'मगर

यह बदबख्त मेरे रास्ते का रोड़ा नहीं हो सकता, वह, जिसे मैंने ज़मीन से उठाकर आसमान तक पहुँचा दिया। अमीरे सल्तनत बना दिया।'

बेगम चुपचाप पड़ी रोती रही। वह बारीक धानी पोशाक पहने थी। उसमें से उसका सारा शरीर छन-छनकर दीख रहा था। जिस प्रकार स्वच्छ बोतल में से मदिरा दीख पड़ती है। वह एक २९ वर्ष की छरहरे बदन की अप्रतिम सुन्दरी स्त्री थी, उसकी रूप माधुरी में कुछ ऐसी मिठास थी कि उसे देखकर मन उन्मत्त हो जाता था। उसका प्रत्येक अंग साँचे में ढला था—शराब की कमनीयता और नज़ाकत उसके शरीर से छलक रही थी। उसका चेहरा विलास से परिपूर्ण था। उसकी आँखें और बाल गहरे काले थे। आँखें-कटीली-मदभरी और बड़ी-बड़ी थीं।

रंग उसका खूब गोरा, मुख हल्की ललाई लिए, होंठ खूब सुर्ख और गर्दन लम्बी और पतली थी, उसकी दन्तपंक्ति जब हास्य बिखेरती थी तो मुक्ता के समान उन दाँतों पर मन मूर्छित हो जाता था। पतली कमर उभरे वक्ष और नितम्ब उसकी चाल में एक मद उत्पन्न करते थे।

इस अस्तव्यस्त कुण्ठित अवस्था में भी उसकी सुषमा और लावण्य के प्रभाव से बादशाह के मन में राग जाग उठा। उन्होंने क्रोध त्याग कर धीरे से कहा—'दुआ करो बेगम मुख्तसर करो तो। खुदारा, रोना धोना बन्द करो, इससे क्या होगा।'

बेगम ने आँखें पोंछीं। वह हट कर एक तरफ कुर्सी पर बैठ गई। उसने करुण नेत्रों से बादशाह को देखकर कहा—

"उन्हें सब कुछ मालूम हो गया।"

"तो यह तो उनके लिये आपसे ख़ुश होना चाहिए।"

"वे ऐसे नहीं हैं हुज़ूर—"

बादशाह की आँखों में फिर बल पड़ गए। उन्होंने कहा—"तो बेगम, तुम्हें भी पछतावा हो रहा है।"

"जहाँपनाह, इस लौंडी ने तो अपना सब कुछ हुजूर को लुटा दिया, अब आप ऐसी बात क्यों फर्माते हैं ?"

"तो प्यारी बेगम, मैंने भी तो तुम्हारे खाविन्द को ऊँचा दरजा दे दिया है।"

"मेरे हुजूर, गैरतमन्द अस्मत को सबसे बड़ी चीज समझते हैं।"

"तो बेगम, शायद तुम्हें अस्मत का बहुत खयाल है।"

"हुजूर खफा न हों, मेरी बातें पूरी सुन लें—"

"कहो—"

"शाइस्ता खाँ की बीबी पागल हो गई है।"

यह सुनकर बादशाह एकदम घबरा गए, वे कहने लगे—"खुदा के वास्ते ऐसा न कहो !"

"वे हुजूर का नाम ले-लेकर बुरी-बुरी बातें कह रही हैं और शाइस्ता खाँ ने मेरे खाविन्द को बुलाकर कुछ सलाह की है।"

"सलाह की है !" बादशाह ने तलवार की मूँठ पर हाथ रखा।

"हुजूर, अजब नहीं कि शाइस्ता खाँ, हुजूर के दुश्मनों की कुछ बुराई करे, हुजूर खबरदार रहें।"

बादशाह का चेहरा भय से पीला पड़ गया। उसने कहा—"क्या उसका इरादा कुछ बद है ? मैंने उस हरामी को तीन हजारी जात का रुतबा दिया है।"

"मगर अब उसकी बीबी का क्या होगा। उसके साथ तो हुजूर ने बहुत ज्यादती की।"

"यह ज्यादती तो उसके बेमिसाल हुस्न की है, फिर भी मुझे अफसोस है यानू। पर मैं क्या करूँ ? वह राजी ही न होती थी। मुझे मजबूरन जोरेजुल्म करना पड़ा, मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि कोई औरत मेरे हुक्म में दरेग करे।"

"आह हुजूर ! आप बड़े बेदर्द हैं"—बेगम ने आह भरकर कहा

स्वर में कहा। बादशाह का दिल पसीज गया, उन्होंने बेगम के दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—

"नहीं जानेमन, क्या तुमने कभी कोई हिमाकत की बात देखी?"

"हुजूर, मैं कबूल करती हूँ कि लौंडी पर हुजूर की खास मेहरबानी है।"

"खैर तो यह कहो, किसी तरह उसका मुँह बन्द हो सकता है, तुम उसे समझाओ।"

"उसने खाना दाना छोड़ दिया है, ज़मीन में मुर्दे की तरह पड़ी है, उसका दिमाग फिर गया है, वह न रोती है न चिल्लाती है, वह पागल हो गई है हुजूर, उसके सामने जाते डर लगता है।"

"यह क्या कहती हो प्यारी बेगम!"

"जहाँपनाह, किसी औरत पर जितना जुल्म किया जा सकता था हो चुका, वह बर्बाद हो गई। कमबख्ती कभी बीच ही में मसल डाली गई। अफसोस!"

बेगम चुपचाप नीची गर्दन करके बैठ गई। बादशाह भी कुछ देर चुपचाप आँखें नीची किए बैठे रहे। फिर उन्होंने व्याकुल स्वर में पूछा—

"तुम कोई रास्ता बता सकती हो प्यारी बेगम?"

"जहाँपनाह, मुझे तो अपनी ही फिक्र है, उसने मेरे विषय में ऐसी-ऐसी बातें मुँह से निकाली हैं कि मेरा लोगों को मुँह दिखाना भी मुमकिन नहीं रहा। आह, मैंने क्यों इस बुरे काम में हुजूर की मदद की।" वह फिर मुँह ढाँपकर रोने लगी।

"बीती बात का विचार न करो बेगम, अब बताओ कि मैं क्या करूँ? तुम कहो तो ..."

"नहीं जहाँपनाह, मेरी एक अर्ज़ है।"

"जल्द कहो ताकि इसके बाद हमलोग फिर प्यार की बातें करें।"

बेगम ने उपेक्षा के भाव को छिपा कर विनय से कहा—"आप मेरे खाविन्द को पटने का हाकिम बना कर भेज दें।"

बादशाह मुस्कुरा दिए। उन्होंने कहा—

"अच्छा बेगम, मैं आज ही उसे रवाना होने का हुक्म दे दूँगा।"

"और हुजूर, शाइस्ता खाँ से खूब चौकन्ने रहिए।"

"शाइस्ता खाँ क्या करना चाहता है?"

बेगम के चेहरे पर भय के चिह्न आए। उसने बादशाह के पास सरक कर कहा—

"हुजूर, वह छिपे-छिपे औरङ्गज़ेब से मिल गया है, वह उसे तख्त के लिए हुजूर के खिलाफ भड़का रहा है।"

बादशाह क्रोध से काँपने लगे। उन्होंने कहा—"तो मैं उसे कत्ल करा डालूँगा।"

"नहीं हुजूर, इससे तो दूसरे अमीर बदजन हो जाएँगे। उसकी औरत की बात बहुत फैल गई है। फिर वह हुजूर का रिश्तेदार भी तो है।"

"तब तुम क्या चाहती हो कि उसे भी तुम्हारे खाविन्द के साथ बंगाल का ओहदा भेज दूँ जिसमें वे दोनों मिलकर मेरी तबाही के मनसूबों को अमल में ला सकें?"

"जी नहीं, उसे आँखों से दूर भेजना तो खतरनाक है।"

"तब क्या करूँ?"

"हुजूर, उसे नजदीक ही रखिए ताकि उसकी हरएक बात पर नजर रहे और हमेशा उसी तरह चौकन्ने रहिए जैसे साँप से रहा जाता है।"

बादशाह ने बेगम को खींच कर अपनी छाती से लगा लिया और उसे चूमकर कहा—"वल्लाह बेगम, तुम बड़ी अक्लमन्द औरत हो। इत्मीनान रक्खो—मैं ऐसा ही करूँगा। मगर तुम उस बदनसीब बानू से मिलती रहो। उसे तसल्ली दो—उसे खुश करो।"

बेगम ने बादशाह के बाहुपाश से छूटते हुए कहा—"जो हुक्म। मैं अपने बस भर कोशिश करूँगी।"

"तो अब ..."

"नहीं हुज़ूर, इस वक्त मेरी तबियत बहुत नासाज़ है, जाती हूँ आदाब।"

वह उसी तरह बिजली की भाँति कमरे से निकल गई। बादशाह मसनद पर लुढ़क कर आँखें बन्द किए कुछ सोचने लगे। इसी समय ख्वास ने आकर ज़मीन चूमकर कहा—"जहाँपनाह हुज़ूर, बड़ी बेगम ने दर्याफ्त किया है कि क्या हुज़ूर आराम फर्मा रहे हैं? एक निहायत ज़रूरी मसले पर हुज़ूर की राय लेनी है।" बादशाह ने उसी तरह आँखें बन्द किए हुए कहा—

"उन्हें यहीं भेज दे।"

ख्वास आदाब अर्ज़ करके चला गया।

१४

पिता, पुत्री और पुत्र

बड़ी बेगम बहुत उदास थी। वह धीरे से आकर थकी हुई-सी बादशाह के सामने एक चौकी पर बैठ गई, बादशाह ने घबराई हुई आवाज़ में कहा—"इस क़दर परेशान होने का क्या कारण है प्यारी बेटी?"

बेगम ने गुस्से भरी आवाज़ में कहा—"हुज़ूर, बेगम शाइस्ता ख़ाँ का मामला बहुत गहरा हो गया है और उस हरामज़ादी ने मेरी खुल्लम खुल्ला बदनामी की है। वह कहती है कि बड़ी बेगम अपने बाप की कुटनी है। (आँखों में आँसू भरकर) हुज़ूर, बेटी होकर मुझे आपके लिए यह काम करने पड़ते हैं, और रियाया की नज़रों में ज़लील होना पड़ता है। सोचिए तो, अगर रियाया और अमीर इसी तरह हमसे

बदस्तन होते रहे तो वह तख्त खोखला हो जायगा। मुझे बहुत
लग रहा है खतरा।"

"किस बात का बेगम?" बादशाह ने झुककर कुछ घबराई आव
से कहा।

"कि आप ही सल्तनत में एक तूफ़ान खड़ा होने वाला है!"

"इस डर का बाइस क्या है प्यारी बेगम?"

"हुज़ूर को शायद इन मामलों पर गौर करने की फ़ुर्सत ना
मिलती। मगर शाइस्ता खाँ को आप अच्छी तरह नहीं जानते,
साँप का बच्चा है, चोट खाकर बिना डँसे न रहेगा।"

"बेगम, उसकी औरत को किसी तरह समझा-बुझाकर कुछ
दो, मैं शाइस्ता खाँ को ठीक कर लूँगा।"

"नहीं हुज़ूर उसने जान दे देने का मुकम्मिल इरादा कर लिय
है और शाइस्ता खाँ ने पुरज़ोर हुज़ूर के खिलाफ़ बगावत का फ़ता
खड़ा कर दिया है।"

"बगावत का झंडा खड़ा किया है?"

"जी हाँ, और वह आफ़त का परकाला मीरजुमला—जिसे हुज़ू
ने इतनी इज़्ज़त बख्शी है, उन सबको उकसा रहा है। मैं अच्छी
समझा, कि वह औरंगज़ेब का गोइन्दा है। इसे फ़ौज देकर दक्खिन न
भेजिए, कन्धार जाने दीजिए। तोपखाने की बापसी का परवाना मंसूख
कर दीजिए।"

"नहीं बेगम, इस अम्र पर हमने बखूबी गौर कर लिया है। ऐसा
दानिशमन्द बूढ़ा और दूरन्देश आदमी इतनी बेवकूफ़ी कभी न करेगा
कि वह हमसे बगावत करके औरंगज़ेब से मिल जाय, इससे उसे कुछ
भी फ़ायदा न होगा।"

"हुज़ूर तो दरबार में दिन-दिन बढ़ते हुए बगावत के तूफ़ान की
कुछ भी परवा नहीं करते!"

"कौन-कौन इसमें शरीक है।"

"एक दो का नाम दूँ ?"

"मसलन—"

"खलील खाँ, जफ़र खाँ, शाइस्ता खाँ, मीर मुस्तफ़ा। और भी बहुत जिनकी औरतों की हुज़ूर ने अस्मत लूटी है।"

बादशाह क्रोध से थर-थर काँपने लगे। उन्होंने कहा—

"ख़बरदार बेगम, मेरे ही मुँह पर मेरी बदनामी न करो। मैंने तुम्हें और दारा को तमाम सल्तनत का मालिक बनाया है तो इसलिए नहीं, कि तुम मेरी इस तरह तौहीन करो।"

"हुज़ूर मैं तौहीन नहीं करती, सच्ची बात कहती हूँ। हुज़ूर का तख़्त डगमगा रहा है। एक आँधी आने वाली है और हुज़ूर बेख़बर हैं, आपको ख़बरदार करना मेरा फ़र्ज़ है।"

"तुम्हारा इरादा क्या है बेगम ?"

"आज के दरबार आम में जो कुछ खास कदम चले हैं उन पर एक बार फिर गौर कर लिया जाय।"

"अच्छी बात है। तुम क्या चाहती हो, वह साफ़-साफ़ कह सुनाओ।"

बेगम कुछ कहने की तैयारी कर रही थी कि नकीब ने आवाज़ लगाई कि वलीअहद आलमपनाह दाराशिकोह तशरीफ़ ला रहे हैं। यह सुनकर बेगम रुक गई। बादशाह ने कहा—

"अच्छा हुआ, दारा भी आ गया। अब सब बातों पर ठीक तौर पर सोच विचार कर लिया जायगा।"

दारा ने आकर पहिले ४० क़दम के फ़ासले से बादशाह को झुक कर तीन बार कोर्निश की, फिर एक कदम आगे बढ़ दुबारा सलाम किया। इसके बाद वह आगे बढ़कर बादशाह के पास आ खड़ा हुआ।

ज़ाहिरा तौर पर देखने में तो दारा ने पिता के प्रति इतनी श्रद्धा और सम्मान का भाव प्रकट किया था, परन्तु गुस्से से उसका चेहरा लाल हो रहा था और उसकी भौंहों में बल पड़े हुए थे। उसने एक

चार बादशाह की नजर बचाकर बहिन की ओर मतलबभरी नजर से देखा। बेगम ने एक इशारे से उसे समझा दिया कि वह शान्त-संयत बना रहे। इस पर दारा चुपचाप नीची गर्दन किए खड़ा हो गया।

बादशाह ने स्नेह, चिन्ता की दृष्टि से उसे देखकर कहा—"तुम भी बहुत मुतफक्रिक मालूम देते हो, आखिर ऐसी क्या बात है?"

"हुजूर, मैं कुछ भी अर्ज नहीं कर सकता।" दारा का कण्ठस्वर काँप रहा था और उसका क्रोध स्पष्ट हो रहा था।

बादशाह ने प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी ओर देख कर कहा—"ऐसी कौनसी बात है जिसने तुम्हें इस कदर परेशान कर रखा है?"

"सब कुछ नया है हुजूर, कयामत बपा होने वाली है।"

"तुमलोग हमेशा कयामत मुसीबत और झंझट के सपने देखा करते हो। मेरे बेटे, ठण्डे दिमाग से सल्तनत का काम-काज देखो ये झंझट तो होते ही रहते हैं। इतनी बड़ी सल्तनत योंही नहीं चलती। अभी तुम्हें मुद्दत तक इसका बोझ सिर पर उठाना है। इस कदर परेशान होने से तो नहीं चलेगा।"

दारा ने क्रोध दबा सकने में असमर्थ हो, जरा तेज स्वर में कहा—"हुजूर इस शमशीर पर हमेशा बागी बने रहते हैं दुश्मनों को सिर पर चढ़ाते हैं। नए-नए दुश्मन पैदा करते रहते हैं। मैं अकेला ही सब ठीक-ठाक कर सकता हूँ मगर हुजूर की चश्मपोशी कुछ करने नहीं देती।"

बादशाह दुख की वेदना खाकर कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर उन्होंने धीमे स्वर में कहा—

"सल्तनत की बेहतरी के लिए जो मैं ठीक समझता हूँ वह करता हूँ। मेरे प्यारे बेटे, तुम खूब जानते हो कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ और तुम्हारे लिए क्या-क्या कर रहा हूँ। ताजोतख्त तुम्हें मिले—यही मेरी आरजू है, और इसलिए मैंने अपने सब बेटों को दूर कर दिया

है। सिर्फ तुम्हीं को छाती से लगाए बैठा हूँ। तुम कितने लायक, फर्माबर्दार, जवान, हिम्मतवर, काबिल हो यह देखकर मेरी छाती फूल उठती है, फिर भी तुम मुझ पर ऐसी तोहमत लगाते हो कि जो बेटे को बाप पर नहीं लगानी चाहिए। फिर इसके सिवा मेरे बेटे! अभी तक मैं ही बादशाह हूँ।"

यह कहकर बादशाह कुछ देर चुप बैठे रहे। उनके होंठ फड़क रहे थे, और दिल में गुबार उठ रहा था। बेगम और दारा चुपचाप सिर नीचा किए बैठे सुन रहे थे।

बादशाह ने फिर कहना शुरू किया—

"जब तुम ग्यारह से नन्हे बच्चे थे—तब तुम्हारी जन्नतनशीन बेग-मों थीं, जिनकी मुहब्बत और खिदमत मैं जिन्दगीभर नहीं भूल सकता—तुम्हें आखिरी लम्हों में मेरी गोद में बैठा कर मरते मरते हँसकर मुझसे कहा था—'दीनो-दुनिया के बादशाह! मेरे मालिक! मेरे जाने का गम न करना। यह बेटा मैंने तुम्हें दिया है, तुम्हारी आँखों से इसकी मैंने आँखें बनाई हैं, तुम्हारे होठों से इसके होंठ रचे हैं। इसे मैंने अपना कलेजा दिया है। यह तुम्हारी असली तस्वीर है, इसे तुम अपने बाद बादशाह बनाना। यह मुल्क की हुकूमत ईमानदारी से करके मेरा और तुम्हारा नाम रोशन करेगा।'

"वह तुम्हें मेरे कदमों में डालकर मर गई। और मैंने तुम्हें उठाकर छाती से लगा लिया। खुदा और कुरान की कसम खाकर उस फरिश्ता-खसलत नेक बीबी की सर्द पेशानी को छूकर मैंने वादा किया था कि यही मेरा बेटा तख्तोताज का वारिस होगा और बेटे, उस बात को आज बाईस साल हो गए, मैं बराबर उस बात को पूरी करने की कोशिश में हूँ और ताज़ीस्त रहूँगा।"

बादशाह की जबान काँपने लगी और उनकी आँखों में आँसू आ गए। वे आगे न बोल सके।

दारा ने झुककर बादशाह के कदम चूमे, फिर उनका पल्ला आँखों से लगा लिया। बादशाह ने छोटे बच्चे की तरह दारा के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—"मेरे प्यारे बच्चे, अब तुम अपने बादशाह और बूढ़े बाप की कमज़ोरियों पर ऐसी कड़ी नज़र रखते हो? वह सामने देखो, जमुना के किनारे ताज खड़ा चाँदनी में किसी की इस्तकारी कर रहा है। जानते हो किसकी इस्तकारी कर रहा है? इसी बदनसीब तुम्हारे बूढ़े बाप की। उन पत्थरों के नीचे मेरी सबसे प्यारी चीज़ महफ़ूज़ रखी है। जबतक मैं वहाँ पहुँच कर आराम न करूँ—मेरे बच्चो, तुम लोग मेरी कमज़ोरियों का दरगुज़र करते चलो और मुस्तैदी से सल्तनत को सम्हालो। खुदा तुम्हें सुर्खरू करे।"

इतना कहकर बादशाह चुप हो गए। वे मसनद पर लुढ़क गए। दारा और जहाँआरा का गुस्सा हवा हो गया था। वे चुपचाप नीचा सिर किए अभी तक बैठे थे। कमरे में सन्नाटा था। दारा ने सिर उठाकर धीमे स्वर में कहा—

"*जहाँपनाह का आदिम को क्या हुक्म है? मुझे जो हुक्म होगा बसरो-चश्म बजा लाऊँगा।*"

बादशाह ने कहना प्रारम्भ किया—"मीरजुमला ने जो दक्खन-फ़तह की बात कही है वह मेरे जँच गई। बेटे, तुम भी गौर करोगे तो समझ जाओगे। दुआरा और काबुल की बंजर और पथरीली जगह, कन्धार और गरीब रिआया, ऊबड़-खाबड़ और तकलीफ़देह रास्ता, हमारी मुश्किलों को बढ़ाता है। कन्धार की फ़तह से हम फ़ायदा भी नहीं उठा सकते, फ़ौज पर जो खर्चा होगा वह भी न वसूल कर सकेंगे—*जैसा* अब तक हुआ है। इसके अतिरिक्त दक्खन मुल्क *हिन्दुस्तान* का ही एक *हिस्सा* है। जब तक वहाँ हमारा अमलदरामद नहीं हो जाता—हम सही मानों में सारे हिन्द नहीं कहला सकते। इसके अलावा वहाँ के समन्दर के किनारे चीन, जापान, योरोप और अरब के व्यापार के

सुहाते हैं। उन्हें कब्जे में करना न सिर्फ इसीलिए जरूरी है कि बेशुमार दौलत उनके जरिये व्यापारी नुक्ते से हम पैदा कर सकते हैं, बल्कि उन पर मुल्क की हिफाजत के ख्याल से भी नजर रखना जरूरी है। जब इन मुल्कों के बाशिन्दे आज व्यापार के लिए आते हैं तो कल वे जहाजों में सिपाहियों और तोपों को भी भर कर ला सकते हैं, और ऐसी हालत में अगर वहाँ हमारा बन्दोबस्त सही नहीं है—तो उन्हें रोकना मुमकिन ही नहीं। यह बड़ी भारी दूरन्देशी की बात है। तुमने फिरंगियों को देखा है किस कदर फसादी तबियत के और लड़ाकू आदमी हैं। अदब करना और डरना तो उन्होंने सीखा ही नहीं। इन तमाम बातों के अलावा वहाँ गोलकुण्डा, बीजापुर की सरजमीन में बेशुमार कीमती पत्थरों की खानें, वहाँ के शहरों में बेशुमार दौलत, और आदमियों में जबरदस्त काम करने की ताकत है। बस, एक बार अगर दक्खन पूरे तौर पर शाही अमल में आ जाय—तो मुगल तख्त की जड़ें पाताल तक पहुँच जायँगी। तुम और तुम्हारी औलाद पुश्त दर-पुश्त मुल्क पर हुकूमत कर सकेगी।"

इतना कहकर बादशाह कुछ देर चुप हो गए। वे गौर से दारा के चेहरे का उतार-चढ़ाव देखते रहे। दारा ने कहा—

"मैं हुजूर की बात को तो नहीं काट सकता। हुजूर बहुत दूर की बातें सोच रहे हैं। मगर फिलहाल तख्त पर जो खतरा हो रहा है उसका क्या होगा?"

"कौन सा खतरा मेरे बेटे?"

"दरबार के सब अमीर भीतर ही भीतर हम से खिलाफ हो रहे हैं, मौका ढूँढ कर जगह जगह बाकायदा मशवरा करते हैं। शुजा, औरंगजेब और मुराद अपने-अपने सूबों में अमीरों को मुट्ठी में करने और नमकहरामी कराने पर आमादा हैं। फिर हुजूर के कारनामों से सब अमीर— और मैं हुजूर से उन बातों की कोई चर्चा नहीं करना चाहता, जिन्हें हुजूर खूब जानते हैं।"

"जाने दो उन बातों को। ये अमीर लोग टुकड़े के लोभी कुत्ते हैं। उन्हें वश में रखो। दारा, मैं तुम्हें चेताए देता हूँ कि इन अमीरों से तुम अपने बचाव का भी ठीक करो। मैं बराबर शिकायत सुनता हूँ कि तुम उनकी हिजो करते रहते हो।"

दारा ने बात काट कर कहा—"हुज़ूर, मैं किसी की परवा नहीं करता। मुझे हुज़ूर मौका दें तो मैं बता दूँ कि इन बागी अमीरों का किस तरह ठीक किया जा सकता है।"

बादशाह ने नर्मी से कहा—"नहीं मेरे बेटे, यह ठीक खयाल नहीं—"

बेगम ने बीच ही में बात काट कर कहा—"खैर, तो हुज़ूर ने क्या मीरजुमला को दक्खन भेजने का मुकम्मिल इरादा कर ही लिया है?"

"यह तो तुमलोग सोच लो। मैंने जो दलीलें दी हैं वह तो तुमने सुन ही लीं।"

दारा ने अब उतावली से कहा—

"तो हुज़ूर, मेरी एक दर्ख्वास्त है—"

"वह क्या?"

"मीरजुमला को कुछ शर्तों की पाबन्दी से दक्खन भेजा जाय।"

"वह शर्तें क्या होंगी?"

"एक तो यह—कि औरंगज़ेब किसी मामले में दस्तन्दाज़ी न करे—"

"अच्छा दूसरी?"

"वह दौलताबाद से बाहर न जाय—"

"और तीसरी?—"

"वह अपने सूबे का इन्तज़ाम करे—किसी लड़ाई में शरीक न हो—"

"बस?"

"यह भी कि मीरजुमला अपने बाल-बच्चों, मालमता तथा रिश्तेदारों को आगरे में छोड़ जाय—"

"यह शर्त तो बहुत कड़ी है। मीरजुमला मामूली आदमी नहीं—मगर खैर, मैं उससे तुम्हारी तसल्ली के लिए ये शर्तें मंजूर करा लूँगा।"

दारा ने कहा—"तो मुझे उसे दक्खन फौज देकर भेजने में कोई उज्र नहीं है।"

बादशाह ने खाँ की ओर कहा—

"तो तुम बहुत जल्द दरबारे खिलअत का इन्तजाम करो। और तब तक अमीर मीरजुमला को रोक रखो।"

"बहुत खूब—"

"और तुम प्यारी बेगम"—बादशाह ने जहाँआरा की ओर देख कर कहा—"दरबार के मुनासिब इन्तजाम में दारा की मदद करो।"

"जो इर्शाद"—दोनों बादशाह को झुककर सलाम करके चले गए। बादशाह गहरे सोच में डूब गए।

: १५ :

बेगम की सवारी

दिन ढल गया था और ढलते हुए सूरज की सुनहरी किरणें दिल्ली के बाजार में एक नई रौनक पैदा कर रही थीं। अभी नई दिल्ली बन रही थी। आगरे की गर्मी से ऊब कर बादशाह शाहजहाँ ने यमुना के किनारे शाहजहानाबाद नाम नया नगर बसाया था। लाल किला और जामा मस्जिद बन चुकी थी और उनकी भव्य छवि दर्शकों के मन पर स्थायी प्रभाव डालती थी। चौक बाजार में सभी अमीर उमराओं की हवेलियाँ खड़ी हो गई थीं। इस नए शहर का नाम शाहजहानाबाद रखा गया था, परन्तु मकानों से पुरानी दिल्ली की बस्ती अभी तक बिल्कुल नहीं उजड़ चुकी थी, बल्कि कहना चाहिए कि इस शाहजहानाबाद के लिए बहुत-सा मलबा सामान पुरानी

दिल्ली के महमाल के खंडहरों से लिया गया था, जो पुराने किले से होकर लाल और कुतुबमीनार तक फैले हुए थे।

नदी की दिशा को छोड़कर बाकी तीनों ओर सुरक्षा के लिए पक्की पत्थर की शहरपनाह बन चुकी थी, जिसमें बारह द्वार और सौ सौ कदमों पर बुर्ज बने हुए थे। शहरपनाह के बाहर ४॥ फुट ऊँचा कच्चा पुश्ता था। परन्तु खाई नहीं थी। सिर्फ सलीमगढ़ का किला बीच जमुना में था जो एक विशाल टापू प्रतीत होता था और जिसे बारह खम्भों वाला पुख्ता पुल लाल किले से जोड़ता था। अभी इस नगर को बसे तीस ही बरस हुए थे, फिर भी यह मुगल साम्राज्य की राजधानी के अनुरूप शोभायमान नगरी की सुषमा धारण करता था।

शहरपनाह नगर और किला दोनों को घेरे थी। यदि शहर की उन बाहरी बस्तियों को—जो दूर तक लाहौरी दर्वाजे तक चली गयी थीं और उस पुरानी दिल्ली की बस्तियों को जो चारों ओर दक्षिण पश्चिम भाग में फैली थीं, मिला लिया जाय तो जो रेखा शहर के बीचोंबीच खींची जाती, वह साढ़े चार या पाँच मील लम्बी होती। बागात का विवरण पृथक है, जो सब शाहजादों, अमीरों और शाहजादियों ने पृथक-पृथक लगाए थे।

शाही महलसरा और मकान किले में थे। किला भी लगभग अर्धचन्द्राकार था, इसकी तली में जमुना नदी बह रही थी। परन्तु किले की दीवार और जमुना नदी के बीच बड़ा रेतीला मैदान था जिसमें हाथियों की लड़ाई दिखाई जाती थी। यहीं खड़े होकर सरदार, अमीर और हिन्दू राजा भी झरोखे में खड़े बादशाह के दर्शन किया करते थीं। किले की चहारदीवारी भी पुराने ढङ्ग के गोल बुर्जों की वैसी ही थी जैसी शहरपनाह की दीवार थी। यह ईंटों और लाल पत्थर की बनी हुई थी। इस कारण शहरपनाह की अपेक्षा इसकी शोभा अधिक थी। शहरपनाह की अपेक्षा यह ऊँची और मजबूत भी

थी, उस पर छोटी-छोटी तोपें चढ़ी हुई थीं, जिनका मुँह शहर की ओर था। नदी की ओर छोड़ कर किले की सब ओर गहरी खाई थी जो यमुना के पानी से भरी हुई थी। इसके बाँध खूब मजबूत थे और पत्थर के बने थे। खाई के जल में मछलियाँ बहुत थीं।

खाई के पास ही बहुत बड़ा बाग था, जिसमें भाँति-भाँति के फूल लगे थे। किले की लाल रङ्ग की सुन्दर इमारत के आगे सुशोभित यह बाग अपूर्व शोभा विस्तार करता था। इसके सामने एक शाही चौक था जिसके एक ओर किले का दर्वाज़ा था। दूसरी ओर शहर के दो बड़े-बड़े बाजार आकर समाप्त होते थे।

किले पर का गारा, रजवाड़े और अमीर पहरा चौकी देते थे, उनके डेरे तम्बू खेमे इसी मैदान में लगे हुए थे। इनका पहरा केवल किले के बाहर ही था। किले के भीतर उमरा और मनसबदारों का पहरा होता था। इसके सामने ही शाही अस्तबल था, जिसके अनेक अच्छे घोड़े मैदान में फिराए जा रहे थे, इसी मैदान के सामने ही अनिक इधर 'गूदड़ी' लगती थी, जिसमें अनेक हिन्दू और मुसलमान ज्योतिषी, नजूमी अपनी अपनी किताबें खोले और धूप में अपनी मैली शतरंजी बिछाए बैठे थे। ग्रहों के चित्र और रमल फेंकने के पासे उनके सामने पड़े रहते थे। बहुत-सी मूर्ख स्त्रियाँ सिर से पैर तक बुर्का ओढ़े या चादर में शरीर को लपेटे, उनके निकट जाती थीं और वे उनके हाथ-मुँह को भाँति भाँति देख पाटी पर लकीरें खींचते तथा उँगलियों की पोर पर गिनते। उनका भविष्य बताकर पैसे ठग रहे थे। इन्हीं ठगों में एक दोगला पार्चुगीज बड़ी ही शान्त मुद्रा में आसीन बिछाए बैठा था, इसके पास भी पुरुषों की भारी भीड़ जमी थी पर वास्तव में वह गोरा धूर्त बिल्कुल अपढ़ था और उसके पास एक पुराना जहाजी दिग्दर्शक यन्त्र था और एक रोमन कैथोलिक सचित्र प्रार्थना पुस्तक थी। वह बड़े ही इत्मीनान से कह रहा था—"योरोप में ऐसे ही ग्रहों के चित्र होते हैं।"

पीछे जिन दो बाजारों की यहाँ चर्चा हुई है, जो किले के सामने मैदान में आकर मिले थे, एक सीधा और प्रशस्त बाजार चाँदनी चौक था, जो किले से लगभग पच्चीस तीस कदम के अंतर से आरम्भ होकर सीधा पश्चिम दिशा में लाहौरी दरवाजे तक चला जाता था। बाजार के दोनों ओर महराबदार दूकानें थीं जो ईंटों की बनी थीं तथा एक मंजिला ही थीं। इन दूकानों के बरामदे अलग-अलग थे और इनके बीच में दीवारें थीं। यहीं बैठकर व्यापारी अपने-अपने ग्राहकों को पटाते थे, और माल असबाब दिखाते थे। बरामदों के पीछे दूकान के भीतरी भाग में माल असबाब रखा था। तथा रात को बरामदे का सामान भी उठाकर वहीं रख दिया जाता था। इनके ऊपर व्यापारियों के रहने के घर थे जो सुन्दर प्रतीत होते थे।

नगर के गली-कूचे में मनसबदारों, हाकिमों और धनी व्यापारियों की हवेलियाँ थीं। जो बड़े-बड़े सुरक्षा में बनी हुई थीं। बहुत-सी हवेलियों में चौक और बगीचे थे। बड़े-बड़े मकानों के आसपास बहुत मकान घास-फूस के थे, जिनमें खिदमतगार, नफर, नानबाई आदि रहते थे।

बड़े-बड़े अमीरों के मकान नदी के किनारे शहर के बाहर थे जो खूब कुशादा, ठण्डे, हवादार और आरामदेह थे। उनमें बाग, पेड़, हौज और सायबान थे तथा छोटे-छोटे फव्वारे और तहखाने भी थे। उनमें बड़े बड़े पंखे लगे हुए थे, जिनमें खस की टट्टियाँ लगी थीं। उनपर गुलाम नौकर पानी छिड़क रहे थे।

बाजार की दूकानों में जिन्सें भरी थीं, पश्मीना, कमख्वाब, जरीदार मखमलें और रेशमी कपड़े भरे थे। एक बाजार तो सिर्फ मेवों ही का था, जिसमें ईरान, समरकन्द, बलख, बुखारा के मेवे-बादाम, पिस्ता, किशमिश बेर, शफ्तालू, और भाँति भाँति के सूखे फल और रूई की तहों में लिपटे बढ़िया अंगूर, नाशपाती, सेब और सर्दे भरे पड़े थे। नानबाई, हलवाई, कबाबियों की दूकानें भरी-भरी थीं। चिड़िया

बहुतायत से बिक रही थी। मछली बाजार में मछलियों की भरमार थी। अमीरों के गुलाम खरा-खरा सस्ता माल ले अपने अपने मालिकों के लिए सौदे खरीद रहे थे। बाजार में ऊँट, घोड़े, बहली, रथ, तामझाम पालकी और मियानों पर अमीर लोग आ जा रहे थे। चित्रकार, नक्काश, जड़िए, मीनाकार, रंगरेज और मनिहार अपने अपने कामों में लगे थे।

इस वक्त चाँदनी चौक में एक खास चहल-पहल नज़र आ रही थी। इस समय बहुत से बरकन्दाज, प्यादे, भिश्ती, और झाड़ूबर्दार फुर्ती से अपने-अपने काम में लगे हुए थे। बरकंदाज और सवार लोगों की भीड़ को हटाकर रास्ता साफ कर रहे थे। झाड़ूबर्दार सड़कों का कूड़ा कर्कट हटा रहे थे। दूकानदार चौकन्ने होकर चौकस अपनी अपनी दूकानों को आकर्षक रीति पर सजाए उत्सुक बैठे थे। इसका कारण यह था कि आज बेगम की सवारी किले से इधर आ रही थी।

बेगम एक पालकी पर सवार थीं। जिस पर एक कीमती कारचोब का परदा पड़ा था, जिसमें जगह जगह जवाहरात टँके थे। पालकी के चारों ओर खासाबरदार मामलूक और चोबदार दुशाले पालकी का घेरा डाले चल रहे थे। वे जिसे सामने पाते उसी को धकेल कर एक ओर कर देते थे। बहुत से खानदानी गुलाम सुनहरी रुपहली छड़ें हाथों में लिए आगे बढ़ते हटो बचो, हटो बचो, चिल्लाते जा रहे थे। उनके आगे आगे भिश्ती मशकों से छिड़कते हुए सड़क पर पानी का छिड़काव करते जाते थे। मोरछलों और पंखों की मूठ सोने-चाँदी की जड़ाऊ थी। पालकी के साथ सैकड़ों बाँदियाँ सुनहरी पोशाकों में सजती हुई सुगन्ध लिए चल रही थीं। सबसे आगे दो सौ तातारी बाँदियाँ नंगी तलवारें हाथ में लिए, तीर कमान कन्धे पर कसे, सीना उभारे अकड़ कर चल रही थीं और उनके पीछे एक मनसबदार अपने घुड़सवार

रिसाले के साथ बढ़ रहा था। वह मनसबदार एक अल्पवयस्क अति सुन्दर युवक था। उसका रंग अत्यन्त गोरा, आँखें काली और चमकदार तथा बाल घुँघरवाले थे। वह बहुमूल्य रत्नजटित पोशाक पहिने था—और इठलाता हुआ-सा अपने रिसाले के आगे-आगे चल रहा था। उसका घोड़ा भी अत्यन्त चञ्चल और बहुमूल्य था। वास्तव में यह तेजस्वी सुन्दर मनसबदार नजाबत खाँ था, जो शाहे बलख का भतीजा और दुलारे का शाहजादा मशहूर था और बादशाह शाहजहाँ का कृपापात्र मनसबदार था।

इस समय बहुत से अमीर उमरा चाँदनी चौक की सैर को निकले थे। इन अमीरों के ठाठ भी निराले थे। किसी के साथ दस बीस, किसी के साथ दस से भी अधिक नौकर चाकर गुलाम पैदल दौड़ रहे थे। अमीर घोड़े पर सवार ठुमकते, धीरे-धीरे पान कचरते हुए अकड़ कर चल रहे थे। कुछ चलते-चलते ही पेचवान पर अम्बरी तम्बाकू का कश खींच रहे थे। साथ-साथ सवार गंगा जमनी काम की फर्शी हाथों हाथ लिए दौड़ रहे थे। गुलामों में किसी के पास पानदान, किसी के पास उगालदान, किसी के पास इत्रदान था। कोई सरदार की जड़ाऊ तलवार लिए चल रहा था और इस प्रकार अमीर का बोझ हल्का कर रहा था। परन्तु ये अमीर चाहे जिस शान से जा रहे हों, ज्योंही बेगम की पालकी उनकी नजर में पड़ती उनकी सब शान हवा हो जाती। जो जहाँ होता तुरन्त घोड़े से उतर कर सड़क के एक कोने में अपने आदमियों सहित हाथ जोड़कर अदब से खड़ा हो जाता और पालकी की ओर मुँह करके तीन बार कोर्निश करता। जिसकी सूचना तुरन्त बेगम को पालकी के भीतर दे दी जाती।

इस प्रकार सूचना देने के लिए जो तरुण सरदार पालकी के साथ चल रहा था वह एक प्रकार से किशोर वय का था। अभी पूरा यौवन उसके मुख पर प्रकट नहीं हुआ था। वह एक सुकुमार सुन्दर और सजीला किशोर था। वास्तव में वह शाहजादी की उस्तानी का बेटा

था जिसका बचपन शाहजादी के साथ ही महलसरा में बीता था और जिसे प्यार से शाही हरम में दूल्हाभाई कहते थे। यद्यपि इसकी हैसियत एक सेवक ही की थी, पर शाहजादी की कृपा दृष्टि से वह ढीठ हो गया था और अपने को किसी शाहजादे से कम न समझता था। उसके सब ठाठबाट भी शाहजादों ही के समान थे।

धीरे-धीरे सवारी आगे बढ़ती जा रही थी। इसी समय सामने से एक हिन्दू सरदार की सवारी आ गई। वह हिन्दू सरदार बूँदी का राजा राव छत्रसाल था। इसकी अवस्था तीस से अधिक न होगी। उसका उज्ज्वल श्यामल मुख, मूछों की पतली ऐंठी हुई रेखा, बड़ी-बड़ी काली आँखें, गठीला शरीर, बाँकी छटा देखते ही बनती थी। वह कमर में दो तलवारें बाँधे था। और उसके साथ पचासों सवार, पैदल सिपाही और नौकर-चाकर सेवक और मुसाहिब चल रहे थे। दिल्ली में रहने वाले दरबारी उमरावों में इसकी छटा ही निराली थी। ज्यों ही बेगम की सवारी उसकी दृष्टि में पड़ी, वह रास्ते से एक ओर हटकर घोड़े से उतर कर सड़क के एक कोने में दो सौ कदम के अंतर से खड़ा हो गया—और ज्योंही बेगम की सवारी उसके निकट आई, उसने ज़मीन तक झुककर तीन बार कोर्निश की। नकीब ने पुकार लगाई और दूल्हा भाई ने बेगम को इसकी सूचना दी। शाहजादी ने तुरन्त अपनी सवारी आगे बढ़ना रोक दिया और एक रत्नखचित कमख़ाब की थैली में रखकर पान का बीड़ा उसके पास भेज कर कहलाया—कि वह भी सवारी के साथ रहकर उसे रौनक बख्शें। राव छत्रसाल ने फिर पालकी की ओर रुख करके सलाम किया, पान का बीड़ा आदरपूर्वक लिया और दो कदम पीछे हटकर खड़ा हो गया।

सवारी आगे बढ़ी और वह हिन्दू सरदार भी पालकी के पीछे-पीछे अपने सवारों के साथ चला। दूल्हा भाई ने बेगम को इस बात की सूचना दे दी।

परन्तु जो मनसबदार पालकी के साथ-साथ चल रहा था उसकी आँखों में इस हिन्दू सरदार को देखते ही खून उतर आया। परन्तु इस तरुण राजा ने उसकी तनिक भी परवाह नहीं की। अपने घोड़े को एड़ देकर और चार कदम आगे बढ़ वह पालकी के पीछे-पीछे चलने लगा।

किला और शहर के बीच—आज जहाँ दिल्ली का रेलवे स्टेशन और कम्पनी बाग है, वहाँ इस बेगम ने एक सराय बनवाई थी। यह सराय उस समय भारतवर्ष भर में श्रेष्ठ इमारत थी। इसकी सारी इमारतें दुमंज़िली थीं और ऊपर बड़े-बड़े आलीशान सुसज्जित कमरे बने थे। जिनमें देश-देश के लोग ठहरते और तफ़रीह करते थे। सराय में नहाने के लिए पक्के हौज, नल और बड़े-बड़े बावर्चीख़ाने बने थे इस सराय के इन्तज़ाम के लिए बेगम ने योग्य कर्मचारी नियुक्त किए थे। इस समय तक भी सराय समूची बनकर तैयार नहीं हो पाई थी और हज़ारों कारीगर मिस्त्री उसमें भिन्न-भिन्न काम कर रहे थे।

इस वक्त बेगम की सवारी इसी सराय की ओर आ रही थी। इसकी सूचना सराय के दारोगा को भी मिल चुकी थी और वहाँ भी बेगम की सवारी की धूमधाम मची थी। सब राह-बाट साफ़ करके छिड़काव किए गए थे। बहुत से लोग, दास-दासी अपने-अपने काम में लगे थे। इस समय सराय का वह भाग जहाँ बेगम तशरीफ़ रखने वाली थीं और जहाँ एक खूबसूरत छोटा-सा बगीचा था, भली भाँति सजाया गया था। पहरे पर्दे का वहाँ मुकम्मिल इन्तज़ाम कर दिया गया था। बगीचे के बीच संगमरमर की बारहदरी थी। वहाँ बेगम की सवारी ठहरी।

शाम की भीनी सुगन्ध हवा में भर रही थी। बाग के माली ने सारी बारहदरी को फूलों से सजाया था। सुदूर शाहजहाँ आज पत

इसी बारहदरी में आराम और तफरीह करना चाहती थीं। फर्राशों और बाँदियों ने मसनद, चाँदनी और गाव तकिए लगा दिए। बेगम मसनद पर लुढ़क गईं। कुछ देर आराम करने पर बेगम ने ख्वाजा सरा को हुक्म दिया—'यह हिन्दू राजा जो सवारी के साथ है उसे हुक्म दो कि हमारे यहाँ मुकीम रहने तक अपने पहरे चौकी रखे और अमीर नजाबत खाँ नवाब के बाहरी हिस्से में अपने सिपाहियों सहित चला जाय।

शाहजादी का हुक्म दोनों उमरावों को पहुँचा दिया गया। दोनों ने बेरहमी निगाहों से एक दूसरे को देखा। तलवार की मूठ पर दोनों का हाथ गया। और क्षण भर दोनों एक दूसरे को खूनी नजरों से देखने लगे। नजाबत खाँ ने बालिश्त भर तलवार म्यान से खींच ली और गुस्से भरी आवाज में शेर की तरह गुर्रा कर कहा—"खुदा की कसम, मैं यह हरगिज नहीं बर्दाश्त कर सकता कि एक काफिर को मुसलमान के बराबर रुतबा दिया जाय। मैं चाहता हूँ कि इसी वक्त तेरे दो टुकड़े करके तेरा गोश्त कुत्तों को खिला दूँ।"

"चाहता तो मैं भी यही हूँ कि इसी वक्त तुम्हारा सर भुट्टे-सा उड़ा दूँ। मगर बेहतर यही है कि अभी आप जनाब शाहजादा नजाबत अलीशान बहादुर, चुपचाप अपनी मोंछें उठाये उठाये दफा हो जाएँ जैसा कि हुजूर शाहजादी का हुक्म हुआ है, और सुबह तक भी आप के वही इरादे और दमखम रहे तो फिर हम दोनों को अपने-अपने इरादे पूरा करने की बहुत गुंजाइश है।" नजाबत खाँ ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। वह गुस्से से दाँत चबाता हुआ चला गया। राव दुलपाल तनिक हटकर अपने घोड़े पर बैठ गया।

परन्तु जो मनसबदार पालकी के साथ-साथ चल रहा था उसकी आँखों में इस हिन्दू सरदार को देखते ही खून उतर आया। परन्तु इस तरुण राजा ने उसकी तनिक भी परवाह नहीं की। अपने घोड़े को एड़ देकर और चार कदम आगे बढ़ वह पालकी के पीछे-पीछे चलने लगा।

किला और शहर के बीच—आज जहाँ दिल्ली का रेलवे स्टेशन और कम्पनी बाग है, वहाँ इस बेगम ने एक सराय बनवाई थी। वह सराय उस समय भारतवर्ष भर में श्रेष्ठ इमारत थी। इसकी सारी इमारतें दुमंजिली थीं और ऊपर बड़े-बड़े आलीशान सुसज्जित कमरे बने थे। जिसमें देश-देश के लोग ठहरते और सफरीह करते थे। सराय में नहाने के लिए पक्के हौज, नल और बड़े-बड़े बावर्चीखाने बने थे इस सराय के इन्तज़ाम के लिए बेगम ने योग्य कर्मचारी नियुक्त किए थे। इस समय तक भी सराय सम्पूर्ण बनकर तैयार नहीं हो पाई थी और हजारों कारीगर मिस्त्री उसमें भिन्न-भिन्न काम कर रहे थे।

इस वक्त बेगम की सवारी इसी सराय की ओर आ रही थी। इसकी सूचना सराय के दारोगा को भी मिल चुकी थी और वहाँ भी बेगम की अवाई की धूमधाम मची थी। सब राह-बाट साफ करके छिड़काव किए गए थे। बहुत से बाजे, ठाठ-बाठी अपने-अपने काम में लगे थे। इस समय सराय का वह भाग जहाँ बेगम तशरीफ रखने वाली थीं और वहाँ एक खूबसूरत छोटा-सा बगीचा था। महीनों में लगाया गया था। पहले पर्दे का वहाँ मुकम्मिल इन्तज़ाम कर दिया गया था। बगीचे के बीच संगेमरमर की बारहदरी थी। वहाँ बेगम की सवारी उतरी।

शाम की भीनी सुगन्ध हवा में भर रही थी। बाग के माली ने सारी बारहदरी को फूलों से सजाया था। हुजूर शाहजादी आज एक

इसी बारहदरी में आराम और तफरीह करना चाहती थीं। फर्राशों और बाँदियों ने मसनद, चाँदनी और गाव तकिए लगा दिए। बेगम मसनद पर लुढ़क गईं। कुछ देर आराम करने पर बेगम ने दूसरा खोजा को हुक्म दिया—'वह हिन्दू राजा जो सवारी के साथ है उसे हुक्म दो कि हमारे यहाँ मुकीम रहने तक अपने पहरे चौकी रखे और अमीर नजाबत खाँ उद्यान के बाहरी हिस्से में अपने सिपाहियों सहित चला जाय।

शाहजादी का हुक्म दोनों उमरावों को पहुँचा दिया गया। दोनों दोनों ने भेदभरी निगाहों से एक दूसरे को देखा। तलवार की मूठ पर दोनों का हाथ गया। और क्षण भर दोनों एक दूसरे को खूनी नजरों से देखने लगे। नजाबत खाँ ने आखिरकार तलवार म्यान से खींच ली और गुस्से भरी आवाज में शेर की तरह गुर्रा कर कहा—"खुदा की कसम, मैं यह हरगिज नहीं बर्दाश्त कर सकता कि एक काफिर को मुसलमान के बराबर रुतबा दिया जाय। मैं चाहता हूँ कि इसी वक्त तेरे दो टुकड़े करके तेरा गोश्त कुत्तों को खिला दूँ।"

"चाहता तो मैं भी यही हूँ कि इसी वक्त तुम्हारा सर भुट्टे-सा उड़ा दूँ। मगर बेहतर यही है कि अभी आप जनाब शाहजादा नजाबत आलीशान बहादुर, चुपचाप अपनी नौकरी उसके ठण्डे बजा लाएँ जैसा कि हुजूर शाहजादी का हुक्म हुआ है, और हुजूर जब भी आप के यही इरादे और कायम रहे तो फिर हम दोनों को अपने-अपने इरादे पूरा करने को बहुत गुंजाइश है।" नजाबत खाँ ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। वह गुस्से से होठ चबाता हुआ चला गया। राव छत्रसाल तनिक हटकर अपने घोड़े पर बैठ गया।

—:०:—

: १६

बेगम की बारहदरी

चाँदनी रात थी और बारहदरी के बाहरी चमन में शाहजादी अपनी खास बाँदियों के बीच मसनद पर पड़ी अपनी प्रिय अंगूरी शराब पी रही थी। यों तो उसके लिए फारस, कश्मीर और काबुल से कीमती शीराजी और इस्तंबोल मँगाई जाती थी, परन्तु उसकी अपनी शौक की प्रिय वस्तु यह थी—जो खास उसी की नजरों के सामने अंगूर में गुलाब और बहुत सी मेवाएँ डाल कर बनाई जाती थी। यह अति सुगन्धित और स्वादिष्ट होती थी और बेगम जब खुश होती—इस शराब के दौर पर दौर चढ़ाती थी।

आज वह खुश तो न थी। बहुत सी चिन्ताएँ उसके मस्तिष्क को परेशान कर रही थीं। यों तो इतनी बड़ी मुगल सल्तनत की राजनीति में वह सक्रिय भाग लेती थी, उसी का सर दर्द थोड़ा न था। परन्तु इस समय तो उसे अपनी ही चिन्ता ने आ घेरा था। इसी से घबरा कर वह किले के भारी वातावरण को छोड़ यहाँ चली आई थी।

अकबर बादशाह के समय ही से यह दस्तूर चला आ रहा था कि मुगल बादशाहों के खानदान की शाहजादियाँ शादी नहीं कर पाती थीं, इससे अनेक बुराइयाँ पैदा होती रहतीं और मुगल हरम का वातावरण हमेशा दूषित रहता था।

परन्तु दारा शाहजादी का विवाह नजाबत खाँ से करने की इच्छा प्रकट कर चुका था। नजाबत खाँ मलक का शाहजादा था, सुन्दर और जवान था। वह शाहजादी को प्रेम भी करता था। बहुत दिन से मेल-मिलाप और मुगल खानदान में बात-चीत चली आती थी।

वह चाहता था कि यदि दोनों खानदानों में रिश्ता हो जाय तो यह पुरानी शत्रुता भी जाती रहे। परन्तु इस शादी में बहुत बाधायें थीं। प्रथम तो बादशाह ही यह शादी करने को राजी नहीं होते थे। उन्हें उनके साले शाइस्ता खाँ ने समझा दिया था कि यदि यह शादी कर दी गई तो अवश्य ही नजाबत खाँ को शाहजादों का दर्जा देना पड़ेगा। जब कि इस समय वे चाकर से अधिक दर्जा नहीं रखते हैं। फिर शाहे बलख से लड़ने के मंसूबे भी अभी थे और इसके राजनैतिक कारण बने ही हुए थे। परन्तु इनकी सब से बड़ी बाधा यह थी कि शाहजादी उस हिन्दू राजा बूँदी के छत्रसाल को चाहती थी। उन दिनों राजपूतों से मुगल खानदान में रिश्ते होते थे। अभी तक अनेक राजाओं की बेटियाँ मुगल हरम में आई थीं, परन्तु कोई मुगल शाहजादी किसी राजपूत के घर नहीं गई थी। अब एक जिम्मेदार राजपूत सरदार का खुल्लम-खुल्ला शादी कर के रनवास में एक शाहजादी को ले जाना बहुत ही कठिन और अव्यवहार्य था, फिर मुगल अदब कायदे तो ऐसे थे कि बड़े-से-बड़े हिन्दू राजा को मुगल शाहजादियों के सामने भी उसी तरह झुकना पड़ता था जैसे बादशाह के सामने। ऐसी हालत में इन शादियों से मुगल रुआब में भी कमी आ जायगी, ऐसा भी सोचा जाता था। परन्तु प्रीत की कटारी का घाव जब लग जाता है तो इन सब बातों पर फिर विचार नहीं किया जाता। शाहजादी इस राजपूत के प्रेम में दीवानी थी। और यह बात नजाबत खाँ और छत्रसाल दोनों ही जानते थे, इसी से वे एक दूसरे को खूनी आँखों से देखते थे।

इसी मामले में एक तीसरा खिलाड़ी भी था। वह था दुलाय, बेगम की उस्तानी का लड़का, वह बेगम के साथ बचपन में खेला था और शायद अभी बेगम से उम्र में कुछ ही कम था। परन्तु बेगम की मुहब्बत का दम भरता था और अपने को शाहजादे से कम न समझता था। वह इतना मूर्ख था कि शाहजादी के विनोद और कृपाओं का वह

प्यार की नज़र से देखता था। वह सोचा करता था कि बेगम से शादी कर लेने पर सम्भव है वही बादशाह बन जाय। कभी-कभी वह डींगें भी हाँकता था और उसकी खिल्ली भी बहुत होती थी। यहाँ उसका एक उदाहरण दिया जाता है।

शाहज़ादी ने उसे खानज़ादा का खिताब दिया था और उसकी सिफ़ारिश से उसे अलम और शाही मरातिब रखने का अधिकार दे दिया था, तथा उसे शाही खिदमतगारों की भाँति पदवी देकर सवारों का सरदार बना दिया था। एक दिन वह बेगम के महल को जा रहा था कि सामने से महावत खाँ खिदमतगार आते मिल गए। जब वे दोनों पास-पास से गुज़रे, तो जुलूस के सैनिकों में झगड़ा हो गया। उधर महावत खाँ ने उसके झण्डे को देखा तो अपना अलम तह कर लिया और बिना ही झण्डे के शाही हुज़ूर में जा पहुँचा। जब बादशाह को इसकी सूचना मिली, तो उसने इसका कारण पूछा। महावत खाँ ने कहा—"हुज़ूर जहाँपनाह, हमारा समय तो बीत चुका। अब तो मतरब अलम उठाते हैं।" जब बादशाह को सब बातें मालूम हुईं तो क्रोध में आकर उन्होंने खानज़ादा साहेब का अलम छुड़वा दिया। खानज़ादा ने शाहज़ादी के सामने बहुत रोना रोया पर उसका कोई फल न निकला। फिर भी वह शाहज़ादी का प्रिय पार्षद बना था और अब शाहज़ादी उस सुन्दर मूर्ख को अपनी इच्छाओं की पूर्ति का माध्यम बनाए हुई थी और वह शाहज़ादी के खानगी मामलों का दारोगा अफ़सर था।

दैवयोग ही कहिए कि इस समय शाहज़ादी के ये तीनों चाहने वाले एक ही स्थान पर हाज़िर थे। तीनों ही इस समय शाहज़ादी की विशेष कृपा के इच्छुक थे।

बारहदरी समूची संगमरमर की बनी थी। उसका फ़र्श काले और सफ़ेद पत्थर का बना था। दीवारों पर रङ्ग-बिरङ्गे पत्थरों की सुन्दर

पच्चीकारी की गई थी। खंभों ऊँचाई पर कदेआदम आईने लगे थे। फर्श पर नर्म ईरानी कालीन बिछे थे। उन पर हाथीदाँत के काम का छपरखट था, जिसके ऊपर जरबफ्त का चँदोवा तना था, जिसमें मोतियों की झालर टँकी थी। पलंग पर मखमली गद्दा तोशक और मसनदें लगी थीं, जिनपर निहायत नफीस जरदोजी का काम हो रहा था। सामने करीने से चौकियों पर ढेर के ढेर फूल इत्र और अनेक प्रकार की सुगन्ध तथा शृङ्गार की वस्तुएँ रखी हुई थीं।

मसनद पर असलाई देह लिए शाहजादी अकेली बैठी थी। बाहर नंगी तलवार लिए तातारी बाँदियों का पहरा था। इसी समय हँसते हुए दूल्हा भाई ने आकर सोने के प्याले में शीराजी पेश की।

बेगम ने आँखें तरेर कर कहा—"यह क्या! वह हमारी पसन्द की चीज अंगूरी शराब कहाँ है?"

"हुजूर, एक प्याला इस शीराजी का भी तो पीजिए मेरा फर्मा कर ईरान के बादशाह को ममनून कीजिए—जिसने यह कीमती शराब बड़े शौक से काबुल के अमलदार के मार्फत हुजूर की खिदमत में भेजी है।"

"यह क्या हमारी उस नियामत से बढ़कर है जिसे खास हमारे हकीम अंगूर में गुलाब जला कर और मुश्की अफ्यून मिलाकर तैयार करते हैं। तुम तो उस नियामत को चख चुके हो दूल्हा मिर्ज़ा।"

"हुजूर के तुफैल से, वह नायाब शराब मैंने पी है, बेशक उसका मुकाबिला तो आबेहयात भी नहीं कर सकती। मगर हुजूर शाहजादी जरा उस कमबख्त शाहे ईरान का भी तो दिल रखिए। बड़ी-बड़ी उम्मीदें बाँध कर उस मरदूद ने यह कीमती तोहफा भेजा है।"

शाहजादी ने हँसकर कहा—"शाहे अब्बास ऐसा बादशाह नहीं है जिसे मरदूद कहा जाय। बस, हमें उसकी खातिर बसरोचश्म मंजूर है।

इसके अलावा हम तुम्हें भी ममनून किया चाहती हैं। इसीसे बखुशी यह प्याला मंजूर करती हैं"—

'शुक्र है खुदा का कि शाहजादी को इस गुलाम का भी इस क़दर ख्याल है, मैं तो एकदम नाउम्मीद हो गया था।"

"किस अमर में?"

"जाँ बख्शी पाऊँ तो अर्ज करूँ कि हुजूर शाहजादी की नजरें इनायत इस कमनसीब पर अब पहिले जैसी नहीं हैं।"

"तो दूल्हा मिर्ज़ा अब तुम बड़े भी तो हो गए, बच्चे नहीं हो, फिर हम तो तुमसे खुश हैं।"

शाहजादी ने प्याला खाली किया और दूल्हा मिर्ज़ा ने उसे दुबारा भर कर शाहजादी के आगे बढ़ाते हुए कहा—"बेअदबी माफ हो बेगम, गुलाम बड़ा हो गया तो यह खुदा की कारस्तानी है इसमें गुलाम की तक़सीर नहीं और अब तो गुलाम को यह समझ भी आ गई है कि हुजूर जो इस नाचीज़ पर खुश होने की इनायत करती हैं वह बहुत नाकाफी है। जाँनिसार कुछ ज्यादा की उम्मीद रखता है।"

शाहजादी खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसने कहा—"तो बेहतर है—तुम अपने दिल का इज़हार खुलकर करो—हम उस पर गौर करेंगी—"

"तो अर्ज करता हूँ हुजूर शाहजादी कि उस बूढ़े मक्कार नजाबत खाँ की आँखें मुझे कतई पसन्द नहीं हैं, और न वह काफ़िर हिन्दू राजा—जिसे आप मेहरबानी कर शाहजादी इनायत करके आप सवारी के साथ रहने का हक देकर सरफराज किया है—मुझे पसन्द है।" उसने तीसरा प्याला शाहजादी की ओर बढ़ाया।

शाहजादी ने हँसती हुई आँखों से उसकी ओर देखकर कहा—"मक्कार, तो तुम इन दोनों नापसन्द आदमियों के साथ किस तरह पेश आना चाहते हो?"

"मैं दोनों से दो-दो हाथ करना चाहता हूँ। इश्क के मैदान में एक दो तीन नहीं रह सकते शाहजादी।"

"बेहतर, तुम्हारी तजबीज हम पसन्द करती हैं और इस अमर में इन दोनों बदबख्तों को जल्दी हुक्म देना चाहती हैं। बस, तुम अमीर नवाबत खाँ को इसी वक्त हमारे हुजूर में भेज दो और खुद बइत्मीनान आराम करो"—

शाहजादी ने मुस्कुराकर दूल्हा मिर्जा की ओर देखा। दूल्हा मिर्जा को शाहजादी की विनोद वस्तु था और अपने को शाहजादी के प्रेमियों में समझता था, इस बात से बुरा नहीं हुआ। उसने धीरे से कहा—"क्या हुजूर को एक प्याला अंगूरी शराब का भी पेश करूँ? जिसकी हुजूर शाहजादी इस दर्जे शौकीन हैं।"

"यकीनन, वह प्याला दूल्हा मिर्जा, तुम्हारे हाथ से हम नोश फर्मायेंगे"

दूल्हा खुश हो गया। उसने प्याला शाहजादी को पेश किया। और शाहजादी ने प्याला हाथ में लेकर इशारे ही से उसे कह दिया कि हुक्म की तामील हो।

मिर्जा दूल्हा मिर्जा उस आनन्ददायक योहबत को छोड़कर उठे। और जाकर अमीर नवाबत खाँ को बेगम का हुक्म सुना दिया। बेगम ने धीरे-धीरे प्याला खाली किया और मसनद पर झुक गईं। इस वक्त वह मौज में थी और अच्छे-अच्छे विचार उसके हृदय को आनन्दित कर रहे थे। वह सोच रही थी, आशिक नं० एक दफ़ा हुए और आशिक नं० दो की आमद है।

इसी समय नवाबत खाँ ने आकर शाहजादी को कोर्निश किया और दूबाम् होकर शाहजादी के सामने बैठ गया। यद्यपि वह मुगल-दस्तूर और अदब के विपरीत था, लेकिन प्यार मुहब्बत के मामलों में अदब का लिहाज चलता नहीं है।

शाहजादी ने अमीर को पान देकर कहा—"अमीर सुरावक इत्मीनान से बैठिए।"

नजाबत खाँ उसी तरह चुपचाप बैठा रहा। उसने पान लेकर शाहजादी को सलाम किया और कहा—"शाहजादी अब कब तक मैं तड़पता रहूँ?"

"तुम्हें तकलीफ क्या है दिलबर?"

"अब वादा पूरा होना चाहिए और शरअ की रू से इस नाचीज को शाहजादी को प्यार करने का हक मिलना चाहिए।"

"ओह, तुम्हारा मकसद निकाह से है?"—शाहजादी ने एक फूल के गुच्छे से खेलते हुए कहा।

"बेशक और मुझ से हुजूर शाहजादी और वालिद मुहतरम ने वादे किए हैं।"

"लेकिन ये सब तो पुरानी बातें हैं जानेमन, मुगल शाहजादियों की शादी नहीं होती है।"

"क्यों नहीं होती है?"

"क्या आपने नहीं सुना कि मामू शाइस्ता खाँ ने जहाँपनाह को इसकी बड़ी वजह बताते हुए कहा था कि अगर ऐसा हुआ तो जिस अमीर से शादी की जाएगी उसे शाहजादों की बराबरी का दर्जा देना पड़ेगा?"

"लेकिन खुदा के फज्ल से मैं भी बलख का शाहजादा हूँ।"

"तो शाहजादा साहेब, हमें इससे कब इनकार है, हमारी नजरें इनायत पर आप खफा न हों—"

"खफा नहीं।"

"मगर जो बात हो ही नहीं सकती उसके लिए हम बादशाह सलामत से अर्ज भी कैसे कर सकती हैं?"

"लेकिन, शाहजादी, आप तो सल्तनत की मालिक हैं। जहाँपनाह क्या आपकी बात टाल सकते हैं?"

"फिर भी एक मनसबदार से हिन्दुस्तान के बादशाह की लड़की की शादीगैर मुमकिन है।"

"तो फिर गुनाह से फायदा।"

"क्या तमाम हिन्दुस्तान के बादशाह की शाहजादी भी गुनाह कर सकती है।"

"शाहजादी, हिन्दुस्तान के बादशाह के ऊपर भी एक दीनो-दुनिया का बादशाह है।"

"वह आम लोगों के लिए है—क्या यह भी कभी मुमकिन है कि मुगल शाहजादी एक अदना मनसबदार की ताउम्र लौंडी बन कर रहे।"

"लेकिन शाहजादी ..."

"बस खामोश, हम ऐसी बातें सुनने की आदी नहीं। बस, हम अपनी खुशी से जिस कदर इनायत तुम पर करें उतने ही में खामुश रहो।"

"मगर मेरी भी तो कुछ ख्वाहिशात हैं।"

"होंगी, हम फिलहाल इस अम्र पर गौर नहीं कर सकतीं। तुम्हारी इल्तजा से हमने आज यहाँ बारहदरी में मुकाम किया और तुमसे मुलाकात की। हम चाहती हैं कि आइन्दा अपने इरादों को काबू में रखो।"

"तो हुजूर मेरी एक अर्ज है।"

"अर्ज करो।"

"मुझे भी अमीर मीरजुमला के साथ दक्खन भेज दीजिए। ताकि अपनी आँखों से मैं यह सब न देख सकूँ जिसे देखने का मैं आदी नहीं हूँ।"

"तुम्हारा मकसद क्या है?"

"शाहजादी वह काफिर हिन्दू राजा, जिसमें हुजूर खास दिलचस्पी ले रही हैं, मैं उसे वहाँ कत्ल करूँगा और फिर दक्खन चला जाऊँगा

और फिर कभी आपको मुँह न दिखाऊँगा"—नजाबत खाँ तेजी से उठकर चल दिया।

बाहर आकर उसने देखा—खानजादा साहेब सामने हाजिर हैं। खानजादा ने आगे बढ़ कर कहा—"आदाब अर्ज है मनसबदार साहेब, फर्माइए, शाहजादी से शादी तय हो गई?"

नजाबत खाँ ने थूका और क्रोध में भरकर कहा—"मरदूद, नामाकूल, तेरा सर धड़ से अलहदा करूँगा।"

"जरूरी। मनसबदार साहेब, मगर शादी का जुलूस देख लेने के बाद।" वह हँसता हुआ एक ओर चला गया। और नजाबत खाँ तावपेच खाता एक ओर गया।

शाहजादी कुछ देर फूलों के एक गुलदस्ते को उछालती रही। कुछ देर बाद उसने दस्तक दी।

चाँदनी खूब चटख रही थी। और बेगम अंगूरी शराब के शबाब में मस्त थी। उसका शरीर मसनद पर अस्तव्यस्त पड़ा था। आँखें नशे में झूम रही थीं। उसकी प्यारी विश्वासिनी बाँदी हुस्न बानू और खास ख्वाजासरा रुस्तम उसकी खिदमत में हाजिर था। इस समय आधी रात बीत रही थी। और ठंडी सुगन्धित हवा चल रही थी। उसने एकबार घूर्णित नेत्रों से इधर उधर देखा और रुस्तम की ओर रुख कर कहा—

"वह हिन्दू राजा चौकी पर मुस्तैद है न?"

"जी हाँ, खुदावन्द।"

"तो उसे हमारे रूबरू हाजिर कर। अपनी मिहरबानियों से हम उसे सर्फराज किया चाहती हैं।"

रुस्तम सिर झुका कर चला गया। बेगम ने गर्दन झुका कर हुस्न बानू की ओर तिरछी नजर से देखा और कहा—"क्या तू उस हिन्दू राजा की बाबत कुछ जानती है।"

"सिर्फ इतना ही कि वह एक इमानदार और नेक दिल है।"

"बस ?"

"खूबसूरत और बाँका भी एक ही है।"

"शाहजादी, क्या तेरी तबियत उस पर आयी है ?" बेगम ने उत्तेजित होकर हाथ का गुलदस्ता बाँदी पर दे मारा।

बाँदी ने ज़मीन तक झुक कर बेगम को सलाम किया और कहा—'एक प्याला शीराजी दूँ सरकार ?'

"दे, गुलाब और इत्रमुश्क भी मिला।"

बाँदी ने स्वादिष्ट शराब का प्याला तैयार कर बेगम के हाथ में दिया।

शराब पीकर बेगम ने कहा—"तू किसी ऐसे मुसव्विर को जानती है जिसने इस दौर के हिन्दू राजा की तस्वीर बनाई हो ?"

"जानती हूँ खुदावन्द।"

"तो सुबह गुस्ल के बाद उसे मय तस्वीर के हाजिर करना, जा भाग !"

बेगम ने प्याला फिर उस पर फेंका और मसनद पर लुढ़क गई। इसी समय सलीम ने राव छत्रसाल के साथ आकर सलाम किया। छत्रसाल ने आगे बढ़कर बेगम को कोर्निश की।

बेगम ने तिरछी नज़र से शाहजादा की ओर देखा। शाहजादा चुपचाप सलाम करके वहाँ से अलग गया। अब एकदम एकान्त पाकर बेगम ने कहा—'खुदा का शुक्र है, बैठ जाइए'—उसने मसनद की ओर इशारा किया। पर वह तरुण राजपूत एक कदम आगे बढ़ कर ठिठक कर रह गया। उसने कहा—"शाहजादी बेहतर हो मुझे अपनी नौकरी बजाने का हुक्म हो जाय।"

"मेरे प्यारे राजा, तुम यह क्या कह रहे हो। तुम्हारी ऐसी ही बातों से मेरा दिल टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।" शाहजादी ने अपनी

बड़ी-बड़ी आँखें उठा कर राजा की ओर देखा और मीठे स्वर में कहा—"आज हम बहुत खुश हैं और उम्मीद है, इस चमेली-सी चटकती चाँदनी का लुत्फ़ उठाने में आप मुनासिब दरेग न करेंगे।"

चम्पा राजा अपनी जगह पर ही खड़ा रहा। शाहजादी की शराब से लाल आँखें और भी लाल हो गईं, परन्तु उसने मन के गुस्से को रोक कर कहा—"जानेमन, हमारे पास यहाँ मसनद पर बैठ कर हमें सैरत बख्शो।"

"मुझे अफ़सोस है, शाहजादी, मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

"क्यों नहीं कर सकते दिलबर!"

"यह मेरे दीनो-ईमान के खिलाफ़ है।"

"लेकिन हमारी खुशी है हम तुम्हें दिल से चाहती हैं।"

"मैं मामूली राजपूत, हुजूर शाहजादी की इस इनायत का हकदार नहीं हूँ।"

"तो तुम हमारी हुक्म उदूली की जुर्रत करते हो।"

"हुक्म दीजिए कि मैं चला जाऊँ।"

"क्या इस चाँदनी रात में, इस फूलों से महकती फ़िज़ा में प्यारे राजा, क्या तुम नहीं जानते कि हम दिल से तुम्हें चाहती हैं, तुम से दिली मुहब्बत रखती हैं, 'तुम्हें डर किस बात का है जानेमन, कहो, हम वही करें जिससे तुम्हें खुशी हो।'

"शाहजादी मुझे चले जाने की इजाज़त दीजिए और फिर कभी ऐसा कलमा ज़बान पर न लाइए—मैं यही चाहता हूँ।"

"और हमारी मुहब्बत?"

"उस पर शायद मनसबदार नवाबज़ादों का हक है।"

'ओह, समझ गई। तुम्हें रश्क हो सकता है दिलबर, लेकिन हम तुम्हें चाहती हैं—सिर्फ तुम्हें। तुम मेरे दिलबर हो। जिस दिन मैंने पहिली बार झरोखे से, तुम्हें घोड़े पर सवार जाते देखा—जिसकी टाप ज़मीन पर नहीं पड़ती थी और तुम उस पर पत्थर की मूर्ति की तरह

अपना बैठे थे। तभी से तुम्हारी यह मूर्ति हमारे मन में बस गई है दिलबर। उस दिन तुम्हें देख हम अपने को भूल गईं। तभी से मेरा दिल बेचैन है। हम तुम्हें अपने आगोश में बैठा कर खुशहाल होना चाहती हैं। हरचन्द हमने तुम्हें बुलाया और तुमने इन्कार कर दिया। मेरे ख़तूत और तोहफे तुमने लौटा दिए। आज हमने तुम्हें पाया है। अब हमारे पास आकर बैठो। हम अपने हाथ से तुम्हारे इत्र लगाएँ तुम्हें प्यार करें और अपने दिल की आग को बुझाएँ।"

"हजरत बेगम साहिबा, इस वक्त आपकी तबियत नासाज है, मैं जाता हूँ—"

बेगम शेरनी की तरह गरज उठी।

"तुम्हारी यह हिमाकत, हमारी आरज़ू और मुहब्बत को ठुकराओ! क्या तुम नहीं जानते कि हमारे गुस्से में पड़ कर बड़ी-से-बड़ी ताकत को दोज़ख की आग में जलना पड़ता है।"

लेकिन राजा पर इस बात का भी कोई असर नहीं हुआ। उसने बेगम की किसी बात का जवाब नहीं दिया। उसने मस्तक झुका कर बेगम को अभिवादन किया और तेजी से चल दिया। बेगम पैर से कुचली हुई नागिन की भाँति फुफकारती हुई मसनद पर छटपटाने लगी।

राजा के बाहर आते ही बूढ़ा ने सलाम करके हँसते हुए कहा—"मुबारक राजा साहेब, मुबारक, शाहजादी की आशनाई मुबारक।" राजा का हाथ तलवार की मूठ पर गया और बूढ़ा हँसता हुआ भाग गया।

१७

हुगली के कैदी

हुगली का इलाका बादशाह जहाँगीर ने पोर्चुगीजों को दे दिया था। कहने को वे केवल व्यापार करते थे। पर वास्तव में लूट-खसोट,

अत्याचार और बलात्कार ही उनका धन्धा था। वास्तव में यह उन दिनों गोरे लुटेरों का एक दल था जिसे बादशाह से मनमानी लूट करने की छूट दे दी गई थी और जिनकी कहीं सुनवाई ही न होती थी।

अपने शाहज़ादा होने के समय में शाहजहाँ जब हुगली होकर आ रहा था तब पोर्तुगीज़ अपने क़िले से बाहर आकर बादशाह की बेगम मुमताज़ महल की दो लौंडियों को पकड़ ले गए थे। उस समय मुमताज़ महल ने उन पोर्तुगीज़ों की बहुत ख़ातिर खुशामद की थी कि वे उन लौंडियों को वापस दे दें, परन्तु पोर्तुगीज़ों ने इसकी तनिक भी परवाह न की थी।

बादशाह होने पर शाहजहाँ इन बदमाश पोर्तुगीज़ों की इस हरकत को भूला नहीं था। परन्तु कुछ ऐसी राजकीय उलझनें आ पड़ी थीं कि वह इस मामले में कुछ न कर सका था—यद्यपि बेगम ने उसे बहुत उकसाया भी था। इसी बीच बेगम का देहान्त हो गया। और बादशाह अनेक मामलों में फँसा रहा, अब अवसर और बहाना उसे मिल गया तो उसने क़ासिम ख़ाँ की कमान में एक भारी सेना देकर उन्हें गिरफ्तार करने और क़िला दखल देने के लिए भेजा। उससे पोर्तुगीज़ों ने पहिले तो कुछ दे ले कर सुलह करनी चाही परन्तु जब क़ासिम ख़ाँ ने गोलाबारी शुरू कर ही दी तो वे लड़ पड़े। अन्त में उन्हें आत्म-समर्पण करना पड़ा। और क़ासिम ख़ाँ पाँच हज़ार पोर्तुगीज़ों को परिवार सहित क़ैद कर लाया। इन क़ैदियों में कई आगस्टीनियन, कारमीनियन और जेसुइट पादरी भी थे। क़ासिम ख़ाँ ने उन सबको बादशाह के सामने पेश किया। बादशाह ने सब क़ैदियों को क़त्ल कर डालने और उनकी औरतों और लड़कियां को बाज़ार में बेच डालने का हुक्म दिया। शाहजहाँ ने इन स्त्रियों में से बहुतों को अपने मुसाहिबों को बाँट दिया। जो अति सुन्दर थीं उन्हें अपने हरम में रख लिया।

अपनी औरतों की प्राप्ति के लिए और जान बचाने के लिए बहुतों ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया। क्योंकि बचने का एक यही मार्ग था।

परन्तु पादरियों ने अपना धर्म बदलने से बिल्कुल इन्कार कर दिया और कहा—हम ईश्वर के भरोसे हैं। बादशाह चाहे जो कुछ करे। एक आरमीनियन अमीर की सिफारिश से बादशाह ने उन्हें प्राणदण्ड से मुक्त कर दिया। कुछ को भारी रकम देकर उनके दोस्त योरुपियनों ने बचा लिया।

इन्हीं कैदियों में एक आर्मिनियन लड़की थी, जिसका बाप कत्ल कर दिया गया था और जिसे कुछ बदमाश गोरे चोरों ने छिपा कर रख छोड़ा था। वे चाहते थे कि मामला ठण्डा हो जाय तो उसे अच्छे दामों पर बेचें। ऐसे माल के खरीदारों की दिल्ली में कमी न थी। इन कैदियों में एक अंग्रेज स्मिथ भी था जो बहुत अच्छा गोलंदाज था। उसके हुनर की तारीफ सुन कर दारा ने उसे मृत्युदण्ड से मुक्त करा दिया था और अपनी सेवा में रख लिया था। मृत्युदण्ड से मुक्त होने पर इस अंग्रेज ने दारा को खुश करने के लिए उस आर्मिनियाना छोकरी की बात उससे कही। उसके रूप-लावण्य का भी बहुत-बहुत बखान किया और कहा—"हुजूर, बेशक़ी माफ हो तो कह सकता हूँ कि शाही हरम में एक भी नाजनी उसके जोड़-तोड़ की नहीं है।" उसने यह भी बता दिया कि कुछ चोरों ने उसे अमुक स्थान पर छिपा रखा है और वे उसे कहीं बेचने की साँठगाँठ में हैं।

दारा स्त्रियों का बहुत शौकीन था। उसने स्मिथ के साथ जाकर गुप्त रूप से उस लड़की को देखा—और अधिक झंझट न बढ़ा कर उन चोरों से उसे खरीद लिया और वे किसी से उसके सम्बन्ध में चर्चा न करें इसलिए उन्हें दिल्ली से बाहर भेज दिया।

जब वह आर्मिनियाना छोकरी दारा के ऐश महल में पहुँची तो उसके रूप और चमत्क को देख कर महल की सारी औरतें दंग रह गईं। उसने बड़ी-बड़ी माँगें पेश कीं जो दारा ने तत्काल पूरी कीं। देखते ही देखते वह अपने स्वभाव से मलिका की तरह रहने लगी। वह जैसी सुन्दर और मग़रूर थी—वैसी ही मुँहफट और शराबी भी थी। वह

बढ़िया श्रीमती विलायती शराब पीती और शराब के झोंक में मनमाने हुक्म जारी करती थी। इतना होने पर भी उसने दारा को अपना प्रसंग छूने नहीं दिया। उसने साफ कह दिया—हजरत, जब तक निकाह न पढ़ाएँगे—मुझे न पा सकेंगे। मैं हुजूर की लौंडी नहीं मलिका बना चाहती हूँ।

परन्तु यह बड़ी कठिन बात थी। बादशाह किसी भी हालत में एक जरखरीद गुलाम को बेगम बनाने को राजी नहीं हो सकते थे। इस बुलबुली और मखरेवाली गुलाम को खरीदने की बात जब बादशाह ने सुनी तो उसने बहुत नाराजी जाहिर की और इस बेअदबी करतूत के लिए दारा से जवाब तलब किया। दारा उस लौंडी को पाने के लिए इतना बेचैन हो गया कि जान देने पर आमादा हो गया। अन्त में उसने अपनी बड़ी बहिन बड़ी बेगम जहाँआरा का सहारा लेने का निर्णय किया और वह उसके पास गया।

जहाँआरा बेगम भी कुछ ऐसे ही मर्ज में मुब्तिला थी। वह भी अपनी शादी कराने में मुगल-मर्यादा के विपरीत थी। वह दारा की मदद माँग चुकी थी और दारा ने उसे वचन दिया था कि बादशाह होने पर वह अवश्य उसकी शादी उसके मनचीते आदमी से कर देगा। इसी से बेगम दारा ही को बादशाह बनाना चाहती थी। दारा ने बहिन से मुलाकात कर उससे इस काम में मदद माँगी।

: १८ :

कौल-करार

वलीअहद दारा बड़ी बेगम के महल में तशरीफ लाए, साधारण शिष्टाचार के बाद भाई-बहन ने दिल खोल कर बातचीत प्रारम्भ की। पहले बेगम ने कहा—"अब वह वक्त आ गया है कि हमारे दिलों के अरमान पूरे हों और पियारे, मेरी सारी उम्मीदें सिर्फ तुम पर ही हैं।"

"तो मैंने जो कौल तुम्हें दिया है, पूरा करूँगा, अब तो तुम इस बात से खुश हो कि बलख पर फौजकशी नहीं होगी।"

"लेकिन हज़रत सलामत तो अमीर नजाबत खाँ से शादी करने को राज़ी ही नहीं होते।"

"यह सब उस मरदूद शाइस्ता खाँ की कारगुज़ारी है। उसी ने हज़रत सलामत को समझाया है कि यदि नजाबत खाँ से बेगम की शादी कर दी गई तो उसे अवश्य ही शाहज़ादों की पदवी देनी होगी।"

"मैंने भी तो उस दोज़खी कुत्ते से पूरा बदला ले लिया है।"

"लेकिन क्या नजाबत खाँ बलख का शाहज़ादा नहीं है, और क्या वह इस रुतबे को पहुँचने के काबिल नहीं?"

"लेकिन हज़रत सलामत तो अभी तक यह समझते हैं कि कभी न कभी शाहे बलख से लड़ना ही पड़ेगा।"

"और तुम्हारा वादा! तुमने कहा था कि बलख पर कभी फौजकशी नहीं होगी!"

"इतना ही नहीं—मेरा यह भी वादा है कि बादशाह होते ही तुम्हारी शादी नजाबत खाँ से कर दूँगा, तब तक मेरी प्यारी हमशीरा, तुम अपने दूल्हाभाई पर ही सब्र करो।"

"आह तो तुम्हें भी कुछ ऐसा शक है!"

"शक की क्या बात है बेगम, आखिर वह खानेज़ाद है ही, शाहज़ादियाँ और अमीरज़ादियाँ खानेज़ादों से तफ़रीह कर सकती हैं।"

"मैंने तो उसे तीन हज़ारी ज़ात का रुतबा देकर उसे सिपहसालार बनाया है इसी से तुम शक करने लगे?"

"बहस से क्या फायदा। मगर मेरा काम; उस पर भी तो गौर करो बेगम।"

"मुझे तुम्हारा पैगाम मिला था। तुम्हारा काम बहुत मुश्किल है बिरादर, एक अदना नाचनेवाली गुलाम को बेगम बनाना मुनासिब नहीं। आखिर तुम शहन्शाहे हिन्द होने वाले हो। क्या हिन्दुस्तान के हिन्दू

राजा और दीगर अमीर यह पसन्द करेंगे कि वे एक बरखरीद बांदि-याना लौंडी को मलिका समझ कर उसे सलाम करें।"

"तो अब तुम भी नसीहत देने लगीं!"

"नहीं, नहीं, मैं मौका पाकर हज़रत सलामत से अर्ज करूँगी, लेकिन तुमने उस मक्कर महाबत की हरकत देखी।"

"लेकिन इसमें कसूर शुहरा मिर्ज़ा का ही है, उसे महाबत खाँ के सामने अपना मसला तह कर लेना था। तुम तो जानती हो कि वह एक पुराना और बहादुर सरदार है। बादशाह जहाँगीर को भी उसने नीचा दिखाया था। हज़रत सलामत ने जब सुना कि उसने महाबत के मुकाबले कलम उठाया है तो उन्होंने शुहरा मिर्ज़ा का कलम तुड़वा दिया।"

"मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकती और तुम—जो जानते हो कि मैं उनपर मिहरबानी रखती हूँ—भी यह बर्दाश्त न करोगे, यह उम्मीद है।"

"तो मैं क्या करूँ?"

"वह काबुल का हाकिम है, काबुल तुम्हारी ही जागीर है। उसे वहाँ से हटा कर कहीं दूर फेंक दो।"

"जहांपनाह, अब्बा यह कभी पसन्द न करेंगे।"

"लेकिन मैंने उससे वादा किया है। बरादर, आखिर मुझे भी तुम्हारा काम करना है, जो करीब-करीब नामुमकिन है।"

"खैर, तो तुम मेरी महबूबा मुझे दिखला दो तो मैं भी महाबत के पंख कतर दूँगा।"

"यह तो आज ही रात को हो जायगा।"

"तो यह भी पक्का हो गया समझो।"

"तसल्ली हुई बरादर, लेकिन इस पाजी शाइस्ता खाँ से होशियार रहना।"

"और तुम उस बेईमान मीरजुमला के कबीले पर नज़र रखना। कहे देता हूँ—उस कमीने ने दगा की तो उसकी और उसके बेटे अमीनुद्दीन की औरत को मैं बाजार में बैठा दूँगा।"

"इतमीनान रखो। आज ही मैंने उस पर रहमोकरम किया है। लेकिन मुझे तुमसे एक राज़ की बात कहनी है बहादुर। वह मैं तुम्ही से कह सकती हूँ।"

'बेशक कहो।'

"हकीकत यह है कि मैं नजाबत खाँ के साथ शादी करना नहीं चाहती।"

"अर्य, तो क्या कोई नया गुलरू नज़र चढ़ गया।"

"बहादुर, मैं बूँदी के राव छत्रसाल पर मर मिटी हूँ। मेरी शादी या तो उसी से होगी या मौत के साथ।"

"तोबा, तोबा, और नजाबत?"

"बिलफेल तुम उस मीरजुमला के हमराह दकन भेज दो।"

"क्या यहाँ तक?"

"और छत्रसाल को पाँच हजारी जात का मनसब दे दो।"

"लेकिन मैं समझता था तुम अमीर नजाबत खाँ को पसन्द करती हो।"

"पसन्द करती हूँ, मिहरबानी भी करती हूँ, मगर उसे प्यार ही नहीं आता।"

"वह चाहता क्या है?"

"यही, कि मुगल शाहजादियाँ भी मुहब्बत का दर्द बर्दाश्त करें।"

"लेकिन बेगम, यह दर्द तो आप ही उठ खड़ा होता है, शाहजादियों और शाहजादों की ओर देखता भी नहीं, मेरा ही हाल देखो।"

"आफरीं बहादुर, उस गुमनाम लौंडी को तुम इतना चाहते हो?"

"बेगम, अगर उससे मेरी शादी न हुई तो मैं जान दे दूँगा।"

"यहाँ तक! तोबा, तोबा!" शाहजादी हँसते-हँसते मसनद पर

चली गई, फिर उसने दारा को पान देते हुए कहा—"खुदा हाफ़िज़, बड़ी बेग़म की जान इतनी सस्ती नहीं है। मैं आज ही [illegible] से बात करूँगी।"

दारा ने बेगम का पंजा चूमा—और चला गया।

१६ :

दरबारे ख़िल्वत

इस दरबार की तैयारियाँ भी बहुत ठाठ से की गई थीं। यद्यपि यहाँ इने-गिने ख़ास-ख़ास दरबारी ही बुलाए गए थे। परन्तु इस दरबार का रोबदाब निराला ही था। दीवाने ख़ास, जिसमें यह दरबार हुआ था—समूचा संगेमर्मर का बना हुआ था और इसकी छत पर अद्भुत सुनहरा काम किया गया था। यह एक खूब हवादार महराबों पर बना हुआ था तथा जमना की ओर से खुली ठण्डी हवा इसमें निरन्तर आती रहती थी।

बादशाह एक जड़ाऊ कुर्सी पर बैठे थे। उन्होंने हल्के रंग के वस्त्र पहने थे। वज़ीर और उमरा जो बुलाए गए थे—हाथ बाँधे सिर झुकाए अपने-अपने स्थान पर खड़े थे। वली अहद शाहज़ादा दारा एक छोटे से सुनहरी तख़्त पर बादशाह के क़दमों में बैठा धीरे-धीरे बादशाह से बातें कर रहा था। बड़ी बेगम भी चिलमन में तशरीफ़ रखती थीं और चिलमन के निकट ही मख़मली पर्दे के पास कई तातारी बाँदियाँ और खोजा सरदार एतबार हाथ बाँधे इस इन्तज़ारी में चाक चौबन्द खड़ा था कि आवश्यकता होने पर बेगम के हुक्म की तामील कर दी जाय।

खम्भों पर रंगीन ज़रीकाम के वस्त्र लपेटे हुए थे और रेशमी चँदुए, जिनमें रेशम और ज़री के फुँदने टँके थे, तने हुए थे। फ़र्श

पर नर्म नमदे और कीमती कालीन बिछे थे जिन पर पैर पड़ते ही वह हाथ भर धँस जाता था ।

मीरजुमला और उसके बेटे की पधाई की सूचना नकीब ने दी । उसके साथ ही मीरजुमला ने आकर बेटे समेत शाही चौखट चूमी और कोर्निश करके बादशाह को एक लाल नजर किया जिसकी कीमत एक लाख रुपये थी ।

बादशाह ने नीची नजरों से मीरजुमला और उसके बेटे की ओर देखा, फिर झुककर दारा से कुछ कहा ।

दारा इस वक्त बहुत मखमली पोशाक पहने था और प्रकट में वह बहुत गम्भीर था पर उसके माथे पर चिन्ता और असन्तोष की रेखाएँ प्रकट हो रही थीं ।

अमीर मीरजुमला और उसका बेटा अमीन खाँ शाही अदब बजा लाकर पीछे हटकर खड़े हो गए । बादशाह ने उनकी ओर रुख करके धीमे स्वर में कहा—

'अमीर मीरजुमला, खुश आमद ! हम तुम्हारी बहादुरी और दयानतदारी से बहुत खुश हैं ।'

मीरजुमला ने झुककर सलाम किया और जरा आगे बढ़ कर कहा—'आलीजाह, गुलाम हमेशा से तख्त का वफादार खादिम रहा है और ताजीस्त रहेगा ।'

"हमें यकीन है, अमीर मीरजुमला, तुम्हारे उस लासानी जवाहर का नाम हमने कोहेनूर रक्खा है ।"

इसपर दरबारी एकी वचन से कह उठे—'सुभान अल्लाह—करामात-करामात—'

मीरजुमला ने फिर सलाम किया और धीमे किन्तु दृढ़ स्वर में कहा—

"हुजूर, गोलकुण्डा राज्य पर, जहाँ ऐसे-ऐसे अनगिनत जवाहरात

के ढेर हैं, कब्जा करने में अब उतावला न होना चाहिए। बल्कि यह गुलाम तो यहाँ तक कहने की जुर्रत करता है कि हुजूर को उस वक्त तक दकन पर फौजकशी करनी चाहिए जब तक कि कन्याकुमारी तक का मुल्क तख्ते मुगलिया के कब्जे में न आ जाय।"

बादशाह के चेहरे पर मुस्कुराहट आई, उन्होंने कहा—"अमीर मीरजुमला, हम तुम्हारी मुफीद सलाह पर अमल करने पर आमादा हैं और तुम्हें इसके एवज का खिताब अता फर्माते हैं। हम चाहते हैं कि दकन पर एक फौज भेजी जाय और उसकी कमान तुम्हें सौंपी जाय। साथ ही तुम्हारी मदद को नजाबत खाँ, महाबत खाँ, उनका बेटा और सलाबत खाँ साथ रहें।"

मीरजुमला ने सिर झुकाया और कहा—

'यह मर मिटने वाला खादिम बसरोचश्म इस मुहिम के लिए तैयार है।"

बादशाह ने कुछ इधर उधर करके नर्म स्वर में कहा—"अमीर मीरजुमला, इसमें कुछ शर्तें होंगी," यह कहकर उसने दारा की ओर देखा।

दारा ने रूखे शब्दों में जरा उच्च स्वर से कहा—जिससे चिलमन में बैठी बेगम भी सुन लें, "मीर साहेब, पहली शर्त तो यह कि इस मुहिम में औरंगजेब नहीं शरीक होगा, न उसका आपसे कुछ वास्ता रहेगा। न आप उससे मिल सकेंगे, न वह दौलताबाद को छोड़कर बाहर इधर उधर कहीं जा सकेगा।"

मीरजुमला ने चेहरे पर कोई भाव प्रकट न करके गम्भीरतापूर्वक कहा—"दूसरी शर्त क्या है?"

"आपके बाल-बच्चे, रिश्तेदार और आपका बेटा अमीन खाँ आगरे में रहेंगे और शाही खजाने से उनका खर्चा दिया जायगा।"

मीरजुमला के चेहरे पर असन्तोष के भाव प्रकट हुए। उसने बादशाह की ओर देखा। बादशाह ने कहा—

'इत्मीनान रक्खो अमीर मीरजुमला, तुम्हारे असला-असबाब बहुत जल्द तुम्हारे पास पहुँच जाएँगे। फिलहाल हमारी दिली ख्वाहिश है कि तुम्हारा फर्जन्द मुहम्मद अमीन अभी कुछ दिन हमारी नजरों का सेहत रक्खे।" बादशाह के इतनी खुशामद करने पर भी मीरजुमला के चेहरे का असन्तोष दूर नहीं हुआ।

उसने कहा—"जहाँपनाह के हुक्म और मर्जी के खिलाफ कोई काम यह गुलाम नहीं करना चाहता, मगर हुजूर शाहजादा इस यानि दार पर राजी हों तो रहने दिया जाय।"

"नहीं, नहीं, सिर्फ दारा के इत्मीनान के लिए। अब-हम तुम्हारी कमान में शाही तोपखाना समेत पचास हजार फौज देते हैं जिसका बखूबी इस्तेमाल अपने साथी सिपहसालारों के साथ—जो तुम्हारे हम राह होंगे, तुम कर सकते हो।"

इसके बाद बादशाह ने जड़ाऊ तलवार, खास हाथी साज का सामान और कीमती सिरोपाव देकर अमीर मीरजुमला को विदा कर दरबारे खिलवत खत्म किया।

२०

दलित कुसुम

आइए हम अब जरा शाइस्ता खाँ के मकान की एक झाँकी देखें। शाइस्ता खाँ की विशाल हवेली चौक बाजार में थी। वह बादशाह का साला था और एक चतुर और उच्चाशय अमीर था। उसकी बीवी एक ईरानी अमीर की इकलौती बेटी थी। वह बड़ी सती-सच्चरित्र और पवित्रात्मा थी। वह जैसी अद्वितीय सुन्दरी थी वैसी ही अस्मत वाली भी थी। वह एक नई उम्र की बड़ी ही नाजुक मिजाज भावुक युवती थी।

बादशाह की उस पर एक अमीर के यहाँ दावत में दृष्टि पड़ी।

रिश्तेदार होने के कारण वह बादशाह के सामने आने को विवश की गई थी। बूढ़े कामुक बादशाह ने अपनी बड़ी बेटी के हाथ उसे एक खिलअत देकर रंगमहल में बुलवा लिया—बेगम अकबर आबादी उसे फुसला कर बादशाह के उस रहस्यपूर्ण कमरे में ले गई, जिसमें अनगिनत सतियों का सतीत्व लूटा जा चुका था। भोली-भाली लड़की हाथ में बैस फँस गई। और जब वहाँ उसने अपने को बादशाह के चंगुल में फँसा कर असहायावस्था में पाया तो छूटने को बहुत हाथ पैर मारे, बड़ी छटपटाई, पर वह अपने को बचा न सकी। बादशाह ने उसका सतीत्व भंग कर दिया। फिर वह बहुत सी भेंट और नजराने देकर वापस भेज दी गई।

परन्तु, उस मुगल राज्य में जिस प्रकार की और अमीरों की औरतें होती थीं—वह वैसी न थी। उसने घर आकर सब हाल अपने पति से कह दिया और खाना-पीना तथा वस्त्र बदलना भी छोड़ दिया। इस घटना को प्राय १५ दिन बीत चुके थे। वह कुम्हलाई हुई पुष्पमाला की भाँति बिस्तर पर पड़ी थी। तमाम घर भर में उदासी छाई थी। प्राणान्त का समय था। उसके नेत्रों में मरने का दृढ़ संकल्प था। उसके पलँग के पास उसका प्यारा पति बैठा था। दोनों खूब रो चुके थे। अब जिस प्रकार एक कठोर संकल्प करने का भाव उस सती के मुख पर था, उसी प्रकार बदला लेने का उस वीर युवक अमीर के मुख पर भी था।

उसने कोमलता से पत्नी का हाथ अपने हाथ में थाम कर कम्पित स्वर से कहा—'प्यारी, अपना यह खौफनाक इरादा छोड़ दो, जीती रहो—मेरी नजर में तुम पाकसाफ हो। मैं उस जालिम बादशाह से ऐसा बदला लूँगा कि दुनिया देखेगी।" बात पूरी करते-करते उसकी आँखों से आग निकलने लगी और बदन काँपने लगा।

बेगम ने पति का हाथ दोनों हाथों में लेकर अपनी छाती पर रखा। वह कुछ देर चुपचाप आँखें बन्द किए पड़ी रही। फिर उसने धीरे

स्वर में कहा—"मेरे प्यारे शौहर, इतने ही दिनों में मैंने तुमसे वह प्यार पाया कि जिन्दगी का सब लुत्फ उठा लिया, अब मेरी जिन्दगी में किरकिरी मिल गई। मैं नापाक कर दी गई। अब मैं तुम्हारे लायक न रही प्यारे, मेरे जिस जिस्म को उस नापाक कुत्ते ने छुआ है मैं उसमें न रहूँगी, न रहूँगी और क़यामत में तुम्हारा इन्तज़ार करूँगी।"

"मगर प्यारी बेगम, मैं तुम्हारे बिना कैसे दुनिया में जिन्दा रहूँगा? मेरी जिन्दगी तुम हो, मेरी आँखों में सिर्फ़ तुम्हारी रोशनी है। तुम्हारे सिवा दुनिया में मेरा कोई नहीं है।"

युवती की आँखों से आँसू टपकने लगे। उसने पति के हाथों को प्यार से चूम कर कहा—'रहना पड़ेगा—मेरे मालिक, मैं जिन्दा नहीं रह सकती, मैं आबरूदाना नहीं ले सकती, आह! उस ज़ालिम ने न मालूम मुझ जैसी कितनी बेबस कमज़ोर औरतों को बर्बाद किया होगा। मुमकिन है वे सब अस्मतफ़रोश न हों, लेकिन इस मुग़ल सल्तनत में एक भी ऐसा बहादुर आदमी नहीं, जो इन बेकसों को उस ज़ालिम भेड़िये से बचाए। मेरे प्यारे मालिक, तुम वादा करो कि बदला लोगे।"

"मैं वादा करता हूँ प्यारी, कि जब तक मैं तुम्हारी बेहुर्मती का बदला न ले लूँगा चैन से न बैठूँगा। परवा नहीं, चाहे जान भी चली जाय।"

"तो प्यारे, फिर मैं खुशी खुशी से मर सकती हूँ, इसका मुझे बड़ा फ़ख़्र है।"

"मगर मेरी प्यारी बेगम—तुम अपने इस इरादे को बदल दो, खुदा के लिये मुझ पर रहम करो, मैं तुम्हें उसी तरह आँखों की पुतली बना कर रखूँगा।"

"नहीं प्यारे, मेरी ग़ैरत यह इजाज़त नहीं देती, इस तरह ज़लील होकर मैं किस तरह जिन्दा रह सकती हूँ। नहीं, नहीं, किसी भी तरह नहीं। मालिक, एक मर्द की तरह तुम मुझे विदा करना—हम लोग फिर मिलेंगे—और वैसे ही पाकसाफ़ जैसे उस दिन थे—जब कि हम

पहली बार मिले थे।" इतना कहते-कहते उस बेगम की आँखों से आँसुओं की धार बहने लगी—उसकी साँस जोर-जोर से चलने लगी और उसका सारा शरीर थर थर काँपने लगा। कुछ मुस्करा कर उसने कहा—"प्यारे, तुम्हें वह दिन याद है जब मैंने अपने मेंहदी से रंगे हाथ तुम्हारे सुपुर्द किए थे, तुम्हें अपना बनाया था, और तुमने मुझे अपनाकर निहाल किया था। हम लोग कितना हँसते थे, दुनिया कितनी मीठी लगती थी, दिन कैसे सुहावने थे, सूरज कैसा चमकता था, कोयल कैसी कूकती थी रात कैसे हँसा करती थी, चाँद दूध बखेर कर दुनिया को कैसा बना देता था, हम लोग बातें करते थे, हँसते थे, रूठते थे, प्यार करते थे, लड़ते थे, फिर एक हो जाते थे, आह! इतनी जल्दी वे सब दिन ख़त्म हो गये!"

शाइस्ता ख़ाँ ने उन्मत्त की तरह पत्नी को छाती से लगा कर कहा—"नहीं, नहीं, प्यारी, यह दुनिया वैसी ही है। देखो बाहर सूरज है—चाँद है—फूल हैं, उनमें ख़ुशबू है कोयल है, प्यारी, यह दुनिया वैसी ही मीठी है। आओ एक बार हम फिर उसी तरह हँसें, लड़ें, रूठें और फिर प्यार करें।"

उसने विह्वल होकर मुमूर्षु पत्नी के अनगिनत चुम्बन ले डाले। फिर वह उसकी छाती पर सिर रख कर फफक-फफक कर रोने लगा।

बेगम भी रो रही थी। कुछ देर रो लेने पर जब जी हल्का हो गया तो शाइस्ता ख़ाँ ने कहा—"लो प्यारी, अब हो कि हम लोग जीयेंगे।"

"नहीं प्यारे, हमारी ज़िन्दगी में कीड़ा लग गया है। अब हम उस तरह नहीं जी सकते। औरत की ज़िन्दगी उसकी अस्मत है, वह गई तो ज़िन्दगी भी गई। मेरे प्यारे शौहर, मुझे जाना होगा—मुझे मरना होगा। मगर ओफ़, यह कभी न सोचा था कि इतनी जल्द! ओफ़, ओफ़!"

बेगम ने एक चीख मारी और बेहोश हो गई। शाइस्ता ख़ाँ पागल की तरह लौंडियों और दाइयों को पुकारने लगा। महल में

हलचल मच गई, और वह फूल की तरह सुन्दर और कोमल अरमान वाली हमेशा के लिए चुप हो गई।

: २१ :

रोशनआरा

नौबत बज रही थी। शाहजादी रोशनआरा अलसाई-सी अपने कमरे में आकर मसनद पर लुढ़क गई। वह कुछ थकी हुई थी। कुछ चिन्तित भी थी। परन्तु वासना की तीखी चमक उसकी आँखों में थी—और किसी उत्तेजना से उसका चेहरा असाधारण रीति से लाल हो रहा था। वह ढाके की महीन मलमल की दोहरी पोशाक पहने थी। फिर भी उसमें उसका मनोरम शरीर छन रहा था। उसपर सुनहरी जरी का निहायत नफीस काम हुआ था। उसकी चोटी निहायत नज़ाकत से गुँथी थी और सुगन्धित तैलों से तर थी। माथे पर लापरवाही से उसके फीरोजी रंग की एक बरवस्त की ओढ़नी पड़ी थी। उसकी गर्दन में पाँच बड़े-बड़े लालों की एक माला पड़ी थी जिसके सिरे पर मोतियों के गुच्छे लगे थे। वह माला उसके पेट तक लटक रही थी। माथे पर मोतियों की बेंदी थी जो उसकी चिकनी काली केशराशि पर खूब फब रही थी। उसके पास ही एक जड़ाऊ चौक था जिसके बीच में अत्यन्त तेजस्वी एक लाल जड़ा था। आस-पास मोती थे। कानों में जड़ाऊ फूल थे। बाजो पर एक विचित्र हरा झूल रहा था, जिसमें आश्चर्यजनक बड़े-बड़े हीरे जड़े थे। कलाई पर नीलम की पहुँचियाँ थी जिनमें जगह-जगह मोतियों के गुच्छे लगे थे। उसकी प्रत्येक उँगली में अँगूठियाँ थी। दाहिने हाथ के अँगूठे पर एक आरसी थी जिसके आईने के इर्द-गिर्द मोती जड़े थे। कमर के चारों ओर सोने का दो अंगुल चौड़ा पटका था, जो बड़ी कारीगरी से जवाहरात से जड़ा हुआ था। जवाहरबन्द के दोनों सिरों पर दो अंगुल

लम्बी पाँच-पाँच मोतियों की लड़ें लटक रही थीं। पैरों में भी पायजेब की जगह बड़े-बड़े मोतियों की लड़ें पड़ी थीं। पोशाक इत्र में शराबोर थी।

कुछ देर शाहजादी चुपचाप मसनद पर उठँगी पड़ी रही। फिर उसने दस्तक दी। एक बाँदी ने आकर शाहजादी का इशारा पा उनका कबा उतार दिया, और पैरों पर एक कीमती शाल डाल दिया, इसके बाद उसने शराब की सुराही और जाम सामने चौकी पर रख दिया। वह दुजानू होकर बेगम के पास बैठ गई और जाम भर-भर कर देने लगी।

शाहजादी चुपचाप वह सुवासित मदिरा पीने लगी। दो-चार प्याले पीने पर उसने बाँदी को रोशनी तेज करने और गानेवालियों को बुलाने की आज्ञा दी। क्षण भर में कमरे में सुरीले गायन की स्वर-लहरी भर गई। गानेवालियाँ यद्यपि अपनी कलाएँ दिखा कर शाहजादी को खुश किया चाह रही थीं परन्तु शाहजादी का दिल आज खुश न था। शराब और संगीत दोनों ही उसे प्रसन्न न कर सके। उसने संकेत कर गाने वालियों को चले जाने का हाथ से संकेत किया। उस समय शराब की उत्तेजना से उसका चेहरा लाल हो रहा था। उसकी खास बाँदी फहमिदा बाद चुपचाप हाथ बाँधे हुक्म के इन्तजार में खड़ी थी। बेगम ने पूछा—

"हजरत सलामत इस वक्त कहाँ हैं?"

"हुजूर वे अभी गुसलखाने के दरबार में हैं।"

"क्या वाकएनवीस रोजनामचा सुना गया?"

"अभी नहीं हुजूर खुदावन्द इस वक्त हुजूर बड़ी बेगम से कुछ जरूरी मशवरे में मशगूल हैं।"

"तू जा और देख कि वाकएनवीस क्या नई खबर सुनाता है।"

"जो हुक्म।"

"ठहर, खुफियानवीस की दारोगा को यहाँ भेज दे।"

"जो हुक्म," बाँदी अदब से झुककर चली गई।

उसके चले जाने पर शाहजादी ने अपने हाथ से दो प्याला शराब ढाली। उसमें गुलाब मिला और गुलनार गटगट पी गई। इसके बाद उसने प्याला कालीन पर एक तरफ फेंक दिया, और दूर में जलती सुगन्धित कपूरी मोमबत्तियों की तरफ एक टक देखती रही। कुछ ठहर कर उसने दस्तक दी। पहरेदार बाँदी ने हाजिर होकर कोर्निश की।

शाहजादी ने कहा—"क्या तू जानती है कि नर्गिस इस वक्त कहाँ है?"

"वह हुज़ूर के हुक्म के इन्तज़ार में बैठी है।"

"उसे भेज दे, और देख चाहे भी जैसा ज़रूरी काम हो मगर कोई आने न पावे।"

"जो हुक्म।" बाँदी झुककर चली गई।

नर्गिस ने आकर शाहजादी को सलाम किया।

शाहजादी ने मतवाली नज़र से देखकर कहा—

"काम हुआ?"

"जी हाँ, सरकार।"

"मथानी ज्योतिषी मिला?"

"जी हाँ।"

"वह बात कही?"

"हुज़ूर सब ठीक हो गया है।"

"उसने दारा को तेरे कहे मुताबिक बरगलाया?"

"जी हाँ सरकार।"

शाहजादी फिर मसनद पर लुढ़क गई। वह देर तक कुछ सोचती रही। इसके बाद उसने एक प्याला चढ़ाकर कहा—

"दूसरा काम?"

"वह भी हो गया हुज़ूर।"

"इत्मीनान से?"

"जी हाँ खुदावन्द।"

"कौन है वह?"

"हुजूर, एक मशहूर अफीमची है, मैं उसे सूरत से जानती हूँ।"

"काम बहुत नाजुक है।"

"सरकार, आप बेफिक्र रहें।"

"एक प्याला शीराजी का दे।"

बाँदी ने प्याला भर कर पेश किया। बेगम ने कहा—

"बैठ, तीसरा काम?"

"हुजूर, हो गया।"

"कहाँ है?"

"हुजूर के खास कमरे में।"

बेगम ने गले से एक मोतियों की माला उतार कर उसपर फेंकी। फिर मुस्कराकर शराब देने का संकेत किया। बाँदी प्याले पर प्याला देने लगी।

फहमिदा बानू ने आकर आदाब बजाया। बेगम ने नर्गिस से जाने का इशारा किया। उसके जाने पर उसकी ओर झूमते हुए नेत्र घुमाकर कहा—

"बादशाह सलामत क्या आरामगाह में तशरीफ ले गए?"

'जी नहीं हुजूर।"

"वकायेनवीस का रोजनामचा सुन लिया गया?"

"जी हाँ खुदावन्द।"

"कोई खास बात?"

"शाहजादा दारा ने उन बागी कैदियों के हाथ कटवा डाले हैं जो शुजा की लड़ाई में गिरफ्तार हुए थे।"

बेगम ने होंठ काट कर हुँकार भरा। फिर पूछा—"और कुछ?"

"हुजूर, बादशाह सलामत और वली अहद में बहुत दुश्मनी हो रही है।"

"किस अमर में ?"

"बादशाह सलामत फर्मा रहे हैं कि फौरन सुलेमान शिकोह को वापस बुला लो, मगर वली अहद की राय है कि उसे शाहजादा शुजा का बंगाल तक पीछा करने दिया जाय।"

बेगम मुस्कुरा दी—"बहुत खूब फहमिदा बानू, तुम हजरत सलामत के ख्वाबगाह जाने तक वहीं हाजिर रहो।"

"जो हुक्म हुजूर, मगर मुख्तिआरनवीस भी दारोगा ?"

"वह सुबह गुस्ल के बाद हाजिर हो।"

"जो हुक्म" कह कर फहमिदा बानू चली गई। बेगम ने दस्तक दी। नर्गिस आ हाजिर हुई।

"भवानी ज्योतिषी ने दारा से क्या कहा था ?"

"हुजूर, उसने उन्हें समझा दिया है कि सुलेमान शिकोह इस मुहिम में पूरी फतह करके लौटेंगे। उनके सितारे बुलन्द हैं। उसी हाथ उन्हें बंगाल, बिहार और उड़ीसा दखल कर लेना चाहिए।"

"बहुत खूब नर्गिस।"

"हुजूर—"

"तूने कहा—वह खूबसूरत है ?"

"हुजूर अमीरजादा है।"

"शीराजी दे।"

बाँदी ने प्याला भर दिया। बेगम ने प्याला खाली कर कालीन पर लुढ़का दिया। फिर अँगड़ाई लेकर कहा—"चल कमरे खास का रास्ता दिखा।"

बाँदी ने सहारा देकर शाहजादी को उठाया और वह लड़खड़ाती हुई कमरे खास की ओर चली गई।

: २२ :

मीरजुमला का कूच

फ़रमान और फ़ौज का अधिकार मिलते ही मीरजुमला ने फिर दिल्ली में ठहरना ठीक नहीं समझा। उसने अपने और औरङ्गज़ेब के विश्वस्त अमीरों की एक गुप्त सभा की और उसमें भविष्य की सब योजनाएँ तैयार कर तथा अपने गुप्त आदेशों की पूर्ति का प्रबन्ध कर अपने पुत्र अमीर खाँ को सब ऊँच नीच से सावधान कर दिल्ली से तुरन्त कूच बोल दिया। उसने दुरुत्त कूच करते हुए जल्द-से-जल्द दिल्ली से दूर होने तथा औरङ्गज़ेब के निकट होने की चेष्टा की।

मीरजुमला एक मँजा हुआ सिपाही और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। वास्तव में उसका मूल उद्देश्य, इस भारी सेना से औरङ्गज़ेब को लाभ पहुँचाना था। परन्तु एक तो उसका परिवार दिल्ली में दारा के अधिकार में था, दूसरे उसके साथ बादशाह ने जो सिपहसालार और उमराव लगा दिए थे उन पर उसके मन का भेद प्रकट न था और न वह उन पर अपना असल अभिप्राय प्रकट करना ही चाहता था—इसलिए उसे प्रत्येक बात में बहुत सावधानी की आवश्यकता थी।

वह अपने प्रत्येक आचरण से यही प्रकट करना चाह रहा था कि वह प्रत्येक मूल्य पर बादशाह की आज्ञा का पालन करना चाहता है। परन्तु उसका गूढ़ उद्देश्य यह था कि वह औरङ्गज़ेब के यथासम्भव निकट ही रहे और उसके पक्ष में अपनी कूटनीति का दूसरा कदम समय आने पर उठाने में किसी बाधा को अपने बीच न फटकने दे।

सन् १६५६ की सन्धि में मुग़ल साम्राज्य और गोलकुण्डा तथा बीजापुर के दोनों राज्यों की सीमाएँ स्पष्ट निर्धारित हो गई थीं। कृष्णा नदी से कावेरी पार तञ्जौर तक कर्नाटक प्रदेश था जिसमें विजयनगर

राज्य के भग्नावशिष्ट छोटे-छोटे हिन्दू राज्य फैले हुए थे, जिनपर अब मुस्लिम शासकों का आधिपत्य होने लगा था। चिलका झील से पेन्नार नदी तक के प्रदेशों को जीतती हुई गोलकुण्डा की सेनाओं ने उस राज्य की सीमाओं को बंगाल की खाड़ी तक फैला दिया था।

बीजापुर राज्य दक्षिण की ओर बढ़ते हुए जिंजी और तंजौर के किनारों को वश में कर अब पूर्व की ओर बढ़ने लगा। विजयनगर के अन्तिम ध्वंसावशेषों को संगठित करके ही चन्द्रगिरि राज्य की स्थापना की गई थी। पूर्व में नेल्लोर से पांडिचेरी तक और पश्चिम में मैसूर की सीमा तक यह राज्य फैला हुआ था। उत्तर और दक्षिण दोनों दिशाओं में इन दोनों मुसलमानी राज्यों के बीच यह हिन्दू अवशेष राज्य एक प्रकार से घिर ही गया था, और अब बीजापुर और गोलकुण्डा दोनों राज्यों के बीच इसे हड़प लेने की होड़ चल रही थी। अबतक गोलकुण्डा की इस काम में जो प्रगति हुई थी उसका अधिकांश श्रेय मीरजुमला ही को था।

बीजापुर का सुलतान मुहम्मद आदिल शाह मर गया। उसके प्रधान मन्त्री खान मुहम्मद और सुलतान की बेगम बड़ी साहिबा ने मृत सुलतान के १८ वर्षीय पुत्र को अली आदिलशाह द्वितीय के नाम से गद्दी पर बैठा दिया। इस पर दक्षिण के मुगल सूबेदार औरङ्गजेब ने बादशाह को सूचना दी कि अली वास्तव में मृत सुलतान का पुत्र नहीं है। यह एक अनाथ लड़का है जिसे मुहम्मद आदिलशाह ने हरम में रखकर पाला था। औरङ्गजेब ने इस सूचना के साथ ही बीजापुर पर तुरन्त आक्रमण करने की अनुमति भी माँगी थी। उधर आदिलशाह की मृत्यु होते ही कर्नाटक में बड़ी भारी गड़बड़ी मच गई। जमींदारों ने कितनी शाही जमीन अपने अधिकार में कर ली। राजधानी की दशा और भी खराब हो गई। बीजापुर के सरदार आपस में एक-दूसरे से अपने-अपने हाथ में शासन-सत्ता लेने को लड़ने लगे। प्रधान मन्त्री खान बहादुर चारों ओर से इन घरेलू शत्रुओं से घिर गया। इस

मुअज्जम से औरङ्गजेब ने पूरा लाभ उठाया और उन बिगड़ैल सरदारों को तोड़-फोड़ कर एक षड्यन्त्र खड़ा कर दिया। बीजापुर राज दरबार के अनेक सरदार, अमीर, औरङ्गजेब की सहायता करने को तैयार हो गए।

मीरजुमला के दिल्ली पहुँचने से प्रथम ही वहाँ से शाही फर्मान औरङ्गजेब के पास आ गया कि बीजापुर के मामले को जैसा मुनासिब समझो तय कर लो।

परन्तु यह वास्तव में बीजापुर के विरुद्ध स्पष्ट युद्ध-घोषणा थी, जो बीजापुर राज्य के प्रति सरासर अन्याय था। बीजापुर मुगल साम्राज्य का अधीन राज्य न था। मित्र राज्य था। इसलिए मुगल दरबार को उसके भीतरी मामलों में दखल देने का कोई अधिकार न था। परन्तु औरङ्गजेब तो ऐसे ही सुयोग चाह रहा था, और अब वह बड़ी बेचैनी *से मीरजुमला के प्रत्यागमन की राह देखने लगा।*

मीरजुमला बीस हजार सुशिक्षित सैन्य और उमदा तोपखाना लेकर औरङ्गाबाद आ पहुँचा। अब उसने दारा के इस कलम्म की कुछ भी परवाह न की कि औरङ्गजेब से वह दूर रहे। उसने औरङ्गजेब को साथ ले बीदर के दुर्ग का घेरा डाल दिया। वहाँ के किलेदार सिद्दी मरजान ने भारी प्रतिरोध किया पर मीरजुमला के सुशिक्षित तोपचियों के सामने उसकी एक न चली। किले की दीवारें भङ्ग हो गई और दुर्भाग्य से एक गोला बारूद के भरे हुए मकान पर गिरने से किले का आधा भाग एकबारगी ही उड़ गया। मरजान बुरी तरह अपने दो पुत्रों सहित घायल हुआ, और विजयी मुगल नगर में घुसकर लूटमार *मचाने लगे। लाचार मृत्यु-शय्या पर पड़े हुए मरजान ने* अपने सात पुत्रों को किले की चाबी देकर औरङ्गजेब के पास भेज दिया। इस प्रकार केवल २७ दिनों में बीदर का दुर्गम दुर्ग औरङ्गजेब ने जीत लिया। इसमें बहुत-सी सामग्री के साथ नकद बारह लाख रुपए, आठ लाख मूल्य का गोला-बारूद, अनाज और दो सौ तीस तोपें उसके हाथ

लगी। निस्सन्देह इस विजय का श्रेय मीरजुमला को था जिसने अपूर्व दक्षता से सैन्य-संचालन किया था।

इसके बाद उसने महाबत खाँ की कमान में पन्द्रह हजार घुड़सवारों को आगे बढ़ा कर शत्रु के सैनिकों के एकत्र दल को मार भगाने को सभी तरफ दौड़ा दिए। जिन्होंने पश्चिम में कल्याणी और दक्षिण में गुलबर्गा तक के सारे बीजापुर राज्य को लूट कर उसे उजाड़ दिया। बीजापुर के बीस हजार सैनिकों ने प्रमुख बीजापुरी सेनानायक खान मुहम्मद—अफजल खाँ, रण दुल्ला तथा रहाना के पुत्रों के नेतृत्व में कठोर अवरोध किया—परन्तु वीर सेनानी महाबत खाँ के आगे आखिर उनके पैर उखड़ गए।

अब उसने कल्याणी की ओर रुख किया। बीदर से चालीस मील पश्चिम में, गोलकुण्डा से सुप्रसिद्ध तीर्थ तुलजापुर जाने वाले प्राचीन मार्ग पर, एक प्रदेश है, जहाँ चालुक्य राजाओं की प्राचीन राजधानी कल्याणी थी। मीरजुमला ने ताबड़-तोड़ पहुँचकर कल्याणी पर घेरा डाल दिया। किले की रक्षक-सेना दीवारों पर से रात-दिन गोलियों की वर्षा करने लगी। खाइयों में भयानक मारकाट मच गई। किले के चारों तरफ भी छुटपुट आक्रमण-प्रत्याक्रमण होने लगे और यह युद्ध एक गम्भीर रूप धारण कर गया। बूँदी के राव छत्रसाल हाड़ा ने इस युद्ध में वीरत्व प्रदर्शन किया। खान मुहम्मद के घुड़सवारों का उसने बड़े दर्प से अवरोध किया। उधर अफजल खाँ के बेटों ने राव रायसिंह सीसोदिया पर भारी दबाव डालकर उसे घायल कर दिया। अन्त में महाबत खाँ ने आगे बढ़कर उसका उद्धार किया।

इधर जब औरंगजेब किले के घिरे अवरोध को सफल बनाने में व्यस्त था उसे सूचना मिली कि उसके पड़ाव से सिर्फ चार मील दूर तीस हजार बीजापुरी सेना युद्ध को सन्नद्ध खड़ी है। औरंगजेब मीर-जुमला पर किले का भार छोड़ वीरदर्प से अपनी सेना ले आगे बढ़ा। महाबत खाँ, राव छत्रसाल और कुछ सेनानायक उसके साथ थे।

घमासान युद्ध हुआ—और मुगल सेना ने दाएँ-बाएँ ऐसा दबाव दिया कि बीजापुर की सेना के पैर उखड़ गए। वह भाग खड़ी हुई। मुगली सेना पर पीछे से करारी मार पड़ी। सारी ही सेना नष्ट कर डाली गई। बीजापुरी पड़ाव का डाक, गोला, बारूद, तोप, स्त्रियाँ, घोड़े, सामान ढोने वाले जानवर आदि सारा सामान लूट लिया।

उधर मीरजुमला का अवरोध चल रहा था। किलेदार दिलावर, जो अबीसीनिया का निवासी एक हब्शी गुलाम था, बड़ी वीरता से मीरजुमला का मुकाबिला कर रहा था। अन्त में शाही सेना ने खाई पार कर किले की एक बुर्ज पर अपना कब्ज़ा कर लिया और अन्ततः दिलावर ने किले की चाबियाँ औरङ्गजेब को सौंप दीं। उसे पुरस्कृत किया गया तथा बीजापुर लौट जाने दिया गया।

कल्याणी का पतन होने पर बीजापुर के सुलतान ने सन्धि की बात चलाई। दिल्ली में उसके प्रतिनिधि पहुँचे। उन्होंने दारा का अनुग्रह प्राप्त कर लिया और आदिलशाह ने बीदर, कल्याणी और परेण्डा के किले और उनके आस-पास का भूभाग मुगलों को दे दिया। इसके अतिरिक्त क्षतिपूर्ति स्वरूप एक करोड़ रुपया भी दिया। शाहजहाँ ने औरङ्गजेब को तुरन्त लौट आने की आज्ञा दी। मीरजुमला से मिलकर औरङ्गजेब औरङ्गाबाद लौट गया और मीरजुमला ने अपनी समूची मुगल सेना सहित कल्याणी दुर्ग में अपनी छावनी डाली।

: २३

मुगल तख्त डगमग

इसी समय बादशाह दिल्ली में एकाएक बीमार पड़ गया। शाही हकीम उसे आराम करने में सफल नहीं हुए। उसकी बीमारी बढ़ती ही गई। नित्य लगने वाला दरबार भी बन्द हो गया, और झरोखे में बैठ कर दर्शन देना भी बन्द हो गया। शाही हकीमों की मुगल दरबार

में बड़ी भरमार थी। इनकी दरबार में बड़ी इज्जत भी होती थी। इन्हें 'मुकर्रबी उलखवास' का और खाँ का खिताब मिला हुआ था, और इन्हें वार्षिक वेतन बीस हजार रुपए से लेकर दो लाख रुपयों तक मिलता था। परन्तु इनकी योग्यता पुरानी लिखी किताबों तक ही थी। ये साधारण इलाज कर सकते थे पर बड़ी-बड़ी बीमारियों में इन्हें सफलता नहीं मिलती थी।

अनेक फिरंगी डाक्टर भी दरबार में थे जो बहुधा फस्द खोलते और जख्मों को दवादारू किया करते थे। ये सभी हकीम डाक्टर महलसरा में मुर्दा उठा कर ले जाए जाते थे। इनमें से कोई भी बादशाह को आराम नहीं कर सका।

यह बीमारी वास्तव में बादशाह ने अपने ही हाथों मोल ली थी। सड़सठ वर्ष की आयु होने पर भी वह निरन्तर कामशक्तिवर्द्धक और स्तम्भन की दवाइयाँ खाता रहता था—जिन्हें वह पचा नहीं सकता था न उनके विपैले प्रभाव को उसका जीर्णशीर्ण शरीर सह सकता था। परिणाम जो होना था वही हुआ। उसकी मूत्र-पिण्ड-ग्रन्थियाँ बन्द हो गई और उसका मूत्र-प्रवाह रुक गया। रक्त में मूत्र मिल जाने से उसकी दशा संकटापन्न हो गई और वह बहुत कमजोर हो गया।

इस समय दिल्ली का वातावरण अत्यन्त क्षुब्ध हो रहा था। वास्तव में उस प्रबल क्षोभ का उत्पन्न करने वाला प्रमुख सूत्रधार मीरजुमला था। दिल्ली में वह यद्यपि एक सप्ताह भी नहीं ठहरा था परन्तु इसी बीच में वह अपनी ऐसी कूटनीति का जाल दिल्ली दरबार में बिछा गया था कि बादशाह के बीमार पड़ते ही बादशाह के कैद होने, मरने तथा बहुत बीमार होने की अफवाहें साम्राज्य भर में फैल गईं और जब तक अमीर मीरजुमला नर्मदापार पहुँचे तब तक तो साम्राज्य भर में उपद्रव और अराजकता के लक्षण दीखने लगे थे।

मीरजुमला की फैलायी हुई अफवाहों में खूब अंकुर उगा था। बादशाह की बीमारी में दारा और बेगम जहाँआरा ने बादशाह की

-बड़ी सेवा की थी। शाहजहाँ अब जीवन से निराश हो गया। उसने रोगशय्या पर ही एक खास दरबार किया और सब दिल्लीवासी और बड़े-बड़े अमीरों को बुला कर अपनी अंतिम इच्छा प्रकट की कि वे अब दारा ही को बादशाह मान कर उसकी आज्ञा का पालन करें। परन्तु दारा ने राज्यारोहण नहीं किया—पिता के नाम पर ही शासन कार्य करता रहा। उसने मीरजुमला को प्रधान मन्त्री के पद से बर्खास्त कर दिया और महावत खाँ आदि सेनापतियों को सेना सहित दक्खिन से लौट आने की आज्ञाएँ प्रचारित कर दीं। रोगशय्या पर बादशाह बुरी बुरी खबरें सुनने लगा। सब से पहिले सुलतान शुजा ने, जो बंगाल का सूबेदार था—अपने को बादशाह घोषित कर दिया, और बेशुमार फौज भरती करना आरंभ कर दिया। उसने उस प्रान्त के शहरों और जमींदारों से लूट-मार कर बहुत-सा धन एकत्र कर लिया था। इससे वह बहुत जल्द एक भारी सेना का अधिनायक बन गया, और उसने आगरे की ओर कूच बोल दिया।

उसने अपने लश्कर में यह बात प्रसिद्ध कर दी कि दारा ने बादशाह को जहर देकर मार डाला है, इसलिए हम इस नक़ली नाटक और इसके नाशाइस्ता का बदला लेंगे और तख्ते ताऊस को, जो खाली है, कुबूल करेंगे। उसे दरबार के शिया ईरानी अमीरों का बहुत भरोसा था, जिन्हें अपने पक्ष में करने को उसने स्वयं शिया धर्म का बाना पहिना था—और रुपया पानी की भाँति लुटाया था।

दक्खिन और गुजरात में औरंगजेब और मुराद ने भी यही किया। औरंगजेब तो पहिले से ही चौकन्ना बैठा था। उसने तुरन्त ही अपनी तैयारियाँ आरम्भ कर दीं। वह शीघ्रता से खजाना और फौजें संग्रह करने लगा। चारों भाई अपने अपने मित्रों और सहायकों को इकट्ठा करने लगे। दरबार में सभी के दोस्त दुश्मन थे, परन्तु परिस्थिति ऐसी थी कि किसी को न अपने दोस्त पर भरोसा था न दुश्मन पर।

सच पूछा जाय तो यह कहना ही संभव न था कि कौन किसका दोस्त है और कौन किसका शत्रु।

इन तमाम खबरों से राजधानी में अन्धेर मच गया था, और बादशाह रोगी और कमजोर होने पर भी आगरा को चल पड़ा। आगरे आकर दारा ने बेशुमार फौज भरती करना शुरू कर दी तथा आगरा और देहली नगर का प्रबन्ध खास अपने हाथ में ले लिया। इस सम्बन्ध में उसने बादशाह के हुक्म की भी परवाह न की। उसे डराया और धमकाया भी। इससे बादशाह बहुत भयभीत और शंकित हो गया। अब वह रोगी, भावुक और बूढ़ा बादशाह प्रतिक्षण अपने प्यारे पुत्र दारा पर शक करके यह भय करने लगा कि कहीं यह मुझे विष देकर मार डाले या कैद न कर ले।

विद्रोहियों के अनेक पत्र और वक्तव्य दारा ने प्रकट करके बादशाह को दिखाए। बेगम जहाँआरा ने भी बहुत हाथ-पैर मारे पर बादशाह तो जड़ हो गया। उसे किस पर भरोसा करना चाहिए यह भी वह नहीं सोच सका। इन सब दुश्चिन्ताओं के कारण बादशाह की बीमारी और कमजोरी भी बढ़ गई। परन्तु उसने दैनिक दरबार करना नहीं छोड़ा। दूर-दूर के हाकिमों को अपनी तन्दुरुस्ती और जिन्दा रहने के परचे लिखवा दिए। इसी प्रकार के पत्र उसने अपने उन पुत्रों के पास भी लिखवाए जो फौजें लिए आगरे की ओर बढ़ चुके थे।

जब बादशाह का एक ऐसा ही पत्र शुजा को मिला तो उसने जवाब में बादशाह को लिखा—"मुझे बन्दगानेआला की सलामती पर यकीन नहीं आता, और बिलफर्ज हुजूर जिन्दा और सलामत हैं तो कमजोरी हासिल करके और इरादे व मकसद से उकताए होने की मुझे कभी तमन्ना है।" इसी प्रकार की बदगुमानियाँ दूसरे शाहजादों ने भी कीं। इसका परिणाम यह हुआ कि लोग खुलेआम कहने लगे कि अब तलवारें ही चारों शाहजादों की किस्मतों का फैसला करेंगी। परन्तु इस युद्ध में केवल दो ही बातें थीं—या तो तख्त या मृत्यु। उधर इस भावी

फूला कर कुप्पा हो जाता, और बहुधा उन्हें अपने मुसाहिबों को पढ़-पढ़ कर सुनाया करता था।

इस प्रकार जब उसने दारा और बादशाह का दिल मुट्ठी में ले लिया तो उसने दारा को लिखा कि आप किसी तरह यहाँ से मेरी बदली करा दें। मैं यहाँ बीमार रहता हूँ और यहाँ का जलवायु मेरे अनुकूल नहीं है। यदि मुझे दक्षिण भेज दिया जाय तो मैं प्रसन्नता से वहाँ जाना स्वीकार कर लूँगा।

परन्तु वास्तव में दक्षिण जाने का उसका गूढ़ उद्देश्य यह था कि गोलकुण्डा और बीजापुर की राजधानियों के निकट रहने से उसे अधिक-से अधिक सेना रखने और कभी-न-कभी उन इलाकों पर हमला करने के सुअवसर प्राप्त हो ही जायेंगे। फिर वहाँ की उपजाऊ भूमि, हीरों की खानें, समुद्र का किनारा, तथा भाँति भाँति की वस्तुओं की प्राप्ति की सुविधाएँ थीं।

परन्तु मूर्ख दारा इन बातों पर विचार नहीं कर सका। वह उसके झाँसे में आ गया। उसने बादशाह को समझा-बुझा कर औरंगजेब को दक्षिण भेजने की आज्ञा दिलवा दी। बादशाह ने बहुत कहा कि तुम आस्तीन के साँप को पत्ते बाँटते हो। खबरदार रहो, पछताओगे। पर उसने हँस कर टाल दिया।

दक्षिण पहुँचते ही औरंगजेब ने पैर फैला दिए। उसने पहले औरंगाबाद नाम का एक नया नगर बसाया। और वहाँ बैठ कर और बढ़िया-बढ़िया महल बना कर अपनी कुटिल राजनीति का चक्र चलाने लगा। भाग्य से उसका चक्र चल भी गया। मीर जुमला की मैत्री उसे अनायास ही मिल गई। पाठक जानते ही हैं कि किस प्रकार गोलकुण्डा पर अवसर पाकर उसने छापा मारा। यद्यपि बादशाह के हुक्म से उसके पंजे से गोलकुण्डा निकल गया था और इससे वह बहुत खीझ भी गया था, परन्तु उसने उसकी आशा नहीं छोड़ी। दोनों

धुन के पक्के मित्र परस्पर मिलकर नए-नए मन्सूबे गाँठ रहे थे। इतने ही में बहुदर्शी बादशाह ने मीरजुमला को दिल्ली दरबारे शाही में बुला भेजा।

अब औरंगजेब क्या करे? वह औरंगाबाद में बैठा अनेक जासूसों द्वारा दिल्ली के समाचार मँगा रहा था। दरबार में मीरजुमला की जो प्रतिष्ठा हुई थी वह सब सुन चुका था और चतुर मीरजुमला ने किस कौशल से बादशाह का मन दक्खन पर चढ़ाई करने का इरादा पक्का किया था वह भी वह सुन चुका था। अब वह इस प्रतीक्षा में था कि मीरजुमला क्योंही एक सुगठित सेना और उमदा तोपखाना लेकर दक्खिन में आये तो वह भी अपने मनसूबे पूरे करे। मीरजुमला का तो यही इरादा था। अतः उसके आते ही दोनों ने झटपट बीदर और कल्याणी का दुर्ग जय करके बीजापुर राज्य को आघात पहुँचा दिया। अब मीरजुमला को कल्याणी के दुर्ग में शाही सेना सहित व्यवस्थित करके वह अपनी भावी योजना बनाने औरंगाबाद आ बैठा।

अभी औरंगाबाद पूरा आबाद न हो पाया था। शाही महल बनते जा रहे थे। फौजों की बारकें बन रही थीं। हजारों मजदूर और कारीगर काम कर रहे थे। बड़े बड़े बाजार तैयार किए जा रहे थे और देश देश के व्यापारियों को भारी भारी सुविधाएँ दे दे कर वहाँ बसाया जा रहा था।

अपनी बारहदरी में औरंगजेब एक चटाई पर बैठा हुआ फुरमान लिख रहा था। पास ही तसबीह रखी थी। दो-तीन गुलाम कुछ दूर पर हाथ बाँधे खड़े थे। दिल्ली से एक जरूरी सन्देश का जवाब आने की प्रतीक्षा में वह कुछ विकल सा हो रहा था। कभी-कभी वह बड़बड़ा उठता और हाथ का काम रोक देता था। कुछ ठहर कर उसने मीर बाबा को तलब किया। मीरबाबा आदाब बजा कर चुपचाप सामने बैठ गया। औरंगजेब ने कहा—

'भाई जान, आप दीनदार बंदे हैं, आखिर को आप से पहले

ही पहुँच जाना चाहिए था। बुरहानपुर तक तो वह आ चुका है—तुमने कहा था।"

"जी हाँ, और उसे आज यहाँ ज़रूर पहुँच जाना चाहिए।"

ये बातें हो ही रही थीं कि क़ासिद के आने की सूचना मिली। औरंगज़ेब ने तुरन्त उसे सामने बुला भेजा। क़ासिद बहुत थका हुआ था। उसने औरंगज़ेब को तीन थैलियाँ दीं। तीनों थैलियाँ कमख़ाब की थीं और उन पर बहुत क़ीमती ज़री का काम हो रहा था। तथा तीनों पर बाक़ायदा सील-मुहर थी। उनमें एक ख़त बादशाह का था, दूसरा मीरजुमला का और तीसरा उसकी प्यारी बहिन रोशनआरा का था।

तीनों ख़तों की सील-मुहर को बहुत सावधानी से देखने के बाद उसने पूछा—

"ज़बानी ख़बर क्या है?"

दूत ने और निकट आकर धीमे स्वर से कहा—

"हुज़ूर, अमीर मीरजुमला बहुत बड़ी शाही फ़ौज और तोपख़ाना लेकर दक्खन आ रहे हैं। दिल्ली के अनक़रीब तमाम अमीर दारा से बदज़न हो गए हैं और हुज़ूर का साथ देने को तैयार हैं।"

औरंगज़ेब ने दोनों होठों को बन्द करके आकाश की ओर दृष्टि की। फिर कहा—

'और बादशाह सलामत?'

"हुज़ूर, वे सुबह के चिराग हैं। इस वक़्त तो बादशाह दारा हैं, मगर दरबार में उनके दोस्त बहुत कम हैं।" कुछ देर चुप रह कर औरंगज़ेब ने उसे जाने का संकेत किया—फिर ख़तों को अच्छी तरह देख कर मुस्करा दिया। उन्हें मीरबाबा के सुपुर्द करके कहा—"आज रात को इन पर ग़ौर किया जायगा।"

मीरबाबा ने अदब से ख़तों को सम्हाल कर कहा—'अब हज़रत, आप उठिए और भीतर महल में तशरीफ़ ले चलिए।'

औरङ्गजेब कुछ सोचता हुआ उठा और धीरे-धीरे भीतर चला गया। उसकी तसबीह और कुरआन शरीफ वहीं चटाई पर पड़ी रह गई।

: २५

औरङ्गजेब का हरम

इस समय तक इस फकीर शाहजादे के हरम में केवल तीन बेगमें थीं। बादशाह बेगम दिलरस बानू थी। वह फारस के शाहंशाह इस्माईल सफवी के छोटे पुत्र के प्रपौत्र शाहनवाज की मलकेदार बेटी थी। अब से बीस वर्ष पूर्व इसका विवाह औरङ्गजेब के साथ आगरे में बड़ी धूमधाम से हुआ था। उस समय औरङ्गजेब की आयु केवल उन्नीस वर्ष और बेगम की उससे कम की थी। प्रारम्भ में दोनों पति पत्नियों में प्रेम रहा—परन्तु शीघ्र ही दोनों में खिंच गई। वास्तव में यह बड़े तीखे स्वभाव की स्त्री थी और उसे अपने फारस के राजवंश का बड़ा घमण्ड था। वह सदा अपने को मुगलों से श्रेष्ठ समझती थी। इस समय तक इसकी चार सन्तान हो चुकी थीं। सबसे बड़ी पुत्री जेबुन्निसाँ थी जो इस समय उन्नीस वर्ष की नवयुवती थी। उसमें पिता की तीव्र बुद्धि और अपनी माता का साहित्य-विवता थी। इसी उम्र में उसे पढ़ने लिखने का गहरा शौक हो गया था और उसने अनेक पुरुष नई-नई पुस्तकों की नकल करने को नियुक्त कर दिए थे, जो निरन्तर उसके पसन्द के ग्रन्थ नकल करते रहते थे। उनका वेतन वह अपने निजू कोष से देती थी। वह स्वयं भी अच्छी कविता करने लगी थी। सात वर्ष की अवस्था में जब उसने कुरान कण्ठस्थ करके अपने पिता को सुनाया तो औरङ्गजेब ने बड़ी धूमधाम से इसका उत्सव दिल्ली में मनाया था—सारी सेना को दावत दी थी। इसके अतिरिक्त तीस हजार अशर्फियाँ गरीबों को बाँटी थीं। साम्राज्य भर में अनेक

मनाया गया था तथा दफ्तर बन्द रहे थे। जेबुन्निसाँ अरबी की भी बड़ी पण्डित थी। वह स्वयं नस्तालीक, नस्ख, और शिकस्त खत लिखने में प्रवीण थी। उन दिनों काश्मीरी लोग नस्तालीक लिखने में होशियार होते थे। उनसे लिखवा-लिखवा कर वह पुस्तकें संग्रह करती थी। बड़े होने पर उसने अरबी और फारसी दोनों भाषाओं में काव्य-रचना की। उसने अपना उपनाम 'मख्फी' रखा था। नासिर अली, सरहिन्दी अमान, शाहजहानी ठट्ठा, ब्राह्मण महराज के सत्संग से वह अध्यात्मानन्द लेती थी। उसका मन सूफी सिद्धान्तों पर ढल गया था। वह पिता की भाँति कट्टर न थी और अपना सारा वेतन विद्वानों और कवियों को पुरस्कृत करने में खर्च कर देती थी।

औरङ्गजेब और दिलरस बानू की दूसरी सन्तान जीनतुन्निसाँ थी। जो इस समय चौदह साल की किशोरी थी। आगे चलकर वह बादशाह बेगम के नाम से प्रसिद्ध हुई और दक्षिण में औरङ्गजेब की मृत्यु के बाद भी कोई पच्चीस वर्ष तक शाही राजघराने का सारा काम-धन्धा देखती रही। वह एक पवित्र और दानशीला महिला थी।

इसकी तीसरी सन्तान जुबदतुन्निसाँ थी जो इस समय छः साल की थी। इसका विवाह आगे चलकर भाग्यहीन दारा के दूसरे पुत्र सिपर शिकोह के साथ हुआ था।

चौथी सन्तान मुहम्मद आज़म शाहजादा था—जिसकी आयु इस समय चार साल की थी।

दिलरस बानू इस समय रुग्णा और रोगिणी थी—और शाही हकीम उसकी देखभाल कर रहे थे। दिल न मिलने पर भी इस बेगम को औरङ्गजेब बहुत चाहता था—उससे भय भी खाता था।

औरङ्गजेब की दूसरी बेगम रहमत-उन्निसाँ थी, जो महलों में नवाब बाई के नाम से मशहूर थी। यह काश्मीर के अन्तर्गत राजौरी राज्य के राजा राजू की पुत्री थी। पहाड़ी राजपूत घराने में उसका जन्म हुआ था। शाहजादा मुहम्मद सुलतान और मुअज्जम दोनों

शाहजादे इसी के पुत्र थे। इन शाहजादों की इस समय आयु क्रमशः अठारह और चौदह साल की थी। इसी बेगम की एक खूबसूरत शाहजादी बदरुन्निसाँ थी जिसकी आयु इस समय दस साल की थी।

'औरङ्गाबादी महल' नाम की एक और बेगम औरङ्गजेब के हरम में थी, जिसे हाल ही में उसने हरम में दाख़िल किया था।

परन्तु इस समय इस फकीर और ढोंगी शाहजादे के हरम में सबसे दिलचस्प हीराबाई थी, जो औरंगजेब के मन पर चढ़ गई थी और उसे मनमाना नाच नचाती थी। वह एक असाधारण सुन्दरी, चञ्चल और नृत्य-संगीत में निपुण भी थी। महल में वह ज़ैनाबादी के नाम से प्रसिद्ध थी।

इसका क़िस्सा ऐसा है कि मीर ख़लील नामक एक व्यक्ति के साथ औरंगजेब की माँ की बहिन का रिश्ता हुआ था। उसकी मौसी उन दिनों बुरहानपुर में रहती थी और वह वियोगी लौंडी उसकी गुलाम थी। असल के किसी बर्दाफरोश से उसने इसे बड़े दामों में ख़रीदा था और स्वयं मीरख़लील भी इस पर लट्टू था।

औरंगजेब की तवाज़ा का भार उसकी मौसी ने इसी चंचल लौंडी को सौंप दिया और औरंगजेब उस पर इस क़दर लहालोट हो गया— कि मौसी की ख़ुशामद-चप्पो करके उससे इसे माँग लिया। बूढ़ी मौसी को सौतिया डाह मिटी और इस लड़की को बूढ़े के स्थान पर तरुण स्वामी मिल गया।

इस लड़की दासी का औरंगजेब पर उन दिनों ऐसा नशा छाया हुआ था कि राजकाज से फ़ारिग होते ही वह उसी के महल में आ पहुँचता था। वहाँ उसे शराब भी पीनी पड़ती थी और उसका नृत्य संगीत भी देखना पड़ता था।

२६

हीराबाई

कमरा छोटा था किन्तु सुरुचिपूर्ण ढंग से सजा था, फर्श पर कीमती ईरानी कालीन बिछे थे, खम्भों और महराबों पर मोलसिरी के ताजे फूलों की मालायें लटकी हुई थीं। तीन-चार हजारा फानूसों में सुगन्धित मोमबत्तियाँ जल रही थीं। उस कमरे में वह अनिन्द्य सुन्दरी बाला मसनद पर अलसाई पड़ी अपनी कोमल उँगलियों से पास पड़े एक दिलरुबा के तारों को छेड़ रही थी। वह अप्रतिम सुन्दरी बिलकुल नवोढ़ा बाला थी। एक ढीली-ढाली पोशाक अस्त-व्यस्त उसके अंग पर पड़ी थी। वह पोशाक इतनी बारीक थी कि उसमें छनकर उसका अंग आर-पार साफ दिखाई दे रहा था। वह पोशाक महीन ढाके की मलमल की थी। उसका रंग यद्यपि सफेद था पर उस चम्पकवर्णी के अंग का नवीन केले के पत्ते के समान रंग छन-छन कर जो फूट आ रहा था, उससे वह पोशाक भी चम्पकवर्णी-सी दीख रही थी। एक कमख्वाब की बास्कट उसके वक्ष को छू रही थी। और एक महीन रेशमी इजारबन्द उसकी कमर में लिपटा हुआ था। उसके सुनहरे सुघड़ नंगे पाँव उस रंगीन कालीन पर ताजे गुलाब के फूलों के ढेर से दीख पड़ रहे थे।

उसका सौन्दर्य उत्तेजक था और देह की गठन निराली। उसकी चमकीली और घुँघराली जुल्फें उसके चाँदी के समान चमकते माथे पर अठखेलियाँ कर रही थीं। उसके शरीर पर बहुमूल्य मोती और हीरे के अत्यन्त सुघड़ कारीगरी से बनाए अलंकार थे। उसकी आँखें काली, बड़ी-बड़ी और कटीली थीं। संक्षेप में वह वासना की जीती जागती मूर्ति थी। विचारों की लहर मनमें उठते ही उसका चेहरा

चेहरा गुलाबी हो जाता था। उसका हास्य निराला था और उसके लाल अधरों पर धवल दन्तपंक्ति की बहार मन को पागल कर देती थी।

उसकी कमर में एक काश्मीरी शाल बंधी थी। सुराहीदार गर्दन में बड़े-बड़े मोतियों की माला और शुभ्र मृणाल में जड़ाऊ पहुँचियाँ पड़ी थीं। नीचे जो सलवार पहने थी वह गुलाबी साटन की थी—जिस पर सलमे-सितारे का बहुत उमदा काम हो रहा था।

कमरा सुगन्ध से महक रहा था और वहाँ की मधुर रोशनी छिटकी हुई चाँदनी का आनन्द दे रही थी।

इसी पारे की भाँति चपल सुन्दरी का नाम हीराबाई था। उसे पाकर औरंगजेब का सूनापन दूर हो गया था। सदैव का गम्भीर, शुष्क और मक्कार औरंगजेब इस चपला नारी के सामने आकर दीवाना हो जाता था और प्यासी चितवनों से देखता नहीं अघाता था।

औरंगजेब को धीरे धीरे कमरे में आते देख सुन्दरी खिलखिला कर हँस पड़ी। हँसते-हँसते वह फर्श पर लोट गई। उसे इतने जोर से हँसती देख औरंगजेब ने मुस्करा कर कहा—"इस कदर क्यों हँसती हो जान?"

"वाह हुजूर हँसू भी नहीं। आप की भी क्या चाल है, ऐसी चुपके-चुपके चलते हैं जैसे बिल्ली चूहे को पकड़ने चलती है। वाह! यह भी कोई चाल है?"

इस मस्ती में उस कुटिल राजकुमार की गम्भीरता नष्ट हो गई। उसने हँसकर कहा—

"यह चूहे को पकड़ने की चाल है, यह चूहा पकड़ा!' औरंगजेब ने लपक कर सुन्दरी की कमर को दबोच लिया। दोनों पास बैठ गए। परन्तु औरंगजेब के चेहरे का देखकर वह फिर हँस पड़ी। मतलब न समझने पर भी औरंगजेब भी हँस दिया। उसने कहा—

"क्या कर रही थी दिलबर?"

"मैं कुछ सोच रही थी।"

"क्या सोच रही थी ?"

"एक बात ?"

"कौन बात ?"

"हुजूर के सुनने की नहीं है।"

"सुनूँ तो ?"

"न कहूँगी।"

"कहो प्यारी।"

"अच्छा कान में।"

सुन्दरी चुपचाप औरंगजेब के कान के पास मुख ले गई और झट से उसका मुँह चूम लिया।

"आह, बात कहो जानेमन।"

"यही तो बात थी हुजूर।"

"इसी बात को सोच रही थी तुम ?"

"जी हाँ।"

"दिलबर, तुम मुझे इतना प्यार करती हो ?"

"चाहए, मैं क्यों प्यार करती ?"

"हीरा", औरंगजेब का स्वर काँपा—वह कूटनीति और कपट का पुतला इस चंचल बालिका के सम्मुख प्रेम में विभोर होकर अपने को भूल गया। उसने कस कर उसे छाती से लगा लिया।

हीराबाई ने कहा—"अच्छा एक बात बताइएगा ?"

"कौन-सी बात दिलजिगर ?"

"बादशाह होने पर आप लौंडी को याद रखेंगे ?"

"लौंडी को ? प्यारी, तुमसे किसने कहा कि मैं बादशाह होना चाहता हूँ।"

"मैं खुद कहती हूँ शाहजादे, मैं किसी दिन तुम्हारी इस तसबीह को तोड़ दूँगा। तुम्हें बादशाह बनना होगा।"

"किस लिए।"

"मेरे लिए।"

"तुम्हारे लिए?"

"हाँ हाँ, मैं शान से मलिका बन कर मसनद पर बैठना चाहती हूँ। और जब आप दरबारे आम से आया करेंगे तो मैं आपकी पेशवाई करूँगी। तब महल की औरतें मुझ पर रश्क करेंगी। मेरे शाहजादे, मैं इसका हमेशा सपना देखती रहती हूँ।"

"सपना देखती रहती हो?"

"हाँ हुजूर।"

औरंगजेब गम्भीर हो गया। उसने धीमे अस्फुट स्वर में कहा—

"भोली जान, प्रेम और सपना ही तुम्हारी दुनिया है।"

"और आपकी दुनिया? कुरान शरीफ, फकीर लोगों से घुसपुस-घुसपुस बातें करना, कुछ सोचना, आसमान की ओर देखना, किसी की तरह चलना, कभी न हँसना, न बोलना—यही न आपकी दुनिया है? जाइए मैं आपसे नहीं बोलती—"

औरंगजेब ने काँपती आवाज से कहा—"हीरा प्यारी हीरा—"

परन्तु हीराबाई ने एकदम नाराज होकर कहा—

"मैं कहती हूँ कि मैं आपकी इस दुनिया में आग लगा दूँगी। मुझे ये सब बातें पसन्द नहीं हैं। आपको बादशाह होना होगा।"

औरंगजेब ने उत्तेजित होकर कहा—

"जान!"

"ठहरिये हजरत", उसने दस्तक दी। बाँदी दस्तबस्ता आ हाजिर हुई। हीराबाई ने इशारा किया। वह शराब का प्याला ले आई और उसे सामने रखकर चली गई। हीराबाई ने भर कर कहा—"पीओ।"

"आह, क्या करती हो जान? नहीं, यह नापाक ..."

"नापाक बात मत कहो—पीओ।"

"ठहर जान।"

"पीओ—पीओ—पीओ प्यारे," उसने औरंगजेब के गले में हाथ

मुगलों से तंग आकर गोलकुण्डा का सुलतान तो एकबारगी ही शिवाजी से जा मिला। बीजापुर पर सिकन्दर और दिवकिचाइर के बाद शिवाजी के आसरे आ खड़ा हुआ। खास कर जब आदिल शाह द्वितीय शराब और औरतों में मस्त रहने लगा, और दरबार के अमीर सुलतान और राजधानी पर अधिकार जमाने लगे—तब नाबालिग सुलतान सिकन्दर के गद्दी पर बैठते ही बीजापुर की हालत एकदम बिगड़ गई और इस सुअवसर से शिवाजी ने पूरा लाभ उठाया।

शिवाजी ने मुगलों की ईमानदारी पर तनिक भी विश्वास नहीं किया। इसी से उसने दक्षिण में मुगल प्रदेश को हथियाने का कोई सुअवसर नहीं छोड़ा। बीजापुर को बिना दबोचे वह अपना उत्थान न कर सकता था परन्तु जब आदिलशाही मन्त्रियों ने उसके साथ समझौता कर लिया तो उसने बीजापुर को सताना छोड़ दिया।

सन् १६५८ में औरङ्गजेब मुगल तख्त का दावेदार बनने के लिए दक्षिण से चला और २४ वर्ष बाद सन् ८२ में वापस लौटा तो यहाँ उसे पूरे पच्चीस वर्ष घोड़े की पीठ पर ही व्यतीत करने पड़े। इस बीच के २४ वर्षों में दक्षिण में पाँच सूबेदारों ने शासन किया। इस बीच न कोई निर्णयात्मक विजय हुई न युद्ध। जो युद्ध हुए वे सफल नहीं हुए। शाहजादा शाह आलम विलासी और आरामतलब आदमी था। शराब में मस्त मुस्ताहुर की स्त्रियों में मौज मजा करना उसे पसन्द था। उसका सेनापति दिलेर खाँ की उससे कभी ताल मेल नहीं खाई और वह शाहजादे की आज्ञाओं की कभी परवाह भी न करता था। वे दोनों परस्पर विरोधी उद्देश्यों पर चलते रहे। अन्य सेनानायकों में हिन्दू नायक इस हिन्दू धर्म-उद्धारक नए मराठा राज्य से सहानुभूति और प्रेम रखते थे। पीछे शाहजादा अकबर का विद्रोह करके शम्भु की भी शरण जाना दिल्ली तख्त के लिए एक नए संकट का सन्देश लाया जिसका सामना करने को औरङ्गजेब को दक्षिण आना और निरन्तर २५ वर्ष युद्ध करना पड़ा।

अब यहाँ ज़रा मराठों की जन्मभूमि की भौगोलिक दशा पर भी विचार कीजिये। पश्चिमी घाट और हिन्द महासागर के बीच एक लम्बी किन्तु सँकरी जमीन का हिस्सा दूर तक चला गया है। इसकी चौड़ाई कहीं कम और कहीं अधिक है। बम्बई और गोआ के बीच के इस प्रदेश को कोंकण कहते हैं। गोआ के दक्षिण में कनाड़ा प्रदेश शुरू हो जाता है। कोंकण में अधिक बरसात होती है। यहाँ की मुख्य पैदावार चावल है। आम, केला और नारियल के बाग यहाँ बहुत हैं। घाट पार करने पर पूर्व दिशा में लगभग बीस मील चौड़ा भूखण्ड है जो लम्बा चला गया है। यही 'मावल' कहलाता है। यह भूभाग ऊँची नीची घाटियों से परिपूर्ण है। समतल स्थान बहुत कम है। इससे आगे पूर्व की दिशा में पश्चिमी घाट की पहाड़ियों की ऊँचाई कम होने लगती है, यहीं से 'देश' नामक प्रदेश का प्रारम्भ होता है। यह एक लम्बा-चौड़ा उपजाऊ मैदान है जहाँ की मिट्टी काली है और जो दक्षिण के मध्य भाग में दूर तक फैला हुआ है। यहाँ के लोग सीधे-सादे और परिश्रमी हैं।

सोलहवीं शताब्दी में अन्य अन्य जातियों की अपेक्षा मराठों में सामाजिक भेदभाव कम था। पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में जो संत मराठों में जन्मे, उन्होंने जन्म की श्रेष्ठता पर चरित्र की श्रेष्ठता को उच्च बताया। मराठा समाज की भाषा और साहित्य यद्यपि उन दिनों अविकसित थे, पर उसमें एकता के भाव थे। इसी मराठा जाति को सत्रहवीं शताब्दी के द्वितीय चरण में शिवाजी ने राजनैतिक एकता में खींच कर जीवन से परिपूर्ण कर दिया। शिवाजी की सेना में कुर्मी और मराठा सैनिक थे। जो स्वभाव ही से सीधे, निष्कपट, स्वच्छन्द और परिश्रमी थे। ईसा की १४वीं शताब्दी में जब मुसलमानों ने दक्षिण भारत अधिकृत कर लिया और मराठों के अंतिम हिन्दू राजा का भी अंत हो गया तब इस प्रदेश के योद्धाओं के छोटे-छोटे दल भिन्न-भिन्न नायकों के नेतृत्व में संगठित हो गए। इन दलों को यह

लेकर मुसलमान नायकों ने अपने-अपने वश में समय-समय पर किया ? इस प्रकार शिवाजी के उदय से पूर्व अनेक मराठा घरानों ने अपने पार्श्ववर्ती मुस्लिम शासक की सहायता करके अपनी धन-दौलत खूब बढ़ा ली थी।

इसी प्रकार का एक संपन्न घराना भोंसलों का था। जो पूना प्रान्त में पाटस नामक ताल्लुके में रहता था। और वहीं के दो गाँवों की पटेली करता था। ये खेती करते थे और अपने धार्मिक जीवन और उदार व्यवहार के कारण आस-पास बहुत प्रसिद्ध थे। संयोग से उन्हें खेत में गड़ा हुआ धन भी मिल गया, जिससे उन्होंने शक्ति और पीछे चौधरी और निजामशाही राज्य के सेनानायक बन गए। मालोजी के ज्येष्ठ पुत्र शाहजी भोंसले भी ऐसे ही एक नायक थे। वे निजाम शाह के वजीर मलिक अम्बर की वज़ारत के दिनों में अपने कुटुम्ब की छोटी-सी टुकड़ी के नायक होकर नौकर हुए थे। पीछे मलिक अम्बर की मृत्यु होने पर वे पहले मुगलों से फिर बीजापुर से जा मिले। पीछे उन्होंने शक्ति प्राप्त कर निजाम शाह के एक शाहजादे को नाम मात्र के लिए गद्दी पर बैठा कर—पूना और चाकण से लेकर बालाघाट तक के सारे प्रदेश तथा जुन्नर, अहमदनगर, संगमनेर, त्र्यम्बक, नासिक आदि स्थानों के आस-पास का सारा निजामशाही इलाका छीन लिया। और इस सुलतान के नाम से तीन वर्ष तक सारा ही राजभार सम्हाला।

अंत में मुगलों की एक बड़ी सेना से उन्हें युद्ध में परास्त होना पड़ा और वे महाराष्ट्र छोड़ कर बीजापुर चले गए।

सन् १६३७ के लगभग शाहजी जब फिर बीजापुर की नौकरी पर आए तब मुगल साम्राज्य की दक्षिणी सीमाएँ निश्चित हो चुकी थीं। इसलिए वे अपने नए स्वामी के लिए तुङ्गभद्रा और मैसूर के पठार की ओर और फिर वहाँ से मद्रास के समुद्री तट की ओर के प्रदेश जीतने चले गए।

शिवाजी इन्हीं शाहजी के दूसरे पुत्र थे। परन्तु शिवाजी और

उनकी माता उपेक्षित थे। वे उनके कर्मचारी दादाजी कोण्डदेव की देख रेख में पूना में अपनी माता के साथ रहते थे। पति की उपेक्षा के कारण जीजी बाई की वृत्तियाँ अन्तर्मुखी हो गई थीं और उनकी स्वाभाविक धार्मिक भावनाएँ उभर आई थीं, जिनका शिवाजी पर काफी प्रभाव पड़ा। वे अकेले थे। साथ खेलने को कोई भाई-बहन न था। इस एकाकीपन ने माता-पुत्र को एक दूसरे के प्रति समीप ला दिया और वे माता को देवी की भाँति पूजने लगे। साथ ही वे स्वावलम्बी भी हो गए, और बिना ही किसी की सहायता के अपने संगी-साथी मराठा लड़कों को जोड़ कर अपना दल बना लिया। वे शस्त्र बाँध घोड़े पर चढ़ कर वनों और पर्वतों में साथियों सहित चक्कर लगाया करते, उनके संगी-साथी मावली बालक थे। इस प्रकार उन्हें कठोर और परिश्रमी जीवन का अभ्यास हो गया और स्वतन्त्रता से प्यार हो गया। मुसलमानों की अधीनता में दासता करने से वे घृणा करने लगे। १६४१

जिन दिनों औरंगजेब बलख-बुखारे का सूबेदार था, शिवाजी को दक्षिण में उदय होने का अवसर मिला। बीजापुर का सुलतान मुहम्मद आदिलशाह सख्त बीमार पड़ा और दस साल रोग-शय्या पर पड़ा रहा। इन दस वर्षों तक उसकी राज्य-व्यवस्था बड़ी ही ढीली रही जिसका शिवाजी ने खूब लाभ उठाया। उसने तोरण का किला वहाँ के किलेदार से छीन लिया वहाँ उसे दो लाख हूण हाथ लगे। इसके बाद ही उसने राजगढ़ का किला बनवाया। पीछे उसने बीजापुर वालों से कोण्डाना का किला भी छीन लिया। और साथ ही अपने पिता की परगनी जागीर के सभी भागों को अपने अधिकार में कर लिया।

इसी बीच शाहजी को बीजापुर के सेनानायक मुस्तफा खाँ ने कैद कर लिया और उनकी सारी सेना और सामान का कब्जा कर लिया। इस समय मुस्तफा खाँ दक्षिणी कर्णाटक के जिले में जिंजी नामक

किले का घेरा डाले हुए था। शाहजी के पाँवों में बेड़ियाँ डाल दी गईं। अन्त में अहमद खाँ के, जो बीजापुर दरबार का सरदार था और शाहजी का मित्र था, बीच में पड़ने से समझौता हुआ और शाहजी ने बंगलौर, कोण्डाना और कन्दर्पी के तीन किले बीजापुर के सुलतान को भेंट कर के छुटकारा पाया।

उस समय जावली एक बड़े राज्य का केन्द्र था। वह एक सम्पन्न गाँव था जो सतारा जिले के उत्तर-पश्चिमी कोने में बिलकुल छोर पर था। इस राज्य का स्वामी मोरे नाम का एक मराठा सरदार था। इस सरदार के पास पहाड़ी जाति के परिश्रमी बारह हजार सैनिक थे जो मावली ही के समान थे। अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण यह जावली की छोटी सी रियासत दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम दिशा में शिवाजी की राह का एक रोड़ा बन गयी थी। शिवाजी ने अपने हवलदार रघुनाथ बल्लाल कोरडे के द्वारा इस सरदार को मरवा डाला और फिर चढ़ाई करके जावली को अपने अधिकार में कर लिया। जावली को जीत कर शिवाजी ने वहाँ से दो मील पश्चिम में प्रताप-गढ़ नाम का किला बनवाया और अपनी इष्टदेवी भवानी की स्थापना की। रायगढ़ का किला भी मोरे कुटुम्ब के ही हाथ में था। उसे भी शिवाजी ने उनसे छीन लिया। यही रायगढ़ का किला आगे चलकर शिवाजी की राजधानी बना।

जब सन् १६५६ में मुहम्मद आदिल शाह की मृत्यु होने पर औरंगजेब ने बीजापुर पर आक्रमण किया तो शिवाजी ने अपनी नीति बदली और बीजापुर की सहायता करने की ठान ली। जब औरंगजेब ने बीजापुर पर आक्रमण किए, तब उधर तो औरंगजेब के बीदर और कल्याणी पर आक्रमण हो रहे थे—इधर शिवाजी ने मुगलों के दक्षिणी पश्चिमी कोने में घुस कर लूटपाट और अंधेरगर्दी मचाई हुई थी। तीन हजार घुड़सवारों को लेकर मानाजी भोंसले ने भीमा नदी पार कर मुगल राज्य के चमारगुण्डा ताल्लुका के गाँवों को लूट

लिया। इसी समय काथी नामक दूसरा सरदार भीमा पार कर राजठीन के ताल्लुके में लूट-खसोट करने लगा। अभी इस प्रतिक्रिया को एक वर्ष भी न बीता था कि मुगल साम्राज्य के दक्षिणी सूबे के प्रधान नगर अहमदनगर की चहारदीवारी तक इन मराठा सरदारों ने उत्पात और लूट मार आरम्भ कर दिया। जब अहमदनगर की नाक पर बने पेठ नगर पर मराठों का धावा पड़ा—तब मुगल साम्राज्य में चिन्ता की लहर फैली। उधर शिवाजी स्वयं भी उत्तर में जुन्नार तालुका में फकीरगर्दी मचा रहे थे। वे मौका पाकर एक अँधेरी रात में रस्सियों की सीढ़ी लगा कर जुन्नार शहर की फसीलों को फाँद गए और वहाँ के पहरेदारों को मार-काट कर तीन लाख हूण और दो सौ घोड़े और बहुत से आभूषण और सामान लूट ले गए।

आखिर औरंगजेब का इधर ध्यान गया। उसने नसीरी खाँ और हसन खाँ की कमान में तीन हजार सवार देकर अहमदनगर भेज दिया। उधर मुल्तफ्त खाँ ने भी चमारगुण्डा में मराठों से एक मोर्चा लिया। उधर शिवाजी से नसीरी खाँ की भी मुठभेड़ हो गई। अब मुगलों की सेना शिवाजी के इलाकों में घुस गई और गाँवों को जलाना, लोगों को कत्ल करना और लूटना आरम्भ कर दिया।

इसी समय आगरे में भारी भारी घटनाएँ हुईं। बादशाह बीमार पड़ गए और मुगल तख्त को अधिकृत करने चारों ओर से शाहजादों ने आगरे की ओर कूच कर दिया। शाहजादा औरंगजेब भी दक्षिण से चल पड़ा। उधर मुगलों से लगातार लड़ते रहने से बीजापुर के सरदारों में वैमनस्य फैल गया और बीजापुर के वजीर खान मुहम्मद की हत्या कर डाली गई। अतः अब शिवाजी को अपनी महत्त्वाकांक्षा पूरी करने का पूरा अवसर मिल गया। उनकी राह में अब कोई बाधा न थी। पश्चिमी घाट के पहाड़ों को पार कर वे कोंकण में जा धमके। आजकल जो थाना जिला कहलाता है, तब वह कल्याण प्रान्त का भाग था। वहाँ का शासन सूबेदार मुल्ला अहमद नाम का एक

शरत करता था जिसकी गिनती बीजापुर के प्रमुख शहरों में थी। कल्याण और भिवंडी के शहर सम्पन्न तो थे—पर इनकी रक्षा का प्रबन्ध न थी। शिवाजी ने थोड़े ही प्रयास से इन दोनों नगरों को अधिकृत कर लिया। वहाँ से उन्हें बेशुमार धन और व्यापारिक सामग्री हाथ लगी। शिवाजी ने कल्याण और भिवंडी को अपनी जलसेना और बेड़ों का एक अड्डा बना दिया। इस प्रकार मुगल तख्त की सम्मनगाहर के साथ-साथ ही दक्षिण में शिवाजी के मराठा राज्य की नींव स्थापित हुई।

२८

औरंगज़ेब का कूटचक्र

पहले औरंगज़ेब ने बादशाह का ख़रीता खोला। उसमें लिखा था—"तुम्हारे ख़त से हमें तसल्ली है और हम चाहते हैं कि तुम इत्मीनान से अपने मुल्क का इन्तज़ाम करो—हमने सुना है कि तुम बराबर फौजें भरती कर रहे हो और अपने सदर से आगरे की ओर कूच करना चाहते हो। हमारा हुक्म है कि तुम अपने सदर ही में मुक़ीम रहो और वहाँ से न हटो। नई फौज भरती करने की ज़रूरत नहीं। हमने शाहे गोलकुण्डा और शाह बीजापुर से सुलह की है। बस, हम नहीं चाहते कि तुम कोई ऐसी हरकत करो जो उसके ख़िलाफ़ हो।"

औरंगज़ेब की भृकुटी में बल पड़े और उसने अपने होंठ सिकोड़े, फिर उसने दूसरा ख़त खोला। दूसरी चिट्ठी उसकी बहन शाहज़ादी रोशनआरा की थी। उसमें लिखा था—

मेरे प्यारे भाई,

मुझे उम्मीद है तुम तन्दुरुस्त होगे। तुम्हारी हिदायतों के मुताबिक़ सब काम हो रहा है। बादशाह अपने दर्द भर्दे, शाइस्ता ख़ाँ की बीबी के साथ बादशाह सलामत ने जो सलूक किया है उससे उस औरत ने

जान दे दी। उसके मरने से तमाम दरबार में बादशाह के ख़िलाफ़ जोश और नाराज़ी फैल रही है। अफ़सोस तो इस बात का है कि ख़ास बेगम ने अम्मा को इस काम में मदद दी है, मगर बिरादर, फ़िक्र की कोई बात नहीं। तुम्हारे हक़ में यह सब बहुत अच्छा है। शाइस्ता ख़ाँ जैसा बहादुर अब तुम्हारी मुट्ठी में आ गया है। वह बादशाह से बदला लेगा। मालिमा इसके बादशाह सलामत को इसका पूरा यक़ीन हो गया है कि वज़ीर सादुल्ला ख़ाँ की मौत में दारा का हाथ है और वे डरते हैं कि कहीं वह बादशाह पर भी हाथ साफ़ न करे। इससे बादशाह भीतर-ही भीतर दारा के ख़िलाफ़ सोच रहे हैं। मतलब तो राज़ यह है कि दारा की बढ़ती हुई बेअदबी और ताक़त को चुनौती देने ही के लिए बादशाह ने अमीर मीरजुमला की राय मानकर उसकी कमान में मुकम्मिल तोपख़ाने समेत इतनी बड़ी फ़ौज दक्खिन भेजना मंज़ूर फ़र्माया है जो वक़्त ज़रूरत तुम्हारे ही काम आएगी। अब तुम बहुत जल्द देखोगे कि तमाम दरबार तुम्हारी मुट्ठी में है।"

इस ख़त को पढ़कर औरंगज़ेब ने दाँत के नीचे होंठ दबाया और दो-तीन बार सिर हिलाया। फिर उसने तीसरा ख़त खोला। यह ख़त मीरजुमला का था। उसमें लिखा था—"मुबारक, आपने जो चाहा था वही हुआ, आपकी मुरादें बर आईं। मगर हज़रत, ख़बरदार रहिए अब मैं बादशाह का नौकर हूँ, और उनके हुक्म की पाबन्दी मेरे लिए बहुत ज़रूरी है। इसलिए [illegible] मैं आपको कोई ख़ास मदद नहीं पहुँचा सकूँगा, मगर फिर भी याद रखिए कि मेरा दिल आपके साथ है।"

औरंगज़ेब कुछ देर आँखें बन्द किए कुछ सोचता रहा। उसे वे सब बातें एक-एक करके याद आने लगीं जो दौलताबाद में इन दोनों [illegible]ओं ने सोची थीं। वह समझ गया था कि इस आदमी की दोस्ती हिन्दुस्तान के इतिहास में अमर रहेगी और मुझे जो कुछ मिलेगा इसी की मदद से।

दारा के हाथ से वज़ीर सादुल्ला का खून किया जाना औरंगज़ेब के हक़ में एक ज़बरदस्त बात थी। वह जानता था कि वज़ीर सादुल्ला ख़ाँ की जोड़ का बुद्धिमान आदमी उस समय एशिया भर में न था। बादशाह उसी पर इतने बड़े राज्य का भार छोड़कर बेफ़िक्र था। वह उसका सिर्फ़ विश्वास ही नहीं करता था जो कि मुग़ल बादशाहों के स्वभाव के विरुद्ध था, प्रत्युत वह उसका अत्यन्त आदर करता था। मगर दारा जानता था कि वह शिया है और उसके हाथ में इतनी ताक़त है कि वह जिसे चाहे तख़्त पर बैठाए। वह अवश्य ही शुजा की मदद करेगा। दरबार में यह भी चर्चा दबे कण्ठ से होती रहती थी कि वह बादशाह के बाद ख़ुद बादशाह बनेगा या अपने बेटे को बादशाह बनायेगा। कुछ कहते थे कि वह पठानों को तख़्तनशीं कराना चाहता है और उसके सम्बन्ध में कहा जाता था कि उसकी माँ पठानी है और उसने पठानों की एक बड़ी फ़ौज भरती कर रखी है। दारा को उससे कुछ आशा न थी, वह कभी भी दारा की परवा नहीं करता था। इसी से दारा इसे अपने रास्ते का रोड़ा समझता था, और इसे उसने दूर कर देना ही ठीक समझा। परन्तु इस काम से बादशाह को दारा से घृणा हो गई और वह उससे बहुत नाख़ुश हो गया। यह सब बातें औरंगज़ेब के लिए अत्यन्त लाभदायक थीं।

पर, औरंगज़ेब की अपनी आमदनी बहुत कम थी और ख़ज़ाना भी ख़ाली था। फ़ौज उसके पास बहुत मामूली थी। नई फ़ौज भरती करने में बड़ी-बड़ी दिक़्क़तें थीं इसलिए उसने अपने बुद्धि-बल पर ही भरोसा करके कार्यक्षेत्र में पैर डाला। उसने ख़ूब भाँति समझ लिया कि दो ही ऐसे आदमी हैं जिनकी मदद से बेड़ा पार हो सकता है। एक मुराद दूसरा मीरजुमला। मीरजुमला की दोस्ती पर उसे पूरा भरोसा था। लोगों के संदेह से बचने के लिए उसने वह सब धन—जो गोलकुण्डा और बीदर के क़िले में उसे मिला था, सब वहीं मीरजुमला के पास छोड़ दिया था। अब वह बेवकूफ़ मुराद पर अपना

ताज हथियाने की फ़िक्र में था और उसे अपने बुद्धि-बल पर पूरा भरोसा था कि वह मुराद को अपने अंगुश्त में फँसा लेगा।

: २९
पहली चाल

अंधेरी रात के पर्दे ने दुनिया में अँधेरा कर दिया था। सारी दुनिया सो रही थी। पर वह युवक शाहज़ादा बेचैनी से अपने सूने महल में अकेला टहल रहा था।

खूब सोच-समझ कर उसने एक ख़त अपने छोटे भाई शाहज़ादा मुरादबख़्श को लिखा, जो इस समय गुजरात का हाकिम था और अहमदाबाद में रहता था एवं उसके आगरे लौटने के मार्ग पर था। पत्र इस प्रकार था—

"प्यारे भाई, मैंने पुख़्ता ख़बर सुनी है कि दारा ने हमारे वालिद बुज़ुर्गवार शाहंशाह शाहेजहाँ को ज़हर देकर मार डाला है और ख़ुद बादशाह बना चाहता है। इसीलिए शाहज़ादा शुजा ने तख़्त के मुल्क और वालिद की मौत का बदला लेने के लिए एक बड़ा भारी लश्कर लेकर देहली की ओर कूच किया है।

आप को इस बात की याद दिलाने की कोई ज़रूरत नहीं कि अमूरे सल्तनत की मेहनत उठाना मेरे असली मिज़ाज और तबियत के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। इस वक्त जब कि दारा और शुजा निहायत बदतमीज़ी से दुनियवी सल्तनत के लिए कोशिश और जद्द कर रहे हैं, मैं सिर्फ़ फ़क़ीराना ज़िन्दगी बसर करने में मुतवज्जिह हूँ। मगर, प्यारे अज़ीज़, अगर्चे सल्तनत के हक़ हक़ूक़ और दावों से मैं बिलकुल दस्तबरदार हूँ। ताहम इस बात और ख़्याल से आपको मुत्तिला करना वाजिब समझता हूँ कि न सिर्फ़ यही कि दारा शिकोह फ़र्मांरवाई औसाफ़ से ख़ाली है, बल्कि बुतपरस्त और काफ़िर होने की वजह से बिलकुल ताज व तख़्त

के काबिल नहीं। बड़े-बड़े उमराए सल्तनत और वरकाने दौलत उसमें मुत्तफिक़ हैं। शहज़ादा मुराद बुख़्श भी सल्तनत के काबिल नहीं। क्योंकि वह राजपूतों का मज़हब का पाबन्द और हिन्दुस्तान का दुश्मन है। अब इस सूरत में इस अज़ीमुश्शान सल्तनत की फ़र्मारवाई के लायक सिर्फ़ आप हैं। यह महज़ मेरी ही राय नहीं—बल्कि पाए तख़्त के तमाम वज़ीर और अमीर जो आपकी बहादुरी के कायल हैं सब इसमें इत्तफ़ाक़े राय रखते हैं और हमज़बान होकर ख़ासतौर ख़िलाफ़त में आपकी रौनकअफ़ज़ी के मुन्तज़िर हैं। मेरी बाबत तो यह तसौव्वर कर लीजिए कि अगर आपकी तरफ़ से मुस्तहकम तौर पर मुझे यह वादा मिल जायगा कि जब ख़ुदा के फ़ज़्ल से आप बादशाह हो जायेंगे तो मुझे खिलाफ़त के मौके का गोशाए-आफ़ियत-बहरमीनान ख़ातिर इबादत इलाही बजा लाने के लिए इनायत फ़र्माइयेगे, तो बस मैं इतने ही से फ़ौरन आपकी तरफ़दारी में ख़िदमत बजा लाने को आमादा और तैयार हो जाऊँगा। और सलाह व मशवरे से अपने दोस्त व रफ़ीकों से सब अपनी तमाम फ़ौज आपके हुक्म में कर देने से, गरज़ किसी किस्म की मदद से मैं दरेग़ न करूँगा। फ़िलफ़ौर में आपकी खिदमत में एक लाख रुपया भेजता हूँ, और उम्मीद करता हूँ कि आप इसे बतौर नज़र क़ुबूल करेंगे जो कि मेरी ख़ुशी का बाइस होगा। हुनर आज़माई और बहादुरी का यही वक़्त है। अब आप एक लमहा भी ज़ाया न कीजिए। मौके को ग़नीमत समझिए और जल्दी से सूरत के किले पर, जहाँ मुझे ख़ूब मालूम है कि बेशुमार दौलत मदफ़ून है क़ब्ज़ा कर लीजिए।"

रात के घोर सन्नाटे में औरंगज़ेब ने यह ख़त अपने हाथ से लिखकर कई बार पढ़ा, फिर उसने अपने दूधभाई मीरबाबा को बुलाकर ख़त उसके सुपुर्द करके कहा—'तुम अभी इसी दम गुजरात को रवाना हो जाओ और जवाबी हर तरह उसकी तसल्ली कर दो और उसे आमादा करो कि वह फ़ौरन सूरत के ख़ज़ाने को लूट ले। तुम्हारे

हमराह जाने के लिए पाँच सौ सवार तैयार हैं। जाओ भाई, अभी कूच कर दो—तुम्हारी इस कूच की कामयाबी पर ही हमारी उम्मीदें हैं।' इतना कहकर औरंगजेब ने मीरबाबा के हाथ चूम लिए और अपना कीमती जड़ाऊ खंजर उसकी कमर में खोंस दिया और गले से मोतियों की एक कीमती माला उतार कर उसके गले में डाल दी।

मीरबाबा ने तुरन्त ही कूच बोल दिया। उसके जाने के बाद औरंगजेब हाथ मलता हुआ कुछ देर टिमटिमाते तारों को देखता रहा—फिर उसने फौरन ही अपने बड़े बेटे सुलतान मुहम्मद को तलब किया। उसे एक अत्यन्त गोपनीय खरीता देकर कहा—'तुम्हें अभी कल्याणी की ओर कूच करना होगा वहाँ हमारा दोस्त और मददगार अमीर मीरजुमला काबिज है। उनसे तुम निहायत खाकिसारी से कहना कि निहायत जरूरी काम आ पड़ा है एक जरूरी मसले पर आपसे मशविरा लेना है। इसलिए वहाँ आकर मुझसे मिल जायँ। यह खरीता उन्हें बिलकुल पोशीदा ढंग से देना और जैसे मुमकिन हो उन्हें साथ ले ही आना। पाँच सौ सवार तुम्हारे हमराह जाने को तैयार हैं। मेरे प्यारे बरखुरदार बेटे अभी इसी दम कूच बोल दो। इत्मीनान रखो कि तुम्हारी बहादुरी और वफादारी फिजूल न जायगी।' उसने पुत्र को छाती से लगाया।

शाहजादा ने कल्याणी की ओर चल दिया। औरंगजेब ने फिर सुदूर तारे पर दृष्टि जमा दी। इस बार उसने अपने विश्वासी मुसाहिब अमीर खाँ को तलब किया और कहा—"तुम्हें मालूम है कि हमें तुम्हारा किस कदर भरोसा है। अब वह वक्त आ गया है कि हमें अपने काम करने चाहिए। मैं तुम्हें एक नाजुक काम सौंपना चाहता हूँ।"

"मैं बन्दगी-बजा लाने को हाजिर हूँ। हुक्म दीजिए।"

"यह खत लो और सतारा चले जाओ। वहाँ बहादुर मराठा शिवाजी है, उसे खत दो और समझाओ कि वह अगर हमारी मदद करेगा तो हम बीजापुर से लड़कर उसे नई सल्तनत कायम करने में मदद दें

पाते हैं। उसे यह भी समझा देना कि बिना ऐसा किए उसका दिया में अपनी सल्तनत कायम करना बिलकुल मुमकिन नहीं। सके सिवा—वह अगर हमारी मदद करेगा तो मैं वादा करता हूँ कि क्न के एक हिस्से की चौथ हम हमेशा उसे देंगे।"

इसके बाद औरंगजेब ने और भी जरूरी बातें उसे समझाईं। फिर कहा—'मगर तुम्हें यह खतरनाक सफर अकेले खुफिया तौर पर करना होगा। जिसका तुम होशियारी से बन्दोबस्त कर लोगे।' यह कह कर उसने अपना जड़ाऊ कमरबन्द उसकी कमर में बांध दिया।

अमीर खाँ ने हँस कर कहा—"आप इत्मीनान रखिए। ठीक क पर जनाब हुजूर की *खिदमत में पहुँच जायगा।*" वह सलाम करके चला गया। औरंगजेब उस समय तक उसे देखता रहा, जब तक उसकी पीठ अंधेरे में गायब न हो गई। इसके बाद उसने ताली दी।

एक अधेड़ खोजा दस्तबस्ता आ खड़ा हुआ। औरंगजेब ने गहरी नजर से उसे देख कर कहा—'मुबारक, तुम्हें पोशीदा तौर पर अभी इस आदमी के पीछे जाना होगा और इसकी तमाम हरकतों पर र इसके आने से पेश्तर ही आना होगा। उसने एक मोहरों की थैली जो अशर्फियों से भरी थी, उसकी हथेली पर रख दी। मुबारक बिना क शब्द बोले झुक कर चला गया। औरंगजेब के होठों पर मुस्कान की एक क्षीण रेखा आई और वह धीरे-धीरे कुछ सोचता हुआ महल में चला गया।

: ३० :

शिकार

शाहजादा मुरादबख्श एक रसिक और सुन्दर युवक आदमी था। शिकार, युद्ध, शराब और रमणी इन चार चीजों में उसकी जान थी। भाला और बरछा फेंकने में वह मुगल साम्राज्य भर में एक था। शराब

और रमणी से जब उसका मन ऊबता तो वह शिकार को चला जाता। वहाँ से ऊब कर वह महलसरा में घुस कर सुरा-सुन्दरी की आराधना में डूब जाता। यही उसका जीवन, यही उसका आखिरत, यही उसका पुरुषार्थ था। यद्यपि उसने भी दिल्ली और आगरे की सब हलचलों को सुन रखा था और राज्यलिप्सा अन्य भाइयों की अपेक्षा उसमें कम न थी, पर वह उतना बुद्धिमान न था जितना एक राजकुमार को होना चाहिए। इसलिए जब दारा, शुजा और औरंगजेब जोड़ और तोड़ के अपने खेल रहे थे और बड़े-बड़े राजनीति के ताने-बाने बुन रहे थे, मुराद बख्श शिकार-शराब और हरम में डूब उतरा रहा था।

सुबह ही से शिकार की तैयारियाँ हो गईं। सजे हुए हाथियों पर तमाम मुसाहिब और खास-खास अमीर बैठे थे, शाहजादा मुरादबख्श एक ऊँचे हाथी पर सवार था। हाथियों पर झूले होदे कसे थे। सबके हाथों में बन्दूकें थीं।

जंगल में शिकार का इन्तजाम पहले ही करा दिया गया था और जंगल के चारों ओर मजबूत जाल लगा दिया गया था, जिसमें बाहर आने-जाने का सिर्फ एक ही रास्ता था। जाल के बाहर थोड़े-थोड़े फासले पर सिपाही भाले और बर्छे लिए मुस्तैद खड़े थे, मगर वे शेर का शिकार नहीं कर सकते थे न शेर ही उन्हें कुछ हानि पहुँचा सकता था।

सवारी जंगल को चली। आगे-आगे बड़े-बड़े भीमकाय अरने भैंसे थे, उनके भयानक विशाल सींग देख कर भय होता था। उन पर मोटे चमड़े चढ़े हुए थे जो सिंह के आक्रमण से उनकी रक्षा करते थे, ये भैंसे लगभग एक सौ थे, इन पर एक-एक आदमी भाला लिए सवार था।

जंगल में पहुँचते ही शाहजादे को खबर मिली कि आज साबरमती के कछार में एक जोड़ा बहुत बड़े शेर और शेरनी का है। शाहजादे ने खुशी से चिल्ला कर घेरा डालने की आज्ञा दी। शेर घेर कर जंगले

में ले आए गए। चारों तरफ हल्ला हो रहा था। दोनों जानवर घबरा कर फौलता रहे थे। कहीं निकल भागने की उनके लिए जगह न थी। शेरनी एक झाड़ में घुसके से छिप गई। मगर शेर ने भैंसों को देखते ही एक छलांग मारी। भैंसों पर के आदमी फुर्ती से कूद पड़े और छलांग मारते ही भैंसों ने शेर को सींगों में उठा लिया। यह सब काम ऐसी फुर्ती और कौशल से हुआ कि शेर की कोमल पेट की खाल में उनके तीखे सींग पूरे घुस गए। वह दर्द से बकराने और चीख़ने लगा। शाहज़ादे ने आनन्द से हाथ मलते हुए अपने एक मुसाहिब को गोली दागने का हुक्म दिया। गोली दागी गई और शेर मर कर ढेर हो गया। तमाम सिपाही उस पर टूट पड़े। किन्तु हौदेवालों ने चिल्ला कर कहा—"ख़बरदार! सवारियों से न उतरिए, झाड़ में शेरनी है।"

शीघ्र ही शेरनी की क्रुद्ध हुंकार से वन गूँज उठा। वह बारंबार दहाड़ रही थी—उसकी दहाड़ सुन कर शाहज़ादे ने सब भैंसों को घेरे से बाहर कर देने का हुक्म दिया। इसके बाद उसने आगे अपना हाथी बढ़ाया।

शेरनी पर सब से पहली नज़र शाहज़ादे की पड़ी और उसने इन से गोली दाग दी। गोली शेरनी को घायल करती हुई निकल गई। इस पर झल्ला कर शेरनी शाहज़ादे के हाथी पर झपट पड़ी और ज़ोर से हाथी के माथे पर पंजे गड़ा कर लटक गई। महावत डर कर ज़मीन पर गिर पड़ा। शाहज़ादे ने फ़ायर किया, पर ख़ाली गया। आख़िर उसने अपने प्राण संकट में देख कर दोनों हाथों से बन्दूक पकड़ कर शेरनी को पीटना शुरू किया। फिर भी उसने अपनी गिरफ़्त को न छोड़ा। जब हाथी ने यह देखा कि उसका कोई दावपेंच ही नहीं चलता तो वह भागकर एक भारी वृक्ष से जा टकराया। उसने इस कौशल से वृक्ष में टक्कर मारी कि शेरनी कुचली जाकर भयानक रीति से चीख उठी और छूट कर दूर जा गिरी। इतने ही में एक सरदार ने गोली दाग कर उसका काम तमाम कर दिया।

शाहजादे ने उस हाथी का रातिब बढ़ा दिया। उस दिन फिर और शिकार नहीं हुआ। शाहजादा अपने खीमों में लौट आया। दोनों जानवर उसके सामने लाए गए। फिर मूँछों के अफसर ने उसकी मूँछ काट ली।

शाहजादा एक हफ्ते शिकारगाह में रहा। उसने सैकड़ों हिरन, नीलगाय, अरने भैंसे, चिड़ियाँ बतख आदि जानवर मारे। हजारों आदमी उसके साथ इधर-से उधर दौड़-धूप करते फिरे। अन्त में एक सप्ताह तक शिकार का आनन्द लूट कर वह अहमदाबाद लौट आया।

३१

मीरबाबा से मुलाकात

शिकार से लौटने पर उसे औरंगजेब के दूत मीरबाबा के आने की सूचना दी गयी। मीरबाबा से मिलकर मुराद बहुत खुश हुआ। उसकी बहुत खातिर-तवाजा की। और औरंगजेब के हाल-चाल पूछे। मीरबाबा ने उसे औरंगजेब का खत देकर कहा—'मैं चार दिन से आपका इन्तजार कर रहा हूँ। मुझे बड़ा अफसोस है कि आप जैसे शाहजादों का जब एक-एक लमहा कीमती है आप अपना वक्त इस तरह शिकार में जाया करते हैं।' इसके बाद उसने औरंगजेब की तरफ से बड़ी-बड़ी लल्लो-चप्पो की बहुत बातें कहीं। वह सब सुनकर, खत पढ़ और लाख रुपए देख कर वह फूल कर कुप्पा हो गया और वह समझने लगा कि मानो हम बादशाह हो ही गए।

मुराद की आमदनी बहुत ही कम थी, सेना भी उसके पास नहीं थी, वह भी इस मौके पर अपनी भाग्य-परीक्षा करे यह सोच कर रह जाता था। इसका कारण कुछ तो उसका आलस्य-व्यसन और कुछ कमसमझी थी। अब इस प्रकार अयाचित सहायता मिलती देख वह बहुत आशान्वित हो गया। उसने नगर अहमदाबाद के तमाम अमीरों,

शहर के बड़े बड़े व्यापारियों, मुल्लाओं और जिम्मेदार आदमियों को बुलाकर एक छोटा सा दरबार कर डाला। उसमें उसने खुले आम यह सब सबको सुनवाया और जोर देकर लोगों से धन और सेना की सहायता माँगी। उसने साहूकारों को तुरन्त रुपये की कमी पूरी करने का हुक्म दिया और विश्वास दिलाया कि सूरत का खजाना हाथ आते ही वह अच्छे सूद के साथ उन्हें उनकी रकम लौटा देगा। विवश साहूकारों को भी उसकी बात माननी पड़ी। देखते-देखते हलचल मच गई। और धड़ाधड़ सेना भरती होने लगी। धुने, जुलाहे, मोची, कुम्हार सब सिपाहियों में भरती होने लगे। उन्हें अच्छी तनख्वाह, लूट का लोभ और सिपाहियाना ठाठ, बस और क्या चाहिए।

मुरादबख्श का एक गुलाम ख्वाजासरा शाह अब्बास नामक था। वह बड़ा वीर और मुराद का शुभचिन्तक था। उसे मुराद ने तीन हजार फौज देकर सूरत पर आक्रमण करने को फुरसत रवाना कर दिया।

मीरबाबा ने यह सब बन्दोबस्त करके सामने करा दिया। और इसके बाद वह मुराद की मूर्खता पर मन-ही मन हँसता हुआ उसको अच्छा खासा सब्जबाग दिखा उसका खत औरंगजेब के नाम लेकर वापस लौटा। मुराद ने जवाब में औरंगजेब को लिखा था—

'इसलाम की पुश्तो पनाह, आलिम व दाना और वफादार भाई औरंगजेब, आपका खत पढ़कर और मेरी तरफ को आपका रहम व करम है जान कर मुझे बेहद खुशी हुई है। खास कर यह देखकर कि आप कुरान शरीफ पर न्योछावर होने और अपने पाक मजहब को इस तबाही से बचाने के लिए इस कदर मुतफिक हैं, जिसका हमारे दोनों भाइयों में से किसी के भी बादशाह न होने पर तबाह होने में शकोशुबहा नहीं है। मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ और कुरान की कसम खाता हूँ कि मैं बादशाह होने पर आपके बाल-बच्चों को वह दर्जा दूँगा जो शाहजादों को दिया जाता है। और उससे बढ़कर यह

कि मैं आपको अपने बाप से बढ़कर समझूँगा। आपके ऊपर मुझे जिस क़दर यक़ीन है यह आप इसी से समझ लीजिए कि आपके भेजे हुए रुपयों से मैंने आनन-फ़ानन लश्कर इकट्ठा करके उसे सूरत के क़िले को फ़तह करने भेज दिया है, इसके अलावा मैं तैयारी कर रहा हूँ कि बाद हमारा लश्कर कूच करे। ख़ुदा हमारी मुराद पूरी करेगा। नई ख़बरें देते रहिए। मुझे आपके बारे पर पूरा यक़ीन व इत्मीनान है।"

। १२

मीरजुमला की शह

मुहम्मद सुलतान मीरजुमला के पास से निराश और क्रुद्ध होकर लौटा। उसने उसके साथ रुखाई का बर्ताव किया था। और उसने सब लोगों के सामने ऊँची आवाज़ में मुहम्मद सुलतान की मलामत करते हुए कहा—"मैं बादशाह का सेवक हूँ, न कि औरंगज़ेब का। न मैं उसकी बात मान सकता हूँ न मदद कर सकता हूँ। क्योंकि बादशाह सलामत ज़िन्दा हैं और उनके मरने की ख़बर झूठ है। असली ख़बर मुझे मिल गई है।" राजनीति से अज्ञात मुहम्मद सुलतान का मुख यह सुनकर लाल हो उठा। और वह हाथ मारता हुआ लौट आया। मीरजुमला ने मुहम्मद को औरंगज़ेब के लिये एक ख़त भी दिया। उसमें उसने लिखा था—'बादशाह का बिना हुक्म और फ़ौज से अलहदा होकर मेरा दौलताबाद जाना नहीं हो सकता। अलावा इसके आप यक़ीन फ़र्माएँ, कि मैंने आगरे से अभी इस मज़मून की सच्ची ख़बर पाई है कि बादशाह हनूज़ ज़िन्दा हैं। इसके सिवा यह बात भी है कि जब तक मेरे अहलोअयाल दारा शिकोह के क़ाबू में हैं, तब तक मैं आप के साथ शरीक नहीं हो सकता—बल्कि मेरी असल मंशा तो यह है कि मैं इस हंगामे में किसी का भी तरफ़दार न रहूँ।"

चतुर शाहज़ादा औरंगज़ेब ने जब यह ख़त पढ़ा तो वह मुस्कुरा

दिया। कुछ सोच-विचार कर उसने अपने बेटे सुलतान मुअज्जम को, जो अभी केवल १४ साल ही का था, फिर मीरजुमला के पास भेजा। उसके साथ उसने तीन हजार सेना दी और उसे हुक्म दिया कि तुम फौरन किले पर गोलाबारी शुरू कर देना। पीछे से हम भी आते हैं।

सुलतान मुअज्जम जब कल्यानी के निकट पहुँचा तो उस समय किले में मीरजुमला और उसके कुछ बेटे ही सरदार थे। दूसरे शाही अमीर सलाबत खाँ, महाबत खाँ और नजाबत खाँ किले से एक मील के अन्तर पर अपनी-अपनी छावनी डाले पड़े थे।

औरंगजेब की हिदायत के अनुसार मुअज्जम ने मीरजुमला को कहला भेजा कि या तो किला हमारे सुपुर्द करके हमारी खिदमत में हाजिर हो वरना लड़ो। मीरजुमला ने हँसकर कहा—"मैं बादशाह का सेवक हूँ, औरंगजेब को किला नहीं दे सकता—क्योंकि वह बादशाह से बगावत कर रहा है।" इतना कह, उस कूटनीतिज्ञ ने प्रकट में सेना को लड़ने की आज्ञा दे दी, परन्तु गुप्त रूप से अपने सेनापतियों को आदेश दिया कि हवा में गोले और बन्दूकें दागते रहो, ऊपर से चाहे जितनी धूमधाम दिखाओ, पर—औरंगजेब की फौज को नुकसान न पहुँचाओ।"

रातभर गोले-गोलियाँ चलती रहीं। किले से गोले सनसनाते हुए हवा में जाकर बीहड़ जंगल में गिरते रहे। दिन निकलते-निकलते किले का फाटक खोल दिया गया और मीरजुमला ने सुलतान मुअज्जम को आत्मसमर्पण कर दिया। वह अपने बेटे के अफसरों और कुछ मित्रों के साथ शाहजादे के पास चला गया। किले पर शाहजादे का अधिकार हो गया। उसका सच्चमार एक सेनानायक को दे शाहजादा मीरजुमला को औरंगजेब के पास ले चला। सूरज निकलने तक वह मक्खुत सिपाही शाहजादा कम्पायी से बहुत दूर निकल गया था। मार्ग में उसने अपनी चपलता और विनय से मीरजुमला को खूब प्रसन्न कर लिया। इसकी औरंगजेब ने शाहजादा को पूरी पट्टी पढ़ा दी थी।

न प्रसन्न कर लिया। जिससे औरङ्गजेब ने शाहजादा को पूरी मदद
दी थी।

मार्ग में ही दोनों मित्र मिल गए। औरंगजेब अपनी समस्त सैन्य
ए धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था। ज्योंही उसने मीरजुमला को
फिर घोड़े पर शाहजादा मुअज्जम के साथ आते देखा—वह घोड़ा
ड़ा कर बाबाजी, बाबाजी, कहता हुआ दोनों हाथ फैला कर
सकी ओर चला। उसके पास पहुँच कर वह घोड़े से उतर पड़ा।
नों मित्र बारंबार गले मिले। फिर एकान्त में बैठकर दोनों में बातें
ई। औरंगजेब ने कहा—"मुझे बखूबी मालूम है कि आपने जो
सुलतान मुहम्मद से इन्कार किया था वह बिलकुल दुरुस्त था और
राय मेरे सब दुश्मनों अपने दरबार की भी यही राय है कि जब तक
ापके बाल-बच्चे दारा शिकोह के काबू में हैं, तब तक चाहिए आपको
ोई ऐसी हरकत न करनी चाहिए जो कि हमारे हक में मुफीद
ाबत हो। लेकिन आप जैसे काबिल शख्स को यह बात समझाने
ी कोई जरूरत नहीं कि दुनिया में हर मुश्किल काम की आखिर
एक तदबीर होती है। चुनांचे एक तदबीर मेरे जेहन में आई है,
जिससे बजाहिर आप हैरान होंगे। मगर जब उसके नशेबोफराज
र बखूबी गौर करेंगे तो यकीनन—आपके अहलोअयाल की
हिफाजत के लिये एक यकीनी जरिया हो जायगा। तदबीर यह है कि
आप बजाहिर कैद होना मंजूर कर लें। इससे तमाम जहान को मेरी
आपकी दुश्मनी का यकीन हो जायगा और इस हिकमत से हम लोग
अपनी तमाम ख्वाहिशों में कामयाब हो सकेंगे। क्योंकि किसी शख्स को
हरगिज ऐसा गुमान नहीं होगा कि आप जैसे रुतबे का कोई आदमी इस
तरह अपनी खुशी से कैद हो गया।" इतना कह कर औरंगजेब तीखी
नजरों से उसे देखने लगा। मीरजुमला ने कनखियों से इधर उधर
देखा। पीठ के पीछे सुलतान मुहम्मद और सुलतान मुअज्जम नंगी
तलवार लिए खड़े थे। यह देख कर मीरजुमला जोर से हँस पड़ा।

उसके हँसने का ठीक मतलब समझ कर औरंगजेब भी हँस पड़ा। मीरजुमला ने कहा—"जहाँ पनाह, जब तब तो मैं पहले ही से सोच कर निकला हूँ, और तो मेरी फौज का क्या होगा?"

औरंगजेब की आँखें चमकने लगीं। उसने धीरे से कहा—"उसे मैं जिस दर्जे से और जिस हैसियत से आप पसन्द करेंगे और मुनासिब समझेंगे—नौकर रख लूँगा।"

"बहुत खूब, मैंने अपने अफसरों को ताकीद कर दी है कि वे आपकी फौज में आपके कहते ही मिल जायँ।"

"शुक्रिया, और मुझे यह भी यकीन है कि आप जैसा कि मुझसे हमेशा वादा करते रहे हैं इस वक्त कुछ रुपये देने से इन्कार न करेंगे, क्योंकि इस वक्त मुझे रुपयों की बहुत जरूरत है, आपके इस रुपये और लश्कर से मैं अपनी किस्मत-आजमाई करूँगा।"

मीरजुमला ने गम्भीरता पूर्वक कहा—"आप इत्मीनान रखिए, आपके लिए एक अच्छा खजाना मैं हमराह लाया हूँ।"

इस पर खुशी से दोनों हाथ मल कर औरंगजेब ने कहा—"तो बस, अब आप इजाजत दीजिए कि मैं आपको इसी वक्त दौलताबाद के किले में पहुँचा दूँ। वहाँ मेरा एक शाहजादा आप की खिदमत में रहेगा। इसके बाद हम दोनों इस मुहिम की मुश्किल की तदबीरों पर कायम गौर और फिक्र कर सकेंगे। इस सूरत में हरगिज मेरे ख्याल और ख्वाब में नहीं आता कि दारा शिकोह के दिल में कोई शुबहा पैदा होगा और वह ऐसे शख्स के बाल-बच्चों के साथ बदसलूकी करेगा जो बजाहिर इस कदर दुश्मन हो।"

औरंगजेब ने अत्यन्त नम्रता और विनय से ये बातें कहीं और मीरजुमला ने उन्हें स्वीकार कर लिया। अब औरंगजेब ने एक क्षण की भी देर न लगाई। शाहजादा मुअज्जम के साथ मीरजुमला को दौलताबाद भेज, उसने तेजी से आगरा की ओर बाग मोड़ी और

दो पहर से प्रथम ही अपने प्रथम विजित दुर्ग पर अपना विद्रोही झंडा खड़ा कर दिया।

: १३ :

औरंगजेब की दूसरी चाल

मीरजुमला जैसे पुराने अनुभवी सरदार के इस प्रकार अचानक धार कर लिया जाकी कर देने और कैद हो जाने की खबर सुनकर शाही फौज में हलचल मच गई। सेनापति, सरदार सब सन्नाटे में रह गए। परन्तु जब किले पर औरंगजेब का विद्रोही झंडा फहराते और तोपों को शाही सेना की ओर मुँह किए आग उगलने को तैयार देखा तो अमीर सब किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए।

वे सब मिलकर सलाह-मशवरा करने लगे। इसी बीच बीजापुर से आई हुई मीरजुमला की फौज ने—एक चोट कर किले को घेर लिया और उस पर जोर का आक्रमण कर दिया। शाही उमराव और सेनापति यह तमाशा देख कुछ भी अपना कर्तव्य निर्णय न कर सके।

अब औरंगजेब स्वयं किले की फसील पर आकर खड़ा हो गया। उसने पुकार कर कहा—

"तुम्हारा सरदार कौन है?"

पाँच-छः सरदारों ने आगे बढ़कर संकेत किया।

औरंगजेब ने उनसे बात करने और उन्हीं के इच्छानुसार काम करने का उन्हें आश्वासन दिया।

फिर दोनों सेनाओं के बीच में उसने सरदारों से बातचीत की।

"अब आपलोग क्या चाहते हैं?"

"हमारे सरदार को छोड़ दीजिए।"

"मगर वे तो अपनी ही मंशा से कैद हुए हैं। यह तो हर समझ एक चाल है जो मेरी और उनकी सलाह से हुई है।" इसके बाद उसने सब सरदारों को भारी-भारी इनाम और कीमती नजराने

लिए और बड़े-बड़े वादे किए। इसके बाद उसने कहा—'आप अब से मेरे सरदार हुए। आपकी सब फ़ौज भी मेरी हुई। इस फ़ौज के सिपाहियों को अबसे दुगुनी तनख्वाह मिलेगी, और तीन महीने की पेशगी तनख्वाह उन्हें आज ही दे दी जायगी।'

मीरजुमला की सेना और सरदार सब औरङ्गजेब की जय-जयकार करने लगे। अब इनसे निपट कर उसने शाही अमीरों को एक-एक पैग़ाम भेजा। उसमें कहा गया कि चूँकि बादशाह सलामत मर गए हैं आप लोगों को लाज़िम है कि हमारी तरफ़दारी करें। वरना आपको दारा की ख़िदमत बजानी पड़ेगी, जो काफ़िर और इस्लाम का दुश्मन है, आप जैसे बहादुरों और दीनदार अमीरों को एक काफ़िर के आगे सिर झुकाना सचमुच शर्म की बात है। इसके साथ ही औरङ्गजेब ने बहुत-सी बहुमूल्य भेंटें उनके लिए भेजीं।

महाबत खाँ ने औरङ्गजेब की कोई बात नहीं सुनी। उसने तुरन्त आगरे की ओर कूच बोल दिया। शेष सरदारों ने सलाह करके जवाब दिया—"जब तक हमें यह तसल्ली नहीं हो जाती कि बादशाह सलामत मर गए हैं हम आपसे नहीं मिल सकते। इसके लिए हम पचास दिन की मोहलत चाहते हैं। इस अरसे में हम अपने क़ासिद भेजकर दिल्ली और आगरा से सच्ची ख़बरें मँगा लेंगे और अगर ख़बर सच्ची हुई तो हम आपकी ख़िदमत बजा लावेंगे।"

यह सुनकर पैग़ाम कुरान उठा कर चुप हो गए तब औरङ्गजेब ने एक विश्वासी आदमी को बुरहानपुर के क़िलेदार मिर्ज़ा मसूदा के पास यह सन्देश देकर भेज दिया कि जो आदमी आगरे से दक्खिन को आ रहा हो उसे बिना तलाशी लिए आगे न बढ़ने दे और यदि उसके पास कोई ऐसा पत्र हो जिसमें बादशाह के ज़िन्दा रहने का हाल हो तो उसका सिर काट ले और पत्र को जला दे।

इधर यह सब काम हो ही रहे थे कि उसे सूचना मिली कि सूरत का क़िला जीत लिया गया। अब वह प्रसन्न होता हुआ—और गुजरात

से मीरजुमला से मिलकर आगे के मनसूबे गाँठने के लिए चुने हुए सवारों के साथ अन्धेरी रात में कल्याणी के दुर्ग से निकल कर दौलताबाद को चल दिया।

: ३५ :

सूरत

सूरत उन दिनों मुगल साम्राज्य का सबसे सम्पन्न और बड़ा बन्दरगाह था। योरोप और अरब, मक्का, बसरा, साहल कारोमण्डल, मालाबार, मछली पट्टम, बङ्गाल, स्याम, चीन, पेगू, मालदेव, मलाका, बटेविया, मनीला आदि तथा समुद्र के उस पार के देशों से भारत का सम्पर्क सूरत ही के द्वारा था। यह सुन्दर नगर ताप्ती नदी के किनारे समुद्र से नौ कोस के अन्तर पर था। यद्यपि इसके इर्द-गिर्द फसीलें न थीं पर यह सम्पन्न आबाद नगर था। ताप्ती का पाट समुद्र से कम न था और सम्पूर्ण नद छोटे-बड़े जहाजों से परिपूर्ण था। बड़े-बड़े जहाजों का माल गहरे समुद्र में उतार कर नावों द्वारा भेजा जाता था। ऐसी नावों का यहाँ तट पर खूब हुजूम रहता था। सैकड़ों नावें माल से लदी-फदी इधर-से-उधर आ जा रही थीं। देश-विदेश के व्यापारियों से ताप्ती का किनारा भरा रहता था। ये माल नकद लेकर या बदले में माल देते-लेते रहते थे। सूरत में जहाज बनाने के भी अनेक कारखाने थे। इन कारखानों में बहुत बड़े-बड़े जहाज बनाए जाते थे, क्योंकि यहाँ जहाजों के योग्य लकड़ी बहुतायत से मिलती थी। सूरत के बने हुए जहाज विलायती जहाजों की अपेक्षा मूल्य में सस्ते और आकार में बड़े होते थे। ये कारखाने अंग्रेजों के और पुर्तगीजों के थे। एक कारखाना हाल ही में फ्रान्सीसियों ने भी बनाया था। इस प्रकार यह नगर भारतीयों, फ्रान्सीसियों, अंग्रेजों, अरबों और फारसियों का सम्पन्न निवासस्थान और व्यापार-केन्द्र बना हुआ था।

नगरनिवासी सभ्य और सुशासित थे। संध्या काल में हिन्दू, पारसी स्त्री पुरुष स्वच्छ व श्वेत परिधान धारण किए—ताप्ती के सुखद समीर का सेवन करते थे। स्त्रियाँ परदा नहीं करती थीं। पारसियों की यहाँ अच्छी आबादी थी।

अभी दोपहर नहीं हुआ था। एक जहाज हरमज द्वीप से अभी बहुत से यात्रियों और माल असबाब लेकर आया था। हरमज द्वीप फारस का भारी बन्दरगाह था—यहाँ सैकड़ों करोड़पति बसते थे जो भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यापार करते थे। इस द्वीप में नमक की अनेक चट्टानें थीं। जहाज पर अनेक अरबी, फारस निवासी व्यापारी जवाहरात, मोती, सुगन्ध, मेवा, खजूर, घोड़े, रेशम वगैरह, आदि वस्तु लाए थे।

इनके बदले में वे गुड़, खाँड, बेसन का तेल, नारियल आदि लेना चाहते थे। जिनके व्यापारी जहाज पर पहुँच कर सौदे कर रहे थे।

जहाज से दो योरोपियन यात्री उतरे। एक प्रौढ़ आयु का पुरुष था जिसकी नीली तेज आँखें और भूरी छोटी-सी दाढ़ी उसकी चतुरता और बुद्धिमत्ता को प्रकट कर रही थीं। उसके साथ एक और युवक था, जो खूब बलिष्ठ और फुर्तीला नवयुवक था।

दोनों पुरुष इधर उधर देखते हुए बन्दरगाह से बाहर आए। दोनों योरोपियन नवागन्तुक थे। उन्होंने देखा—लोग लाल-लाल थूक रहे हैं। यह देख उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। प्रौढ़ पुरुष ने एक योरोपियन प्रवासी से जो वहीं रहता था पूछा—"यह क्या बात है दोस्त, ये देशी लोग खून क्यों थूक रहे हैं?"

यह बूढ़ा फ्रान्सीसी बहुत दिनों से सूरत में रहता था और शाही तोपखाने का नायब दारोगा था। उसने आगन्तुकों की ओर ध्यान से देखा, और कहा—"खून नहीं थूक रहे हैं दोस्त, ये लोग पान खा रहे हैं।"

"पान, यह क्या कोई दवा है? और इनके मुँह में कोई बीमारी है?"

"नहीं, नहीं, पान एक पत्ता है जिसे ये लोग शौक से चबाते हैं और पोर्चुगीज जिसे 'बीटल' कहते हैं। इससे होंठ सुर्ख हो जाते हैं, और मुँह से खुशबू आने लगती है, कुछ लोग पान के साथ तम्बाकू भी खाते हैं।"

"तम्बाकू खाते हैं? क्या ये पाइप नहीं पीते?"

"नहीं मोशिए, ये हुक्का पीते हैं। आप शायद हिन्दुस्तान में पहली ही बार आए हैं।"

"जी हाँ।"

"तभी, यह पान हिन्दुस्तान में सब लोग खाते हैं, आप देखेंगे कि हिन्दुस्तान के बादशाहों का पान खाने का बड़ा खर्चा है, और यह सूरत का बन्दरगाह जिसकी भारी आमदनी है, बादशाह ने बड़ी बेगम साहेब के पानदान के खर्चे के लिए दे दिया है।"

"क्या पान खाने का खर्चा इतना ज्यादा होता है?"

"मोशिए, यह एक तहजीब की चीज है और आप चूँकि हिन्दुस्तान में नए आए हैं, मैं आपको नेक नसीहत दूँगा कि जब कोई हिन्दुस्तानी दोस्त आपको पान पेश करे तो कभी इन्कार न करना। वरना इसे वह ऐसी बेइज्जती और कदमीजी समझेगा कि फिर कभी आपसे बात भी न करेगा।"

"यह तो बड़ी अजीब बात है।"

"बेशक, पान खाने की आदत हो जाती है, और हिन्दुस्तानी औरतों का काम ही सिर्फ पान खाना और गप्पें उड़ाना है। वे एक मिनिट भी बिना पान मुँह में दिए नहीं रह सकतीं।" इतना कह कर वह बूढ़ा रसिक फ्रान्सीसी हँसने लगा। कुछ ठहर कर उसने कहा—"आप पान खाना चाहें तो मैं पेश कर सकता हूँ, मेरा एक दोस्त पास ही है जिसकी पान की बढ़िया दूकान है।"

तरुण आगन्तुक ने उत्सुक होकर कहा—"जरूर, जरूर मोशिए, खिलाइए पान, यह हिन्दुस्तान की नई तहजीब सबसे पहिले हमें

सीखनी चाहिए।" उसकी उत्सुकता देख कर उसका साथी जोर से हँस पड़ा। और बूढ़ा फ्रान्सीसी लपक कर आगे बढ़ा और उसने दो बीड़ा पान बढ़िया बनाने का हुक्म अपने दोस्त दूकानदार को दिया। और जब मसाला लगाया तो उसने साथियों को कत्था-चूना-सुपारी का भेद बताया। युवक ने दोनों बीड़े खा लिए। कदाचित् दुष्ट दूकानदार ने उसमें थोड़ा धतूरा इन बेवकूफ योरोपियनों को उल्लू बनाने के लिए डाल दिया। उसे खाते ही युवक का सिर घूमने लगा और वह मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा। उसके साथी ने तलवार खींचकर दूकानदार से कहा—"बदमाश! तूने मेरे साथी को ज़हर दे दिया है, शहर कोतवाल के पास अभी चल!"

हंगामा सुनकर बहुत लोग इकट्ठे हो गए। इस भीड़-भाड़ में एक मुगल सिपाही भी था। उसने मामले की हकीकत जान कर कहा—"फिक्र न करो। वह अभी ठीक हुआ जाता है।" इतना कह कर उसने ज़रा-सा नमक युवक के मुँह में डाल दिया जिससे उसे होश आया। और उसने आँखें खोलीं।

इस पर बूढ़े फ्रान्सीसी ने सिर हिला कर कहा—"पहले-पहल पान खा कर ऐसा ही होता है, लेकिन बाद में सब ठीक हो जाता है।"

अभी यह बातें हो ही रही थीं कि चार सिपाही आए और वे आगन्तुकों के सामान की राई रत्ती तलाशी लेने लगे। तलाशी लेने पर एक ने कहा—

"क्या तुम्हारे पास कोई बेशकीमती जवाहरात है?"

"जी नहीं।"

"कोई उम्दा मोती है?"

"जी नहीं, हम तो रोज़गार की तलाश में हिन्दुस्तान आए हैं। जौहरी नहीं हैं।" इस पर वे लोग बड़ी देर तक बहस-मुबाहसा करते रहे। उनके सरदार ने कहा—"हमारे हाकिम साहेब का हुक्म है कि कोई कीमती जवाहरात भीतर हिन्दुस्तान में नहीं जाना चाहिए। बादशाह

का सख्त हुक्म है कि ऐसे सब असबाबात जप्त कर शाही खजाने में जमा किए जायँ।"

इन लोगों में अभी इन आगन्तुकों का विवाद पूरा ही था कि बहुत से लोग भागते-दौड़ते इधर-से उधर जाने लगे। वे कह रहे थे—शहर में लूट हो रही है। शाहजादा मुराद की फौजों ने किले को घेर लिया है।

थोड़ी ही देर में बन्दूकों की आवाज और आदमियों की चीख-चिल्लाहट चारों ओर से आने लगी। फ्रेंच बूढ़े ने कहा—"मोशिए, बेहतर हो आप लोग तुरन्त योरोपियनों की बस्ती में मेरे साथ भाग चलिए। वरना जान नहीं बचेगी। ये मुगल बिना सोचे-समझे योरोपियनों के सिर काट लेते हैं।"

इसके बाद तीनों व्यक्ति तलवारें नंगी करके तेजी से एक ओर को रवाना हो गए।

थोड़ी ही देर में लूट और आग का बाजार गर्म हो गया। जो योरोपियन लोग सूरत में रहते थे और शाही सेना में नौकर थे, वे शाही सेना के साथ भाग चले। उनमें से कुछ लुटेरों के साथ मिल कर शहर लूटने को चल दिए। इन दोनों नवागन्तुकों ने इस अवसर से लाभ उठाया और खूब बढ़-बढ़ कर हाथ मारे। वह बूढ़ा फ्रांसीसी बड़ा धूर्त निकला। वह सूरत की उन बड़ी-बड़ी कोठियों से वाकिफ था, जहाँ धनी लोग रहते थे। वह कुछ लुटेरों को वहीं ले गया। वहाँ खूब लूट-मार कर ये दोनों नवागन्तुक तुरन्त ही आगरे की राह चल पड़े। वहाँ इस समय बहुत लोग आ-जा रहे थे।

: ३५ :

जीनतुल-निसाँ

चैत का महीना था। दिन गर्म रहते थे और रातें ठण्डी। औरंगाबाद के शाही हरम में हलचल होने लगी थी। लौंडियों, बाँदियों और

के झोंके देती—गिरती-पड़ती उठ अपने-अपने काम में लग रही थी। शाहज़ादी ज़ीनतुन्निसा आसमानी दुशाले से अपना स्वर्णगात लपेटे सुख की मीठी झपकियाँ ले रही थी। दो बाँदियाँ चुपचाप मोरछल लिए पलंग के पास खड़ी मक्खियाँ उड़ा रही थीं, वे डर रही थीं कि कहीं ऐसा न हो कि कोई मक्खी उसे जगा दे। मखमल का गद्दा और रेशम के तकियों में शाहज़ादी अपनी गोरी-गोरी बाँहों को बगल में दबाए कवियों की सारी उपमाओं को बेकार कर रही थी।

इसी समय शाहज़ादी की पुरानी विश्वासी बूढ़ी बाँदी नादिरा ने आकर धीरे से कहा—"अय-हय अभी तक शाहज़ादी सो रही हैं?"

शाहज़ादी के उनींदे कानों में आवाज़ गई। धीरे-धीरे आँखें खोलीं, अँगड़ाई ली, गाल तमतमा उठे। बाँदियों ने कपड़े सम्हाल दिए। शाहज़ादी की नज़र सामने खड़ी नादिरा पर पड़ी। त्योरियों में बल पड़ गए—"कमबख्त दूर, मुर्दार, नींद बर्बाद कर दी, किसी के दर्द को भी देखती है, यहाँ मक्खियाँ तक नहीं उड़ाई जातीं, अच्छा री ठहर, आज तेरे बल निकालूँगी।"

नादिरा ने खुशामद की, कहा—"बहुत सो लीं हुज़ूर, मैं सदके, अब उठिए और दीनो-दुनिया की खबर लीजिए।"

"तो तुझे क्या? सोते हैं तो अपना ही वक्त खोते हैं।"

परन्तु नादिरा को जवाब देने का समय नहीं मिला। महलों में इधर-से-उधर समझी नाज़ुक बाँदियाँ, ख़वासें, मामी, हब्श बूढ़े, बाँदी गई, बलिहारी गई, वे चार खोजनी एक-एक करके जितनी इकट्ठी हो गई, एक से बढ़ कर एक का सिंगार, कुछ सोलियाँ चाँदी की किश्तियों में विविध द्रव लेकर आईं और शाहज़ादी को इत्र से सराबोर करने लगीं। इतने में नाचनेवालियों का दस्ता आ गया। बाँदियों ने मसनद लगा दी और नाचनेवालियाँ खड़ी हो नाचने लगीं। अब एक-एक पर [illegible] उठोगि [illegible] गी। सबने बूढ़ी नादिरा को देखा तो उसे कहा [illegible] "अच्छी बुआ, तुम यहाँ क्यों आईं?"

दूसरी ने नखरे से कहा—"देखो तो बदी, तीन बढ़ाकर बहुओं में आ मिली है।"

तीसरी ने कहा—"अब हम, उस गोराले मुँह में मिस्सी की बहार तो देखते ही बनती है।"

चौथी ने कहा—"हरजाई तुम्हारी सूरत, बाग में जाने को बैठी हो पर बिना नाच देखे चैन नहीं पड़ा।"

पाँचवी ने कहा—"बुआ, ये तुम्हारे बाले-बुन्दे तो गजब ढा रहे हैं।"

छठी ने कहा—'तो जली क्यों मरती हो, इनके मिर्ज़ा ने पहनाए हैं। अपना-अपना शौक।"

शाहजादी ने यह चुहल सुनी और हँस दी। उसने कहा—"अच्छा, हम गुस्ल करेंगे।" शाहजादी उठ खड़ी हुई। छम-छम करती सब बाँदियाँ, लौंडियाँ, कहारनियाँ, उर्दूबेगनियाँ, कलोलनियाँ और ख्वाजासरा पीछे-पीछे चलीं।

शाहजादी का यह जुलूस महल के हम्माम में पहुँचा। समूचा हम्माम अठपहलू संगमर्मर का बना हुआ था, दीवारों पर रोशनदान थे जिनसे रोशनी आती थी, धूप नहीं आती थी। यह हम्माम गर्मियों में ठण्डा और सर्दियों में गर्म रहता था। बीच में एक बड़ा हौज था, जिसमें सुगन्धित जल भरा था, उसमें गुलाब के ताजा फूल तैर रहे थे। बाँदियों ने शाहजादी की पोशाक उतारी। वे आपस में नोक-झोंक करने और शाहजादी के साथ जल-क्रीड़ा करने लगीं। जीवित सौन्दर्य वहाँ अपना सौरभ बखेरने लगा।

पता नहीं कब से यह गुलाब जल से लबालब हौज सूखा पड़ा है। वे शताब्दियों से हौज की गोद सूनी पड़ी है जहाँ ये अप्रतिम सौन्दर्य की प्रतिमाएँ केलि-क्रीड़ाएँ करती थीं। हाथ-मुँह धोने के वे हौज, जो खिले कमल के समान एक बड़ी रकाबी के आकार के थे, जिनमें भरे निर्मल जल में नीचे की झाँकती हुई पच्चीकारी और सुनहरी सुन्दरियों-

का अक्स या प्रतिबिम्ब परस्पर प्रतिस्पर्द्धा-सा करता दीख पड़ता था, अब भला गुलाबजल और इत्र तो उन हौजों को कहाँ मयस्सर, कभी टूटी छतों से बरसाती पानी भर आता है। फुरसत अब इनमें कौन झांके! धूल गर्द तक की सफाई नहीं होती। न जाने कहाँ से इधर उधर से सूखी पत्तियाँ और कूड़ा-कर्कट उड़कर ढेर हो गया है। संगमर्मर के वे आबदार हम्माम तले भी अब काई से काले पड़ गए हैं। अब तो वे हौज जैसे उस रंगमहल के कलेजे के बड़े-बड़े घाव हैं जो कभी न भरेंगे।

हौज से शाहजादी निकली। बाँदियों ने एक लम्बी तनजेब से उसका शरीर ढँक दिया। तनजेब से छन-छन कर शाहजादी का यौवन झाँकने लगा। इसी समय तोशेखानेवालियाँ कमख्वाब का बुकचा लेकर आ उपस्थित हुईं। बाँदियों ने शाहजादी को पोशाक पहनाई। इत्र लगाया। बाल गूँथे, सिंगार किया। बाँदियाँ जड़ाऊ गहनों की भरी किश्तियाँ लिए अदब से आ खड़ी हुईं। मनपसन्द जेवरात शाहजादी ने पहने। अब शाहजादी बारहदरी में आई। चाँदी का नक्काशीदार तख्त बिछा था, पीछे तकिया, आगे तीन सीढ़ियाँ, पायों में फूल-पत्ते। ऊपर जरकशी ताश का तख्तपोश।

सामने नर्तकियाँ, मुगन्नियाँ, कव्वालनियाँ बैठीं, बगल में मुँहलगी लौंडियाँ और अर्दाबेगनियाँ। मिठाई और मेवों के सजे ख्वान पेश हुए। एक चाँदी की बड़ी भारी किश्ती में बड़ा-सा कलावा, पाँच पानों का एक बीड़ा, हरी दूब, मिश्री के कूजे, चाँदी के छल्ले, ऊपर कमख्वाब का कश्तीपोश, जिसमें कलाबत्तू की झालरें। खवासिनी ने दस्तबस्ता अर्ज की—"हजरत तशरीफ लाए हैं!"

शाहजादी अदब से खड़ी हो गई। हजरत आलमगीर आए। धुला आबनूस का रंग, पाँच हाथ का लंबा-तगड़ा शरीर, तीन मन की काठ, मेंहदी रंगी दाढ़ी, पान कचरते, होंठ फड़फड़ाते। नंगा बदन हजरत मसनद पर बैठे। उन्होंने पीछे हजरत आसमा, अकबर बादशाह

आदि की मन्नतें दीं। फिर किसी ने बताशा निकाला। सुहाग मल्हार-मल रहमान रहीम—कहकर उसमें गिरह दी। दूसरी गिरह में पान का बीड़ा बाँधा, तीसरी में हरी दूब और मिश्री की डली बाँधी, चौथी में चाँदी का छल्ला बाँधा, पाँचवीं गिरह शाहज़ादी के सिर से घुमा कर उस बताशे में लगाई। होठों में बड़बड़ाए। दुआ दी और चल दिए। इन सब झंझटों से शाहज़ादी थक गई। धीरन मौलदार, सदाबहार, नर्गिस, मानकुँवर, मीन कुँवर, उसके सरहाने और पाँव दाबने लगीं।

शाहज़ादी ने मुँह बनाकर कहा—"हमारे सर में दर्द है।" बाँदियों के होश उड़ गए। वे दौड़ी गईं हकीम के पास। अम्मा-नानी-दम्मा-बूढ़ू सब इकट्ठी हो गईं—"हाय, हाय, किस कम्बख्त ने इधर शाहज़ादी को टोक दिया!" अम्मा ने शाहज़ादी को देखकर गम्भीरता से कहा—'अरी दौड़ो कोई घसारी के पाँव तले की मिट्टी पुड़े में बनाया। कई बाँदियाँ दौड़ीं। बूढ़ू ने कहा—'बलाएँ लूँ मैं हजरत फ़ातिमा हजरत मुहम्मद के नाम की सौगन्ध बोलती हूँ।'

शाहज़ादी खिलखिला कर हँस पड़ी। दौड़ी बाँदियाँ—सब 'सुहाग मल्हार' चिल्ला उठीं। शाहज़ादी ने कहा—अच्छी अम्मा, अब हम गुड़िया खेलेंगे!' बाँदियाँ दौड़ पड़ीं और शाहज़ादी की गुड़ियाँ उठा लाईं। छोटी-बड़ी अनेक, बरतन और जवाहरात से सजी पड़ी। शाहज़ादी गुड़िया खेलने लगी। एक ने कहा—"अब मैं वारी, इधर की इस प्यारी गुड़िया की तो शान आलमगीर है!"

अब अब तो नाच मुजरा और मुबारकबादी की झड़ी लग गई। शाहज़ादी बहुत खुश हो गई। उसने अँगूठी, छल्ला, माला, अशर्फी, मुहर, रुपए जो हाथ में आया बाँदियों पर फेंकना शुरू कर दिया। बाँदियाँ मालामाल होने लगीं।

उसी समय—नादिरा बीबी ने फिर कक्ष में प्रवेश किया। उसने क्रोध भरी नजर से इस दृश्य को देखा। बाँदियाँ उसे देख मुँह बनाने

लगी। पर उसने उनकी परवा न की—वह सीधे शाहजादी के पास तक चली गई। उसने झुक कर सबको चले जाने का हुक्म दिया। मतलब सबका पूरा हो गया था। नादिरा बीबी को शाहजादी मानती है यह वे सब जानती थीं। वे सब भाग गईं। शाहजादी अकेली रह गई। अकेली होने पर उसने कहा—

"शाहजादी, आप गुड़िया खेल रही हैं और सल्तनत में बगावत की आग भड़कना चाहती है।"

शाहजादी ने अपनी गुड़िया को गोद में सुलाते हुए कहा—"तो मैं क्या करूँ?"

"हुजूर, शाहजादा जंग करने के लिए आगरे जा रहे हैं?"

"इससे क्या होगा? अब्बा को इस कदर परेशान होने का मकसद?"

"हुजूर शाहजादी, उनका बाहर आगरे जाना निहायत जरूरी है।"

"इस शिद्दत की गर्मी में?"

"अभी गर्मी कहाँ है।"

"रात ही तो ठण्डी है, दिन में भुर्र आग बरसती है, अब्बा हुजूर की जहमत बर्दाश्त कर सकेंगे?"

"क्यों नहीं, अगर तख्त पर उन्हें कब्जा करना है तो सब कुछ बर्दाश्त करना पड़ेगा। जरूरत हुई तो जंग भी करनी पड़ेगी।"

"तोबा तोबा, जंग भी।"

"तब क्या शाहजादी समझती हैं—सबको शाही गद्दी मिल जायगा, आप जानती हैं कि शाहजादी रोशनआरा ने हजरत शाहजादा को बुलाया है।

"तो मैं क्या करूँ?"

"आप भी शाहजादी रोशनआरा को खत लिखें।"

"क्या उन्होंने खत लिखा है?"

"बेशक, हजरत शाहजादा को खत लिखा है।"

"हाँ मैं भी ख़त लिखूँगी। शायस्ता ख़ानम जाओ और ख़ानजानी बी को बुलाती जाओ।"

"बहुत खूब, मगर याद रखिए शाहज़ादी, यदि हमारा शाहज़ादा सल्तनतहीन हुए तो हुज़ूर का इक़बाल ही आगरे के समनबुर्ज में मुक़ैद रहेगा।"

"यह रहना ही चाहिए, तू शायस्ता ख़ानम जा—मैं अभी ख़त लिखूँगी।"

"नादिरा ने मुजरा किया और चली गई। शाहज़ादी फिर अपनी गुत्थियों को खोलने लगी।

: ३६ :

कूच का नक्कारा

अमीर मीरजुमला से सब सलाह-मशविरा कर के और मीरजुमला की और अपनी सम्मिलित सेना लेकर औरङ्गज़ेब ने एक क्षण भी नष्ट न कर गुजरात की ओर कूच बोल दिया।

मुराद को धन की बड़ी आवश्यकता थी। उसने अपने विश्वासी ख़्वाजा शाहबाज़ खाँ को ६ हज़ार सवार देकर सूरत पर आक्रमण करने को रवाना कर दिया। उस समय सूरत एक धनसम्पन्न नगर और बन्दरगाह था।

परन्तु मुराद ने सूरत पर आक्रमण करने से प्रथम ही इस भेद को खोल दिया और बड़ी-बड़ी डींगे मारीं। इसका यह परिणाम हुआ कि सूरत का किलेदार सावधान हो गया। इससे केवल यही नहीं—कि सूरत की लूट में अधिक धन मुराद के हाथ नहीं आया—सूरत का दुर्ग भी नहीं जीता गया। धूर्त औरङ्गज़ेब यह बख़ूबी जानता था कि बिना सूरत के किले को जीते हुए आगे आगरे की ओर बढ़ने से पीठ अरक्षित रहेगी। उसने कूच के प्रारम्भ ही में अपने दूधभाई मीरबाबा

को बहुत सी बातें समझा-बुझा कर तथा कुछ चुने हुए सवार देकर आगे मुराद के पास भेज दिया। उसने उसके हाथ सूरत की फतह पर मुराद को बहुत सी मुबारकबादियाँ दीं तथा मीरजुमला के साथ जो कार्यवाही की गई थी और जो मेल-करार हुए थे वह भी सब उसने कहला भेजे। तब उसने कहला भेजे। तब के साथ उसने एक खत भी मुराद को लिखा, जिसमें उसने लिखा था—"कि मैं एक बड़ी फौज की तैयारी में हूँ और दौलत भी मेरे पास बेशुमार है। बड़े-बड़े उमराव-सरदारों से मेरी पक्की बातचीत हो चुकी है, और अब बुर्हानपुर व आगरे की तरफ बढ़ने में मेरी तरफ से कुछ भी देर नहीं है। बस, आप से दरख्वास्त करता हूँ कि आप भी कूच में देर न करें और दोनों लश्करों को एक साथ मिल जाने के लिए कोई जगह तय करके मुझे खबर दें।"

सूरत की लूट में बहुत कम खजाना मिलने से मुराद बहुत निराश हो गया था। उसने जो आशा भरे सपने देखे थे, वे जाने लगे। परन्तु अब औरङ्गजेब का यह पत्र पढ़ कर और मीरजुमला की कुमक पाकर वह आशा और उत्साह से भर गया। जो धन सूरत की लूट से उसे मिला था—वह सब तो उन लुटेरे सिपाहियों को तनख्वाह बाँटने ही में खर्च हो गया था—जिनके बल उस मुहिम पर ले गया था। अब उसने इस पत्र से उत्साहित होकर—सूरत के दुर्ग पर घेरा डाल दिया और कुछ सरदारों की सहायता से, जो उसकी सेना में थे—दुर्ग की दीवालों को सुरंग से उड़ा दिया। जिससे दुर्ग में घबराहट फैल गई और दुर्ग का अधिपति उसकी शरण में आ गया। मीरजुमला ने भी उस वक्त बड़ी बहादुरी दिखाई। साथ ही उसने वहाँ के ही धनिकों से जबर्दस्ती ५ लाख रुपए वसूल कर लिए।

सूरत के दुर्ग को फतह कर मुराद को बहुत प्रसन्नता हुई। उसका हौसला बढ़ गया और उसका नाम भी प्रसिद्ध हो गया। सिपाही आ-आ कर उसकी सेना में भर्ती होने लगे। औरङ्गजेब के पत्र तो निरन्तर

आते ही रहते थे, जिनसे वह फूल कर कुप्पा होता जाता था। सच था कि इन पत्रों में उसकी खूब लल्लो-चप्पो की जाती थी। अब उसने धूमधाम से मुरव्वजुद्दीन के नाम से अपने को बादशाह घोषित कर दिया।

ख्वाजा शाहबाज़ खाँ उसका सच्चा शुभचिन्तक था। वह औरङ्गज़ेब की धूर्तता से अच्छी तरह परिचित था। जब औरङ्गज़ेब माण्डो तक आ पहुँचा और मालवे में छावनी डाल कर उसने मुराद को लिखा कि 'आपका सेवक यह औरङ्गज़ेब यहाँ मालवे में अपने लश्कर समेत आपके इस्तकबाल को हाज़िर बैठा है। अब आप जल्द तशरीफ़ लाइए।' तो एक बार शाहबाज़ खाँ ने उसे फिर समझाया—

"मेरे आका, मुझ पर यकीन कीजिए। चाहे कुछ हो आप आप गुजरात को—बल्कि अहमदाबाद को मत छोड़िए। मैं आप को इस इलाके के सभी मज़बूत किलों का मालिक बना दूँगा और बेशुमार दौलत आपके कदमों में ला रखूँगा।"

"इस पर मुराद ने हँस कर कहा—"मगर वे सब क्या तख्ते देहली के बराबर होंगे?"

"हुज़ूर, उसकी उम्मीद न रखिए।"

"लेकिन मेरा भाई औरंगज़ेब मेरे लिए इस कदर सिरदर्दी मोल ले रहा है तब मुझे मुनासिब नहीं कि ढीला पड़ूँ, और बुज़दिल कहलाऊँ।"

"हुज़ूर, मेरे आका, इस दगाबाज़ औरंगज़ेब के फेर में न पड़िए, इस पर ज़रा भी भरोसा मत कीजिए।"

मुराद ने अविश्वास की हँसी हँस कर इस सच्चे वीर और स्वामिभक्त सेवक से कहा—"अच्छा, मैं फुर्सत में तुम्हारी दास्तान सुनूँगा, मेरे प्यारे शाहबाज़, बेशक तुम एक बहादुर सिपाही हो—मगर बादशाहों के मशीर होने लायक नहीं।"

इसी समय मुहम्मद अमीन और मुहम्मद सिद्दीकी ने आकर मुराद

को सलाम किया। ये दोनों भी औरंगजेब के भेदिए थे, और उसी के हुक्म से मुराद के पास रहते और हर समय उससे बादशाह की भाँति व्यवहार करते थे। इस कारण मूर्ख मुराद उन से बहुत खुश रहता था। उन्हें देखते ही मुराद ने हँस कर कहा—"खुश आमदन, कहिए लश्कर के क्या हालचाल हैं?"

"जहाँपनाह, तमाम लश्कर हर तरह लैस है, बस कूच के लिए जहाँपनाह के हुक्म का मुन्तज़र है।"

"लेकिन आप लोगों का क्या ख्याल है कि मुझे औरंगजेब पर यकीन नहीं करना चाहिए?"

मुहम्मद अमीन ने आश्चर्य का भाव चेहरे पर लाकर कहा—"आफ़रीन हुज़ूरेवाला, दुनिया में ऐसा भाई हो नहीं सकता।"

मुराद ने मुस्कुराकर कहा—"आप कुछ कह सकते हैं कि औरंगजेब का लश्कर कहाँ तक आ पहुँचा है?"

इसपर मुहम्मद सिद्दीकी ने कहा—"खुदावन्द, सुनने में आता है वह माण्डो में जहाँपनाह के हुक्म का इन्तज़ार कर रहे हैं।"

मुराद ने बादशाही शान से कहा—"बहुत खूब, तो अब हमें एक लमहा भी न खोना चाहिए और उनसे मिल जाना चाहिए। बस आज, रात ही को कूच बोल दिया जाय।"

शाहबाज़ खाँ क्रुद्ध दृष्टि से दोनों अमीरों को देखने लगा। उसकी कुछ भी परवाह न कर दोनों ने अदब से मुराद को कोर्निश की और हाथ बाँध कर कहा—"जो हुक्म जहाँपनाह।"

दोनों सरदार चले गए तो शाहबाज़ खाँ ने फिर कुछ कहना चाहा—परन्तु मुराद ने आराम करने का इरादा प्रकट किया।

उसी रात उसने अपना लश्कर लेकर माण्डो की ओर कूच बोल दिया। मीरबाबा के हाथ धन्यवाद और प्रेम के संदेश भेजना भी वह न भूला और गुजरात से सीधा पहाड़ों और जंगलों की राह कूच-दर कूच करता वह माण्डो पहुँचा।

जब दोनों भाइयों की सेना आमने-सामने हुई तो औरंगजेब ने खुद आगे बढ़ कर मुराद की अगवानी की। आगे बढ़ कर उसकी रकाब चूमी और विनम्र भाव से कहा—"जहाँपनाह, बादशाहत और सल्तनत की मुझे जरा भी ख्वाहिश नहीं है। यह फौजकशी मैंने केवल इसलिए की है कि जिस तरह बन पड़े काफिर दारा से—जो मेरा और आप का जानी दुश्मन है, लड़-भिड़ कर आप को उसके सल्तनत पर—जो खाली पड़ा है, बिठा दूँ।"

औरंगजेब ने जब यह बात सरे आम सब सरदारों के समक्ष कही तो मुराद खुशी से फूल उठा। उसने औरंगजेब और सब सरदारों से बारंबार बातें करनी आरम्भ किए। औरंगजेब जब जब मिलता—उसे हजरत—जहाँपनाह, आदि कह कर सम्बोधित करता और साधारण सेवक की भाँति अपने को प्रकट करता।

मुराद राज्य के लालच में ऐसा अन्धा हो गया कि इस कपटी भाई के आचरण पर उसे तनिक भी सन्देह न था। इस प्रकार दोनों सेनाएँ मिल कर बहुत बड़ी हो गईं और वे धीरे-धीरे उज्जैन की ओर बढ़ने लगीं।

आगरे में जब यह खबर पहुँची तो वहाँ चिन्ता और घबराहट का वातावरण छा गया—बुद्धिमान लोग कहने लगे कि औरंगजेब की बुद्धिमत्ता और मुराद की शूरता देखिए क्या रंग लाती है।

: २७ :

गुस्लखाने का दरबार

बादशाह गुस्लखाने में तशरीफ रखते थे। सुगन्धित मोमबत्तियों का धीमा प्रकाश हो रहा था। मनसबदार खलील खाँ की उस दिन की चौकी थी और वह निहायत अदब से एक कोने में खड़ा था। जगह जगह चौकस गुर्जबरदार व्यवस्था करते फिर रहे थे और आवश्यक आज्ञाएँ

खा रहे थे, कुछ लोग शाही मरातिब आदि लिए खड़े थे। खिलवत का दरबार था इसलिए और कोई वहाँ न था। बादशाह क्रोध से काँप रहे थे और जो लोग वहाँ थे वे भय से थर-थर काँप रहे थे, एक तो वृद्धावस्था, दूसरे कमजोर शरीर, तीसरे रोग, चौथे चारों तरफ विश्वासघात अविश्वास ऐसी हालत में तमाम हिन्दुस्तान के बादशाह का विचलित हो जाना स्वाभाविक ही था।

थोड़ी ही देर में दारा ने आकर बन्दगी की। बादशाह ने मुँह फेर लिया। दारा भी गुस्से में भरा था। बादशाह की नाराजी की कुछ भी परवाह न कर वह सीधा तनकर खड़ा हो गया। कुछ देर सन्नाटा रहा। दारा ने कहा—"हुजूर ने मुझे किसलिए तलब किया है?"

बादशाह ने रुखाई से कहा—"सुलेमान शिकोह और मिर्जा राजा जयसिंह भी आ जायें तो कहूँ।"

इतने ही में नकीब ने राजा जयसिंह और शाहजादा सुलेमान के आने की सूचना दी। दोनों आदाब बजाकर अपने स्थानों पर खड़े हो गए। बादशाह ने मिर्जा राजा जयसिंह की तरफ रुख करके कहा—"आपको मालूम है कि हमारे दानिशमन्द वजीरुद्दौला सादुल्ला खाँ को किसी ने मरवा डाला। क्या आप उस खूनी का पता लगा सकते हैं?"

राजा साहब ने कोई जवाब नहीं दिया। वे सिर नीचा किए खड़े रहे। बादशाह ने फिर कहा—"आप जानते हैं वह एशिया भर में अद्वितीय आलिम था। सल्तनत का तमाम बोझ वह उठाए था। आज उसके बिना सल्तनत डगमगा रही है। यदि आप उस खूनी को जानते हैं तो बताइए वह चाहे जो हो हम उसे माफ न करेंगे। फिर वह खूनी चाहे हमारा बेटा ही क्यों न हो।" यह कह कर उन्होंने लाल-लाल आँखें करके दारा की, ओर देखा। दारा ने दृष्टि नहीं मिलाई। वह जमीन की तरफ देखता रहा।

बादशाह ने फिर दारा की ओर अग्निमय नेत्रों से घूरकर लरजती हुई जबान से कहा—

"तुम इसकी कुछ कैफ़ियत दे सकते हो? फ़र्ज़न्देमन। तुम इस वक्त तख्त के वारिस—वलीअहद के तौर पर मालिक हो। स्याह सफ़ेद सब कुछ करने का तुम्हें अख्तियार है। तुम्हें सल्तनत की सब बातें मालूम होनी चाहिए। कैफ़ियत दो, इतना बड़ा अमीर किस तरह मारा गया?"

दारा ने नीची नज़र किए हुए ही कहा—

"क्या हुज़ूर कुछ मुझ पर शक करते हैं?"

"शक? तो क्या तुम इस ख़ून के मुतल्लिक कुछ नहीं जानते?"

"हुज़ूर के पास मेरे खिलाफ़ क्या सुबूत है?"

"सुबूत! तुम मुझसे सुबूत माँगते हो? तुम्हारी यह जुर्रत! तमाम में यह चर्चा आम है कि तुमने यह ख़ून किया है और तुम मुझसे सुबूत माँगते हो?"

दारा क्षण भर होंठ चबाता खड़ा रहा। फिर उसने काँपते हुए किन्तु दृढ़ स्वर में कहा—"ख़ैर, तो अगर हुज़ूर का ऐसा ख़याल है तो मेरा जवाब यह है कि सल्तनत की बहबूदी के लिए जो कुछ किया गया वह दुरुस्त है।"

"तो तुम तस्लीम करते हो कि यह ख़ून तुमने किया है?"

"अगर हुज़ूर यह तस्लीम करें कि बेगम शाइस्ता खाँ का ख़ून हुज़ूर ने किया तो बन्दा भी बेशक इस ख़ून को तस्लीम करेगा।"

यह सुनते ही बादशाह तिलमिला उठे। वे एकदम तख्त से उछल पड़े। परन्तु तुरन्त ही वे घायल पशु की भाँति गिर गए। उन्होंने दोनों हाथों से आँखें ढाँप लीं। उनकी उँगलियों से आँसुओं की धार बह चली। वे बड़ी देर तक बड़बड़ाते रहे, पर इससे ज़रा भी विचलित न होकर दारा ने कहा—"हुज़ूर कैफ़ियत माँगते हैं तो सुनिए। मरहूम वज़ीर साहब की पठान बेगम—जिसे हुज़ूर बहुत अच्छी तरह जानते हैं और जो उस बदनसीब की किस्मत का सितारा बुलन्द करने का एक अच्छा ज़रिया रही, अपने बेटे को तख्ते तैमूरी देने के मनसूबे गाँठ रही

थी, उसका यह दावा था कि उसके पेटे में शाही खून का असर है, मगर यह फर्माबर्दार तो उसे पठान ही समझता है।"

बादशाह बूढ़े शेर की तरह गरज उठा। उसने कहा—"खबरदार, याद रखो अभी तक बादशाह हम ही हैं।"

परन्तु दारा उद्दण्डता से कहता हो गया—"मकीनन हुजूर बादशाह हैं और जब हुजूर ने ओफियत तलब की है तो पूरी बात सुनिए हुजूर! हमारे मामू साहब शाइस्ता खाँ, जिनकी बेगम ..."

बादशाह एक दम तख्त से खड़े हो गए और पागल की तरह अपने बाल नोचने लगे। मिर्जा राजा ने इशारे से दारा को रोका और बादशाह को सम्हाल कर तख्त पर बैठाया।

तख्त पर बैठ कर बादशाह सींकने लगे। वे फूट-फूट कर रोने लगे। अपने पापों को स्मरण करके वे बहुत विकल हो उठे। मिर्जा राजा ने कहा—

"जहाँपनाह, यह वक्त पर में फूट डालने का नहीं है। हुजूर, तख्त पर इस वक्त मुसीबत की काली घटाएँ छाई हैं। सबको मिलकर उसे दूर करने का बन्दोबस्त करना चाहिए।"

बादशाह कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर बोले, "अफसोस, हमने जो सोचा था वह न हुआ। हमने चालीस साल बिना लड़ाई झगड़े के काटे। मुल्क में अमन-आमान रहा। लोग फले-फूले। मगर अब देखता हूँ—तमाम मुल्क उजड़ जायगा। हमारा इतनी मेहनत से इकट्ठा किया खजाना लुट जायगा। यह मुगल तख्त अब धूल में मिल जायगा।"

बूढ़े बादशाह को अत्यन्त दुखी देखकर सुलेमान शिकोह धीरे-धीरे आगे बढ़ा। वह बीस वर्ष का सुन्दर युवक था। वह उदार, सरल किन्तु जिद्दी था। बादशाह उसे बहुत प्यार करते थे। उसने बादशाह के निकट पहुँचकर धीरे से कहा—"दादा जान, इस कदर रंजीदा न हों, जो होना था हो गया। हुजूर, बंगाल से शुजा और दक्खन, गुजरात

से मुराद और औरंगज़ेब बढ़ते आ रहे हैं। हुजूर के जितने खत जाते हैं उनकी ये लोग कुछ भी परवा नहीं करते। लश्कर सुलतान शुजा सोन पार कर चुके हैं, उनके साथ चालीस हजार सवार और डेढ़ लाख प्यादे हैं। साथ ही बेशुमार रसद और खजाना है।"

यह सुनकर बादशाह सन्नाटे में आकर सुलेमान का मुँह ताकने लगा। सुलेमान ने अदब से झुककर फिर कहा—"मगर, हुजूर का हुक्म हो तो मैं चाचा जान को आगे बढ़ने से रोक दूँ या उन्हें पकड़ कर हुजूर के रूबरू हाज़िर करूँ।"

बादशाह ने मिर्ज़ा राजा जयसिंह की तरफ प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

मिर्ज़ा राजा ने कहा—"शाहज़ादे की दरख्वास्त मुनासिब है, जहाँपनाह!"

'तो' कुछ सोचते हुए बादशाह ने धीमे स्वर में कहा—"हम चाहते हैं कि शाहज़ादे के साथ आप भी जायें, आप न सिर्फ़ सल्तनत मुग़लिया के पुराने सिपहसालार हैं, मेरे पुराने दोस्त भी हैं। आपकी बहादुरी दुनिया में ज़ाहिर है। हम चाहते हैं कि आप जैसे बने शुजा को वापस बंगाल लौटा दें।"

बादशाह की अपने प्रति इतनी उपेक्षा और अवज्ञा देख दारा जल उठा। उसने धीरे से कहा—"मुमकिन है राजा साहब बहादुर हों—मगर बज़ाहिर तो वे एक मीरासी दीख पड़ते हैं।"

बादशाह कुछ कह रहे थे इसलिए वे शायद इन शब्दों को न सुन सके। मगर मिर्ज़ा राजा ने सुन लिया। सुनकर भी वे सह गए। उन्होंने बादशाह के पास झुककर कहा—"जहाँपनाह की जैसी मर्ज़ी होगी वही होगा।"

"तो हम चाहते हैं कि आप कूच की तैयारी कर दें। दिलेर खाँ भी आपके साथ रहेंगे। शाहज़ादा सुलेमान को मैं आपके सुपुर्द करता हूँ।"

राजा ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया। यह सौम्य-सा दरबार

बर्खास्त हुआ। राय उससे पहिले सलाम करके चल दिया, परन्तु मिर्जाराजा जय सिंह जब जाने लगे तो बादशाह ने उन्हें ठहरने का इशारा किया। एकान्त होने पर उन्होंने कहा—

"आप खुदा से दुआ कीजिएगा कि शाही हुक्म के मुताबिक वापस चले जाना—सिर्फ तुम्हारा फ़र्ज ही नहीं बल्कि फ़न-हुकूमत और सल्तनत की रू से भी यह निहायत जरूरी है कि वह इस तौर पर अपना ज़ोर और ताकत न दिखाए। इसलिए, जब तक एक मुनासिब मौका इस काम के लिए न आ जाय यानी जबतक कि हमारी बीमारी लाइलाज न साबित हो या मुरादबख्श और औरंगजेब की मुश्तरका फौजों का कोई नतीजा न मालूम हो जाय, ऐसी जल्दबाजी तुम्हारे लिए मसलहत नहीं है।"

महाराज जय सिंह ने बादशाह को हर तरह इत्मीनान दिलाया कि ऐसा ही होगा और जहाँ तक होगा लड़ाई बचाई जायगी। सिर्फ शाहजादे को वापस ही लौटा दिया जायगा।

बादशाह ने सन्तुष्ट होकर कहा—"बस, यही हम चाहते हैं और साथ ही यह भी कि जल्द-से-जल्द यह काम करके—बिना फौज को थकाए या कमजोर किए आप वापस लौट आवें ताकि आगे न मालूम कैसा मौका हो और कैसी जरूरत पड़े।"

राजा ने यह भी स्वीकार किया और फिर बन्दगी करके चले गए। बादशाह दुखित और चिन्तित मन से भविष्य को सोचते हुए—तख्त से उठकर ईरानी कालीनों के फर्श का रास्ता ले धीरे-धीरे ख्वाबगाह की ओर तशरीफ ले चले।

चाँदनी छिटक रही थी। सामने ताज चाँदी के समान चमक रहा था। बादशाह ने एक नजर उस पर डाली और अतीत की सुखद स्मृतियों में विभोर हो एक ठण्डी साँस खींची।

—:०:—

औरङ्गज़ेब की कठिनाइयाँ

बीदर और कल्याणी के दुर्ग बीजापुर से छीन लेने के बाद सिंहासन के लिए आगरे की ओर प्रस्थान करने तक के पाँच मास औरङ्गज़ेब के, भारी कठिनाइयों और परेशानियों के थे। घटनाएँ तेज़ी से घट रही थीं, संकट अनेक थे। इन सब का सामना करते हुए अपने ध्येय पर आगे बढ़ना आसान न था। उसका भविष्य अन्धकारपूर्ण था और जिन संकटपूर्ण स्थितियों में वह फँसता जाता था वे साधारण न थीं। परन्तु उसने धीरज और साहस से उन सब विपरीत परिस्थितियों का सामना किया और इस समय अपनी सेना को सुगठित करने में उसने अपनी सारी शक्ति लगा दी।

अभी उसने बीजापुर पर विजय प्राप्त की ही थी, और वह सोच रहा था कि उस बड़ी सैन्य से कैसे लाभ उठाया जाय जो मीरजुमला आगरे से ले आया है। परन्तु शाही सिपहसालार उसका साथ देने में आनाकानी कर रहे थे। यद्यपि उसने आगरे से कोई समाचार दक्षिण में न आने पावे इसकी कड़ी-कड़ी पाबन्दियाँ और रोक-थाम लगा दी थी। फिर भी यह अफवाह फैल हो गई कि बादशाह जिन्दा हैं और उन्होंने दक्षिण की सेना को वापस बुलाया है। महाबत खाँ तो अपनी सेना लेकर आगरे चल ही दिया था—शेष अमीर विरोधी हो रहे थे। ऐसी दशा में उसने अपनी विलक्षण बुद्धि और असीम साहस करके मीरजुमला को कैद कर लिया और उसकी सारी सेना अधिकृत कर ली।

इन सारी परिस्थितियों का प्रभाव बीजापुर दरबार पर भी पड़ रहा था। बीजापुर को इस समय शिवाजी का सहाय मिल रहा था। औरङ्गज़ेब का दूत शिवाजी के पास से विफल मनोरथ होकर लौट

आया था—चतुर शिवाजी ने अपना अवसर ताक लिया था—औरङ्गजेब की विपत्ति से लाभ उठा कर बीजापुर दरबार उन सन्धि की शर्तों का अब पालन ठीक-ठीक नहीं कर रहा था जो मीरजुमला और बीजापुर दरबार में हुई थीं। निस्सन्देह मीरजुमला का कैद हो जाना भी इसका एक कारण था—जिसका वास्तविक स्वरूप कोई नहीं जानता था। अब तो इसके लिए एक ही राह थी कि वह सब ओर से ध्यान हटा कर, जो कुछ भी हाथ लगे उसी को लेकर केवल एक ही ध्येय पर अपना पूरा ध्यान केन्द्रित करे और वह ध्येय था आगरे पहुँच कर मुगल तख्त को अधिकृत करना। सो उसने अब सारा ध्यान इधर ही लगाया और अपनी सारी चालों और साधनों को आगरे को अधिकृत करने में लगा दिया।

दक्षिण से रवाना होने से प्रथम उसने बीदर और कल्याणी के किलों का निरीक्षण किया, वहाँ मजबूत थाने कायम किए। किलों की मरम्मत करा कर वहाँ की सामग्री और सेना को व्यवस्थित किया। इसी समय उस पर एक वज्रपात हुआ। उसकी सबसे बड़ी बेगम दिलरस बानू ने शाहजादा मुहम्मद अकबर को प्रसव किया और प्रसूति पीड़ा ही में उसका प्राणान्त भी हो गया। यह इस समय औरङ्गजेब के सिर पर एक विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा, पर उसने बड़े धैर्य से इस आपत्ति का सामना किया। वह तुरन्त औरङ्गाबाद पहुँचा और शान्तिपूर्वक बेगम की अन्त्येष्टि क्रिया अत्यन्त सम्मान और प्रतिष्ठा से की। उसने उसे 'रबिया उद-दौरानी' अर्थात् आधुनिक पवित्रात्मा रबिया, नाम दिया और औरङ्गाबाद में उसे दफनाया, वहाँ बाद में उसका संगमरमर का मकबरा बनाया गया, जो दक्षिण का ताजमहल मशहूर हुआ। अभी उसे बहुत काम करने थे और अपनी प्यारी बेगम का मातम मनाने का उसे समय नहीं था। उसने सबसे महत्त्वपूर्ण और आवश्यक काम यह किया कि सेना भेज कर नर्मदा पार करने के सब घाटों पर अपना अधिकार कर लिया। इस प्रकार दक्षिण के शाही हाकिमों और राजा का सम्बन्ध एकदम विच्छेद हो गया।

उसने यह तय कर लिया था कि जबतक शाहजहाँ की मृत्यु का निश्चय न हो जाय वह विद्रोह का झण्डा न उठावेगा। परन्तु जो घटनाएँ तेजी से घट रही थीं उन्होंने उसे इस निर्णय पर दृढ़ न रहने दिया। उसे दक्षिण से सम्बन्ध रखने वाली दारा की नीति ज्ञात हो चुकी थी। उसने यह भी सुना था कि मुराद को गुजरात की सूबेदारी से हटा कर बरार का सूबेदार बनाने का हुक्म जारी हो चुका है। इसका यह अर्थ स्पष्ट था कि बरार औरङ्गजेब से छीन कर और मुराद को देकर दोनों भाइयों में झगड़ा पैदा करा दिया जाय। उसे यह भी सूचनाएँ मिल चुकी थीं कि शाइस्ता खाँ को उसका सच्चा समर्थक था—और अभी मालवे का शासक था, मालवे से वापस आगरे बुलाया गया है तथा ऐसे ही परवाने मीरजुमला और दक्षिण के अन्य उमरावों पर भी जारी किए गए हैं।

अब उसे स्पष्ट हो गया कि बादशाह बनने के लिए अन्तिम प्रयत्न करने का समय आ उपस्थित हुआ। उसके अधीन साहस और कूट नीति का यह मौलसेरा था कि उसने मीरजुमला को बनावटी झगड़ा करके दौलताबाद के किले में कैद कर लिया और बादशाह के नाम से उसकी सारी सेना और सामग्री जब्त कर ली। प्रकट उसने यही किया कि मीरजुमला दक्षिण के दोनों सुलतानों से मिल कर षड्यन्त्र रच रहा है। इस समय आगरे में नया वजीर आजम दारा ने बाकर खाँ को नियत किया था। उसने उसे लिख दिया कि बादशाह सलामत की बाबत अफवाहों को सुनकर वह स्वयं पिता के दर्शन करने आगरे आ रहा है। इसके अतिरिक्त बादशाह को भी एक अत्यन्त विनयपूर्ण पत्र लिखा। जिसका जिक्र पीछे हो चुका है।

अब उसने गोलकुण्डा के कुतुब शाह को कर का शेषांश तुरन्त अदा करने के पत्र लिखे और गोलकुण्डा स्थित मुगल राजदूत के साथ ठीक-ठीक व्यवहार रखा जाय ऐसी हिदायतें दी गई। इसके बाद इसने बीजापुर की राजमाता बड़ी साहिबा को बहुत से उत्तम औ

बहुमूल्य उपहार भेज प्रेम और मैत्री भाव प्रकट किया और निवेदन करवाया कि जो धन भेज देने का वादा किया गया था—वह शीघ्र भेज दिया जाय। साथ ही उसने राजधानी और मालवा के दरबारियों को अत्यन्त सावधानी से भिन्न-भिन्न आदेश भेजे। हकीकत तो यह थी कि आगरे दरबार में अब सभी सरदार—उसी को भारत का भावी सम्राट् मान चुके थे और प्रायः सभी ने उसे कुछ-न-कुछ सहायता देने का वचन दे रखा था।

नए सैनिक वह लगातार भर्ती कर रहा था, अनेक स्थानों पर गोला बारूद बनाने के लिए गन्धक, सीसा, शोरा खरीद कर एकत्र किया गया था। दक्षिण के सब किलों से बारूद, घोड़े और अन्य आवश्यक चीज़ें मँगा ली थीं और जब वह दक्षिण से कूच कर रहा था तब तीस हजार सवार उसकी रकाब के साथ थे। तथा मीरजुमला का सुशिक्षित तोपखाना भी था जिसमें अंग्रेज और फ्रांसीसी तोपची नौकर थे। इतना ही नहीं—उसके पास अच्छे योग्य और विश्वासी अधिकारी भी काफी थे। उसने दक्षिण की सूबेदारी करते-करते ही योग्य कर्मचारियों का एक गुट बना लिया था। वे सब औरंगजेब को एक औलिया समझते—उस पर श्रद्धा करते और उसके लिए जान देने को तैयार थे।

इस प्रकार सब भाँति तैयार होकर औरंगजेब ने औरंगाबाद से कूच किया और कूच पर कूच करता हुआ बुरहानपुर आ पहुँचा।

: ३९ :

मुतासिब-फ़क़ीर

बुरहानपुर एक बहुत बाजारदार कसबा था। यहाँ न कोई किला था न नगर की शहरपनाह थी। पर औरंगजेब बीच-बीच में औरंगाबाद से यहाँ आकर रहा करता था। यहाँ उसका एक आलीशान महल था।

और उसकी प्रधान बेगम दिलरस बानू माया यहीं रहा करती थी। औरङ्गज़ेब बुरहानपुर को दक्षिण का द्वार समझता था और उसने यहाँ एक सिपाही ओहदेदार रख छोड़ा था, जिसके अधीन एक छोटी सी फ़ौज भी थी। उसे इस बात की सख्त हिदायत थी कि उत्तर से दक्षिण जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति और उसके सामान की खूब सावधानी से जाँच की जाय और उसे सब बात की इत्तला मिलती रहे।

कस्बे के परकोटे में ही जो नदी थी उसका स्वच्छ जल नगर निवासियों को आसानी से उपलब्ध हो जाता था। बस्ती में पारसी और आरमीनियन सौदागर बहुत थे। यहाँ फलों की काफ़ी भरमार रहती थी और फसल में आम तो इतना होता था कि बाज़ार पट जाता था। इसके अतिरिक्त नींबू, नारंगी, खरबूजा, अंगूर भी खूब होते थे। सब्ज़ी तरकारियों की यहाँ कमी न थी। जंगल में सायादार वृक्षों की कमी न थी। जंगल में हिरन, बारहसींगा, जंगली सूअर, मोर, फ़ाख्ता, कबूतर आदि शिकारों की भरमार थी। परन्तु चोर डाकुओं का भय भी बहुत था। इक्का-दुक्का आदमियों का यात्रा करना संभव ही न था। ये लोग तीर कमान और भाले बर्छे से लैस शिकार की तलाश में घूमते ही रहते थे।

बनारस कूच करता हुआ औरङ्गज़ेब बुरहानपुर आ धमका। बुरहानपुर में उसने नदी के किनारे पर अपनी छावनी डाली और फ़ौज को मक़ाम उतारने लगा। परन्तु उसका असल विचार यह था कि मीरबाबा—मुराद के सच्चे समाचार ले आवे।

औरङ्गज़ेब स्वयं तो अपने को फ़कीर कहता तथा लश्कर में भी फ़कीर की भाँति रहता था। वह चटाई पर सोता, बहुत सादा भोजन करता तथा टोपियाँ सीता या कुरआन लिखा करता। ज़ाहिरा बहुत से फ़कीर उसके पास आते रहते, वह उनकी ख़ातिर करता और बड़ी आव भगत करता। पर सच पूछा जाय तो इनमें से बहुत से उसके जासूस होते थे और दूर-दूर की ख़बरें ला कर उसे देते रहते थे। कोई

लोग इस भेद को नहीं जानते थे, वे उसे एक औलिया समझते, उसे श्राला समझ बहुत से फ़क़ीर सैयद सैनै उसके पास दूर-दूर से आते।

उन दिनों फ़क़ीरों की सब जगह बड़ी आव-भगत होती थी। लोग उन्हें मनमानी भीख देते—उनकी इज्ज़त करते और उन्हें माल-मलीदा खिलाते थे। इन फ़क़ीरों में थोड़े ही सच्चे फ़क़ीर होते थे, अधिकतर मुस्टण्डे धूर्त ही होते थे। औरङ्गज़ेब को स्वयं धूर्त था और बिना ज़रूरत कभी एक धेला किसी को नहीं देता था, भला इन मुस्टण्डों के चंगुल में क्यों फँसता। उसे अनेक बार इन नक़ली फ़क़ीरों की चालाकियों की सूचना मिल चुकी थी और उसने इस बार उन्हें सज़ा देने का पूरा इरादा कर लिया।

उसने आज्ञा दी कि सब फ़क़ीरों को बुरहानपुर में इकट्ठा किया जाय और उनको भोजन, धन और नवीन वस्त्र प्रदान किए जायँ। यह आज्ञा सुनते ही दूर-दूर के फ़क़ीर इस अवसर से लाभ उठाने बुरहानपुर में आ जुटे। फ़क़ीरों का एक अच्छा-खासा मेला लग गया। हज़ारों की संख्या में फ़क़ीर आ गए। औरङ्गज़ेब ने उन्हें भोजन खिला कर आज्ञा दी कि उनके पुराने वस्त्र उतार लिए जायँ और नए वस्त्र उन्हें पहनाए जायँ। फ़क़ीरों को जब इस बात का पता चला तो वे बड़े घबराए और चिल्लाने लगे कि "नहीं, नहीं, हम इन्हीं वस्त्रों में मरेंगे। हम इन्हें नहीं उतारेंगे। ये वस्त्र बड़े पाक हैं।" पर इस धूर्त शाहज़ादे के सामने सब बकवास व्यर्थ थी। उन्हें ये पुराने वस्त्र उतार कर नए वस्त्र पहना दिए गए।

परन्तु जब इन पुराने वस्त्रों की तलाशी ली गई तो इन गुदड़ियों में न केवल बेशुमार अशर्फ़ियाँ, अपितु बहुत से जवाहर भी सिले हुए मिले। इस मुफ़्त के माल को पाकर औरङ्गज़ेब बहुत ख़ुश हुआ।

इसी समय एक पोर्चुगीज़ व्यापारी ने औरङ्गज़ेब को एक अत्यन्त क़ीमती मोती दिखाया और औरङ्गज़ेब ने उन फ़क़ीरों के धन से वह मोती ख़रीदने का इरादा किया।

शेख़मीर औरङ्गज़ेब का एक विद्वान् मित्र था। उससे औरङ्गज़ेब ने पूछा—'क्या मोती इतनी क़ीमत का है कि उसे इतनी अशर्फ़ियों में ख़रीद लिया जाय।' इस पर शेख़मीर ने आँखें नीची करके कहा—'यदि हुज़ूर, इससे बड़े-बड़े बहुत से मोती नहीं ख़रीदना चाहते तो इसे ही ख़रीद लीजिए, परन्तु मेरा तो यह ख़याल है कि आप इस धन से नए सिपाही भर्ती करें जिनकी बदौलत आप इससे भी उत्तम बहुत से मोती ख़रीद सकें।'

मित्र की इस बात से औरङ्गज़ेब ख़ुश हो गया और शेख़मीर की बात उसने गाँठ बाँध ली। दूसरे ही दिन से बुरहानपुर में औरङ्गज़ेब ने नई फ़ौज भर्ती करना प्रारम्भ कर दिया। उसने अपने विश्वस्त अनुचरों से हँस कर कहा—'फ़क़ीरों की यह फ़ौज हिन्दुस्तान से कुफ़्र उठाने में काम आएगी, यह अच्छा है।' औरङ्गज़ेब को इस प्रकार कहते सुन कर ख़ुशामदियों ने उसे 'मुताबिक-फ़क़ीर' कह कर उसकी बड़ाई की।

। ४० ।

अपनी अपनी डफली—अपना-अपना राग

बंगाल का सूबेदार—शाहजहाँ का दूसरा पुत्र शुजा एक बुद्धिमान पुरुष था। वह स्वभाव का विनम्र और उदार व्यक्ति था। पर वह आरामतलब और आलसी था। इसी से उसके शासन में सदा ढील ढाल बनी रहती थी। सेना भी इन्हीं कारणों से उसकी सुगठित न थी। वह चाहता तो परिश्रम करके अपनी राज्यव्यवस्था और सेना को उत्तम बना सकता था। परन्तु दुर्भाग्य से वह कभी भी सावधान न रहता था।

शाहजहाँ की बीमारी की अतिशयोक्तिपूर्ण ख़बरें उसे बंगाल की तत्कालीन राजधानी राजमहल में मिलीं। उसने उसी समय अपने को

लोग इस भेद को नहीं जानते थे, वे उसे एक औलिया समझते, उसे खाशा समझ बहुत से फकीर खैरात लेने उसके पास दूर-दूर से आते।

उन दिनों फकीरों की सब जगह बड़ी आव भगत होती थी। लोग उन्हें मनमानी भीख देते—उनकी इज्जत करते और उन्हें माल-मलीदा खिलाते थे। इन फकीरों में थोड़े ही सच्चे फकीर होते थे, अधिकतर मुस्टण्डे धूर्त ही होते थे। औरङ्गजेब जो स्वयं धूर्त था और बिना जरूरत कभी एक पैसा किसी को नहीं देता था, भला इन मुस्टण्डों के चंगुल में क्यों फँसता। उसे अनेक बार इन कपटी फकीरों की चालाकियों की सूचना मिल चुकी थी और उसने इस बार उन्हें सजा देने का पूरा इरादा कर लिया।

उसने आज्ञा दी कि सब फकीरों को बुरहानपुर में इकट्ठा किया जाय और उनको भोजन, धन और नवीन वस्त्र प्रदान किए जायँ। यह आज्ञा सुनते ही दूर-दूर के फकीर इस अवसर से लाभ उठाने बुरहानपुर में आ जुटे। फकीरों का एक अच्छा-खासा मेला लग गया। हजारों की संख्या में फकीर आ गए। औरङ्गजेब ने उन्हें भोजन खिला कर आज्ञा दी कि उनके पुराने वस्त्र उतार लिए जायँ और नए वस्त्र उन्हें पहनाए जायँ। फकीरों को जब इस बात का पता चला तो वे बड़े घबराए और चिल्लाने लगे कि "नहीं, नहीं, हम इन्हीं वस्त्रों में मरेंगे। हम इन्हें नहीं उतारेंगे। ये वस्त्र बड़े पाक हैं।" पर इस धूर्त बादशाह के सामने सब बकवास व्यर्थ थी। उन्हें वे पुराने वस्त्र उतार कर नए वस्त्र पहना दिए गए।

परन्तु जब इन पुराने वस्त्रों की तलाशी ली गई तो इन गुदड़ियों में न केवल बेशुमार अशर्फियाँ, अपितु बहुत से जवाहर भी सिले हुए मिले। इस मुफ्त के माल को पाकर औरङ्गजेब बहुत खुश हुआ।

इसी समय एक पोर्चुगीज व्यापारी ने औरङ्गजेब को एक अत्यन्त कीमती मोती दिखाया और औरङ्गजेब ने उन फ़कीरों के धन से वह मोती खरीदने का इरादा किया।

शेख़मीर औरङ्गज़ेब का एक विद्वान् मित्र था। उससे औरङ्गज़ेब ने पूछा—'क्या मोती इतनी क़ीमत का है कि उसे इतनी अशर्फ़ियों में ख़रीद लिया जाय।' इस पर शेख़मीर ने आँखें नीची करके कहा—'यदि हुज़ूर, इतने बड़े-बड़े मूल्य से मोती नहीं ख़रीदना चाहते तो इसे ही ख़रीद लीजिए, परन्तु मेरा तो यह ख़याल है कि आप इस धन से नए सिपाही भर्ती करें जिनकी बदौलत आप इससे भी उत्तम मूल्य से मोती ख़रीद सकें।'

मित्र की इस बात से औरङ्गज़ेब ख़ुश हो गया और शेख़मीर की बात उसने गाँठ बाँध ली। दूसरे ही दिन से बुरहानपुर में औरङ्गज़ेब ने नई फ़ौज भर्ती करना आरम्भ कर दिया। उसने अपने विश्वस्त अनुचरों से हँस कर कहा—'फ़क़ीरों की यह दौलत हिन्दुस्तान से कुफ़्र उठाने में काम आएगी, यह अच्छा है।' औरङ्गज़ेब को इस प्रकार कहते सुन कर ख़ुशामदियों ने उसे 'मुसाहिब-फ़क़ीर' कह कर उसकी बड़ाई की।

: ४० :

अपनी-अपनी डफली—अपना-अपना राग

बंगाल का सूबेदार—शाहजहाँ का दूसरा पुत्र शुजा एक बुद्धिमान पुरुष था। वह स्वभाव का विनम्र और उदार व्यक्ति था। पर वह आरामतलब और आलसी था। इसी से उसके शासन में सदा ढील ढाल बनी रहती थी। सेना भी इन्हीं कारणों से उसकी सुगठित न थी। वह चाहता तो परिश्रम करके अपनी राज्यव्यवस्था और सेना को उत्तम बना सकता था। परन्तु दुर्भाग्य से वह कभी भी सावधान न रहता था।

शाहजहाँ की बीमारी की अतिशयोक्तिपूर्ण ख़बरें उसे बंगाल की तत्कालीन राजधानी राजमहल में मिलीं। उसने उसी समय अपने को

बादशाह घोषित कर दिया और अपने नाम पर उसने अबुलफ़ौज नासिरुद्दीन मुहम्मद, तीसरा तैमूर, दूसरा सिकन्दर शाहशुजा ग़ाज़ी का नया सिक्का जारी किया।

इसके बाद उसने चालीस हजार सवार और लगभग डेढ़ लाख पैदल लेकर बंगाल से कूच किया। रकाब पर पैर रखते हुए उसने कहा—'या तख्त या तख्ता!' शुजा बड़ी उमंग में था। उसके पास उमदा सेना तो थी ही जिसमें भाराकानों के पुर्तगीज तोपची थे। साथ ही खजाना भी बेशुमार था। यह दौलत उसने बंगाल, बिहार और उड़ीसा के ज़मींदारों-रईसों और नगरों को लूटकर जमा की थी, इसी इरादे से कि एक दिन मुझे अपने बाहुबल से दिल्ली का तख्त छीन लेना पड़ेगा।

आगरे के दरबार में शुजा के अनेक बड़े-बड़े मित्र थे और इन मित्रों पर उसे पूरा भरोसा था। ये सब ईरानी थे और शिया धर्म माननेवाले थे। शुजा ने भी अपना धर्म शिया मशहूर कर दिया था, पर यह सिर्फ़ उसकी अपने इन दोस्तों को खुश करने की चाल थी। उसका पत्रव्यवहार बराबर राजधानी में इन अमीर दोस्तों से जारी रहता था, उसे उन दोस्तों पर अपनी प्रबल सेना से भी ज्यादा भरोसा था, परन्तु इस अदूरदर्शी को अपने दुश्मनों की कुछ भी चिन्ता न थी। दारा इस मामले में बड़ा चौकन्ना था। उसने उन सब अमीरों को अपनी नज़र में बाँधा लिया था जो दारा के पक्षपाती न थे। इस गुट के नेता वज़ीरेआज़म सादुल्ला खाँ को तो उसने मरवा ही डाला था, बाकी सब सरदारों को उसने मीरजुमला की धुन से बाँधकर दक्षिण की ओर धकेल दिया था। यह काम वास्तव में उसने बड़ी बुद्धिमानी और दूरदर्शिता का किया था। इन अमीरों में सलाबत खाँ, महाबत खाँ और आबवत खाँ पाँच-पाँच हजारी जात के मनसबदार थे। साथ ही ये वीर भी थे। वे इस अवसर पर आगरे से बाहर नहीं जाना चाहते थे। क्योंकि वे जानते थे कि उन्हीं के भरोसे,

उन्हीं के बुलाने पर शुजा आ रहा है। पर वे विवश थे। फिर वे बहुत अच्छी तरह यह भी जानते थे कि मीरजुमला औरंगज़ेब का चतुर मित्र और पक्षपाती है और यह कि हम दक्षिण नहीं जा रहे, काल के गाल में जा रहे हैं, उनके जासूसों ने उन्हें औरंगज़ेब की सम्पूर्ण कूट-नीति से जानकार बना दिया था। परन्तु दारा ने बादशाह से उन्हें मीरजुमला के साथ भेजने की आज्ञा दिला दी और उन्हें जाना भी पड़ा। मीरजुमला इन सब भेदों को जानता था, यह प्रसंग देख कर मन-ही-मन खूब हँसा, उसने समझ लिया औरंगज़ेब का भाग्य अच्छा है कि उसका मुख्य बैरी देखो बादशाह और दारा को धोखा देकर आज्ञा उलटी बनाकर और उनकी शाही सेना और खजाने की मदद लेकर उसके पास आ रहा है और शुजा के हाथ-पैर ये सरदार उससे दूर और बेबस किये जा रहे हैं। उसने अपने पत्र में इसी बात को दृष्टि में रखकर औरंगज़ेब को मुबारकबादी दी थी।

सुलेमान शिकोह साहसी और वीर एवं युद्धप्रिय युवक था परन्तु वह राजनीति से नितरां अनजान था। उसे लड़ने की बड़ी उमंग थी और वह इस युद्ध में बढ़-चढ़कर हाथ मारने, तथा विजय का सेहरा अपने माथे पर बाँधने को बहुत उतावला हो रहा था। यद्यपि उसके साथ मिर्ज़ाराजा जयसिंह और प्रसिद्ध सेनापति दिलेर खाँ भी थे, जो बादशाह के बड़े भारी विश्वासी और राज्य के स्तम्भरूप थे। खास कर राजा जयसिंह की समस्त साम्राज्य में धाक थी। वे बाईस हज़ार अश्वारोहियों के स्वामी थे। वे एक वीर, अनुभवी और राजनीति विचक्षण योद्धा थे। उन्होंने बड़ी-बड़ी विजय प्राप्त की थी। परन्तु यहाँ तो हिकमत का राज्य था। मुगल राज्य में कुमारत्व से परस्पर राजनीति चलती थी। प्रथम तो बादशाह-शुजा का उतना विरोधी न था। फिर पिछले दिनों वज़ीर सादुल्ला को मरवा डालने तथा राज्य में मनमानी करने से दारा से उसका मन फिर गया था। इसके अतिरिक्त लोगों ने उनके कान यहाँ तक भर दिए थे कि दारा आपको विष देने का फ़िक्र

में है, इसलिए उसके मन में शुजा को ही गद्दी देने की कभी-कभी इच्छा हो उठती थी। इसी से उसने मिर्जाराजा को गुप्त रीति से समझा दिया था कि वे शुजा से लड़ें नहीं—पीछे लौटा दें, और धीरज से समय की प्रतीक्षा करने को समझा दें।

परन्तु सुलेमान शिकोह दारा का पुत्र था। वह राजनीति से अनजान तो था ही, बादशाह के दृष्टिकोण से उसका दृष्टिकोण भी नहीं मिलता था। फिर उसे दारा ने गुप्त हिदायत भी की थी कि मिर्जाराजा चाहे कितनी भी लीपापोती करें, तुम शुजा को बिल्कुल ही पीस डालना। जिससे इस दुश्मन से हमेशा के लिए बेफिक्र हो जाएँ। बढ़े चले जाना और उसकी तमाम फौज को चीर डालना। इस प्रकार से यह शाही सेना भिन्न भिन्न विचारों और इरादों के सरदारों के साथ जा रही थी। शाहजादा अनुभवशून्य होने पर भी स्वामी था। मिर्जाराजा और दिलेर खाँ अनुभवी और योग्य होते हुए भी अनुगत थे। उस समय की यही दूषित मुगल राजनीति और रणनीति थी।

यह तो सेनापतियों के भाव थे। सेना का हाल इससे भी बुरा था। उसे इस बात का कुछ भी पता न था कि उसे क्या करना चाहिए। सरदारों का हुक्म बजा लाना, लूट के मौके को ताकते रहना, उनका काम था। कोई जीते कोई हारे, उन्हें अपनी रंगरेलियों और तनखाह से मतलब। लड़ाई के वक्त जहाँ तक हो वे अपनी जान बचाने और जख्मी होने से बचने की ही कोशिश करते थे। यही उनका सैनिक धर्म था। अन्त में इस प्रकार की सेना-व्यवस्था और रणनीति का जो परिणाम होना था वही हुआ। इसीसे शाही सेना सब तरफ से हारती ही गई।

—:o:—

बहादुरपुर का युद्ध

दोनों सेनाएँ तेजी से बढ़ती हुई एक दूसरे के निकट होती चली आ रही थीं। इस कूच के बीच में भी मिर्जाराजा निरन्तर शुजा को वापस लौट जाने की सलाह देते जाते थे। पर शुजा टक्कर लेने का इरादा कर चुका था और बिना राजा के पत्रों का जवाब दिए बढ़ा ही चला आता था। सुलेमान शिकोह भी पूरे जोश में था और उसने सेना को आज्ञा दे रखी थी कि ज्योंही दुश्मन की सेना दीखे—तुरन्त गोलाबारी शुरू कर दो। उसने सेना के अग्र भाग में अपना तोपखाना रख छोड़ा था। उसके प्रधान तोपची का नाम मुमताज खाँ था। वह एक दिलेर और बड़े शौकशौक का आदमी था। उसका निशाना बिल्कुल सच्चा पड़ता था। वह ढीठ बहुधा शाहजादे के सामने डींग हाँकता था—"इन्शा अल्लाताला पहला ही गोला सुलतान शुजा के सीने पर सर करूँ तो बात है!" सुलतान इस बात से बहुत खुश होता था।

मिर्जा राजा और दिलेर खाँ उदासीन भाव से आगे बढ़ रहे थे।

शुजा को जासूसों द्वारा खबरें मिल रही थीं कि शाही सेना दिन दिन निकट आ रही है। अन्त में बनारस से पाँच मील उत्तर बहादुरपुर के निकट एक पहाड़ी पर उसने तोपें जमा दीं और शाही सेना से टक्कर लेने को कटिबद्ध हो गया।

दूसरे दिन सूर्योदय के साथ ही साथ दोनों सेनाओं ने एक दूसरे को आमने-सामने देखा। तुरन्त ही सुलेमान ने गोले दागने की आज्ञा दे दी। देखते-देखते वहाँ का वातावरण गर्जन-तर्जन और धुएँ से भर गया, परन्तु यह अन्धाधुन्धी की लड़ाई थी। कहाँ किसकी कितनी क्षति

हो रही है, यह कुछ जान ही न पड़ता था। सुलेमान घोड़े पर सवार हो बड़ी मुस्तैदी से तोपखाने का मुकाबिला करता तथा उन्हें उत्साहित करता दौड़ धूप कर रहा था। दोनों प्रसिद्ध सेनापति उदासीन भाव से इस अव्यवस्थित युद्ध को देख रहे थे। शाहजादे ने इस सम्बन्ध में उनकी कोई सम्मति तक नहीं ली थी।

महाराज जय सिंह ने दिलेर खाँ से सलाह करके आखिर दिलेर खाँ को शुजा के पास समझाने के लिए रवाना किया। गोलाबारी तो होती ही रही। सेनापति दिलेर खाँ केवल ५० सवार साथ लेकर रास्ता काट पीछे के भाग से शुजा के लश्कर में पहुँच गया। सूचना पाते ही शुजा ने सेनापति दिलेर खाँ को आदरपूर्वक अपने खीमे में बुला लिया। साधारण कुशलवार्ता के बाद दोनों में बातें प्रारम्भ हुईं। दिलेर खाँ ने कहा—"मैं हुजूर के सच्चे खैरख्वाह के रूप में हाजिर हुआ हूँ।"

"हमें आपका इत्मीनान है।"

"मुझे मिर्जा राजा जय सिंह जी ने आपकी खिदमत में भेजा है, मिर्जा राजा हुजूर के वैसे ही सेवक और खैरख्वाह हैं, जैसे तख्त के।"

"मिर्जा राजा की खैरख्वाही और खिदमत मैं जानता हूँ।"

"मैं तसलीम करता हूँ कि हुजूर उस शख्स से बदला लेने के इरादे से तशरीफ लाए हैं जिसने आपके वालिद को, जो दीनोदुनिया के मालिक और हिंदुस्तान के शहनशाह हैं, मार डाला है।"

"बेशक, बेशक, और मैं उससे बिना बदला लिए न लौटूँगा।"

"मगर हुजूर को यह खबर बिल्कुल गलत मिली है, शहनशाह जिन्दा और बिल्कुल तन्दुरुस्त हैं, मैं आपको यकीन दिलाता हूँ।"

"यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई है," शुजा जरा अटका—

इस पर तुरन्त ही दिलेर खाँ ने कहा—

"इसलिए शहनशाह की मन्शा है कि आप अपने सूबे को वापस तशरीफ ले जाँय, और इस मौके पर आपने जो मुहब्बत और इज्जत जहाँपनाह के लिए दरसाई है, उससे बादशाह ने पटना का शहर आपको

इनायत किया है। इसमें कोई शक नहीं कि इस हालत में आपका इस तरह आना एक उमदा काम था और इससे शुजा की जवाँमर्दी और जाँनिसारी ज़ाहिर होती है, मगर इससे भी ज्यादा उमदा काम आपका वापस तशरीफ ले जाना होगा, जिससे आपके दुश्मन शाहनशाह के कान आपके खिलाफ भर कर आपको बागी न मशहूर कर दें। आप अगर इस वक्त वापस तशरीफ ले जाएँगे तो मैं और मिर्ज़ा राजा वादा करते हैं कि जब कभी ज़रूरत होगी, हम मदद के लिए हाज़िर रहेंगे।"

यह बातें सुनकर शुजा कुछ देर सोचता रहा। फिर उसने धीरे से कहा—

"खाँ साहब, आपकी बात सुनकर मुझे तसल्ली हो गई—खासकर मैं राजा साहब की बड़ी इज्जत करता हूँ। मगर मेरे बंगाल से आने की खबर तमाम हिन्दुस्तान में ज़ाहिर है। परन्तु अब, जब कि आप विश्वास दिलाते हैं कि मेरे वालिद बुजुर्गवार जिन्दा और तन्दुरुस्त हैं, मैं वापस जाने को तैयार हूँ—मगर चूँकि आप शाही नौकर हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि शाहज़ादा की इज्जत का ख्याल करके आप अपना लश्कर पीछे हटा लें। मैं आपसे वादा करता हूँ कि मुझे आप सूरज निकलने के पेश्तर ही मैदान से दूर देखेंगे। ऐसा करने से लोग यह न कह सकेंगे कि शुजा हार कर भाग गया।"

शाहज़ादे की भी फिर समझाकर दिलेर खाँ ने ऐसा ही करने का वचन दिया। तत्काल दोनों ओर से लड़ाई रोकने का संकेत कर दिया गया। लड़ाई रुक गई और दोनों ओर के सैनिक निश्चिन्त होकर यह सोचने लगे कि देखें अब क्या होने वाला है।

मिर्ज़ा राजा जय सिंह एक तजरबेकार सेनापति थे। उन्होंने ज्योंही दिलेर खाँ की बातें सुनीं तो हँसकर कहा—'शाहज़ादा साहब, इस बूढ़े राजपूत के साथ गहरी चाल चला चाहते हैं खाँ साहब, वे यकीनन पीछे लौटती फौज पर सुबह हमला करेंगे।'

"मगर अब क्या किया जाय? मैं तो मंजूर कर आया हूँ।"

कुछ सोच कर राजा साहब ने कहा—

"आप गाड़ी, हाथी, लश्कर सबको एक पहर रात रहे सामान लाद कर कूच करने का हुक्म दे दें। मगर अपने अफसरों को पोशीदा तौर पर हुक्म दे दें कि वे लड़ाई के लिए बिलकुल तैयार रहें और ज्योंही कूच के नक्कारे बजें—बजाय कूच करने के आगे बढ़ने के लिए चौकन्ने और मुस्तैद रहें।"

इस युद्ध की व्यूह रचना इस प्रकार की गई कि बीच में शाहजादा और दाहिने हाथ राजा साहब तथा बायें हाथ दिलेर खाँ रहे।

कूच की तैयारियों की सूचना शुजा के जासूसों ने शुजा को दे दी—और उसने भी चुपके-चुपके अपनी सेना को लड़ने के लिए तैयार रहने की आज्ञा दे दी।

अभी थोड़ा अन्धकार बाकी था, कि महाराज ने कूच का नक्कारा बजवा दिया। इसके बाद एक ऊँची जगह पर खड़े होकर वे शुजा की हरकतें देखने लगे। क्षण भर ही में उन्हें मालूम हो गया कि शुजा ने आक्रमण बोल दिया। बस फिर क्या था। मिर्जा राजा ने अपने राजपूत सरदारों को संकेत किया। शुजा ने अपनी आशा के विपरीत शत्रु को पूरी मुस्तैदी और व्यवस्था से जमकर लड़ने को सन्नद्ध पाया। सुलेमान ने भी इस अवसर पर अपने दिल के हौंसले पूरे किए। खूब बहादुरी दिखाई। फलतः दोपहर से पहिले ही शाहजादे की सेना का व्यूह टूट गया और कुछ ही देर में उसके पैर उखड़ गए। तब शाहजादा शुजा हाथी पर बैठकर बुरी तरह भाग खड़ा हुआ। बाद में आकर सुलेमान शिकोह ने आगे बढ़कर भागती हुई सेना को काटना शुरू कर दिया। शाहजादे का तोपखाना, हाथी, फौजें और बहुत-सा खजाना लूट लिया गया। बहुत से सिपाही और सरदार कैदी भी बना लिए गए। जिनमें से चालीस प्रमुख चुन कर दारा के पास तुरन्त आगरे भेज दिए गए।

मिर्जा राजा चाहते तो शुजा को पकड़कर कैद भी कर सकते थे।

परन्तु उन्होंने उसे चला जाने दिया। वे जानते थे कि बादशाह उसे छोड़ देगा और फिर एक नया दुश्मन खड़ा हो जायगा। उन्होंने दिलेर खाँ को सब बातें समझा कर जल्द-से जल्द आगरे लौटने की तैयारी कर दी। परन्तु सुलेमान ने इस तजवीज को अस्वीकार कर दिया।

मिर्जा राजा ने शाहजादे को समझा कर कहा—

"बेहतर है कि अब हम जल्द से-जल्द आगरे को लौट चलें, क्योंकि दरबार में बड़े-बड़े काम सोचने और करने को हैं, बगावत के और मामलों को भी दबाना है।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने उदासी से कहा—"उसकी फिक्र नहीं, उसके लिए मेरे वालिद नया लश्कर लेकर खलीलुल्लाह खाँ को भेज सकते हैं। हमें शुजा का पीछा करना और उसे गिरफ्तार करके उसकी ताकत को हमेशा के लिए खत्म कर देना बहुत ही जरूरी है।"

शाहजादे की यह जिद देख—मिर्जाराजा चुप हो गए। शाही लश्कर आगे बढ़ा और बंगाल तक बढ़ा ही चला गया।

शुजा की भयभीत सेना स्थल भाग से पटने की ओर भागी और शुजा नावों पर से गोलाबारी करता हुआ नदी के मार्ग से पीछे हटा। मुंगेर में उसने खाइयों और तोपखाने के साथ रास्ता रोक लिया। इस कारण सुलेमान को मुंगेर से पन्द्रह मील दक्षिण-पश्चिम में सूरजगढ़ में अटक जाना पड़ा। उसने अपने सेनापतियों से—मिर्जा राजा और दिलेर खाँ से सलाह माँगी। इस पर उन्होंने साफ कह दिया—अब आपकी जैसा ठीक समझिए—वह कीजिए। सुलेमान को आगे बढ़ने की राह न मिली और वह वहीं छावनी डाल कर पड़ गया। अब वापसी पर भी उसे आक्रमण का भय था। उसे अब मिर्जाराजा की नसीहत याद आ रही थी, परन्तु वह किंकर्तव्य-विमूढ़ पड़ा था। न आगे जा सकता था न पीछे लौट सकता था।

—१०१—

: ४२ :

दरबारे खिलवत

बादशाह को अब विश्वास हो गया कि चारों ओर से विनाश की घटाएँ घिरी आ रही हैं। कब वे बरस पड़ेंगी, इसका ठिकाना नहीं। उसे प्रत्येक व्यक्ति पर सन्देह और अविश्वास था और क्षण-क्षण पर उसे यह आशंका हो रही थी कि उसे कहीं कोई ज़हर न दे दे। वह बहुत कमज़ोर हो गया था और अब ऐसे रोग-समूहों ने उसे घेर लिया था कि जिनसे बचने का कोई रास्ता ही न था। दारा से भी अब वह उतना ही भय खाता था जितना अपने दूसरे पुत्रों से। दारा अन्धाधुन्ध फौजें भरती कर रहा था। ठठ के ठठ सैनिक नगर में धमाचौकड़ी मचाते फिर रहे थे। राजधानी में अन्धेरगर्दी मची हुई थी। भाँति भाँति की अफवाहें शहर में फैली थीं। इस समय जितनी सेना आगरे में एकत्र हुई थी, उतनी अब से प्रथम मुग़ल राज्य के इतिहास में कभी नहीं हुई थी। एक लाख सवार, बीस हज़ार पैदल, तोपें और नौकर, भठियारे, मोची सब मिलकर चार लाख का लश्कर आगरे में एकत्र हो गया था। दारा ने सारा ख़ज़ाना अपने हाथ में ले लिया था। दरबार का अजब हाल था। जो दरबारी विश्वासी थे वे सुलेमान शिकोह के साथ चले गए थे। जो लोग रह गए थे उनका कोई भरोसा न था। बादशाह दुःख, चिन्ता और भय से काँप रहा था। ज़हर के डर से वह दवा भी नहीं खाता था। प्रतिदिन नई ख़बरें उसे सुनने को मिल रही थीं। उसने सुना—सुलेमान शिकोह ने शुजा की फ़ौज लूटकर कुल सामान और बाग़ी सेनानायकों को क़ैद करके आगरे भेजा था। दारा ने उन सब क़ैदियों के हाथ कटवा डाले थे। बादशाह यह सुनकर क्रोध से पागल हो रहा था। अब उसने सुना कि शाइस्ता

वों को मालवे का सूबेदार था—वहाँ से उसे वापस बुलाकर कैद कर लिया गया है, और मुहम्मद अमीन—जो मीरजुमला का बेटा था, उसे भी कैद कर लिया है और शीघ्र ही उनके कत्ल का परवाना जारी होने वाला है। अब बादशाह से न रहा गया। उसने बूढ़े शेर की भाँति गरज कर कहा—अभी बादशाह हम ही हैं। उसने उसी बीमारी की अवस्था में दरबारे खिलवत का हुक्म दिया। आनन-फानन दरबार की सब तैयारियाँ होने लगीं।

बादशाह अपने खासी कमरे के उस दरीचे में बैठा जो दरिया की तरफ था और सेना तथा सर्वसाधारण को सलाम करने का हुक्म दिया। चुने हुए दरबारी कमरे में हाथ बाँधे खड़े थे। दारा पुश्तवान तख्त के नीचे बैठा नीची निगाहों से बादशाह के दिली मनसूबों को भाँपने की कोशिश कर रहा था। परन्तु उसकी आँखों में दृढ़ता और निर्भय के भाव थे। नजरों में गुस्सा भरा हुआ था। वह पिंजरे में बन्द घायल शेर की भाँति लाचार हो रहा था।

थोड़ी देर सन्नाटा रहा। अन्त में बादशाह ने धीमे स्वर से दारा को इशारा करके कहा—"शहर के क्या हाल-चाल हैं?"

दारा ने निर्भीक भाव से कहा—"शहर में तीन दिन से हड़ताल है, खाने-पीने की चीजें मिलनी भी दुश्वार हैं, लोग बहुत डर रहे हैं। सबको अपनी-अपनी जान के लाले पड़े हैं। साहूकारों ने हुण्डी पर्चों का लेन-देन बन्द कर दिया है।"

"तो क्या इन कमबख्तों ने यह समझ लिया है कि हम मर गए? क्योंकि हम जिन्दा हैं।"

'हुजूर की उम्र दराज, मगर हरचन्द शाही एलान फिर चुके हैं, समझाया जाता है, मगर असर उल्टा होता है।"

"आखिर इसका सबब?"

"वही, औरंगज़ेब का हौआ। वह मालवे तक आ पहुँचा है।

मगर हुजूर, मैं कहे देता हूँ कि मैं उसकी कुछ भी परवा नहीं करता, मैं उसे मच्छर की भाँति पीस डालूँगा।"

"तुम समझ नहीं सकते। मुराद की बर्बादी और औरङ्गजेब की चालाकी गजब ढा देगी। एक ऐसी आग भड़केगी कि कुहराम मच जायगा।" इतना कह कर बादशाह ने व्याकुल होकर दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा—"या खुदा, हमने कभी यह नहीं सोचा था कि जीते जी हमें ये दिन देखने नसीब होंगे।" बादशाह का मुँह लटक गया।

दारा ने तैश में आकर कहा—"यह सब हुजूर की ही गलती का नतीजा है। हुजूर ही ने इस मुसीबत को न्योता दिया है। मगर आप मीरजुमला को फौज देकर दक्खन न भेजते तो औरङ्गजेब की आज यह ताब न होती। खैर, मैं मीरजुमला और उसके लड़के मुहम्मद अमीन से समझ लूँगा और शाइस्ता खाँ से भी, जो औरङ्गजेब का मौसिया है। मैं इन्हें कत्ल करा डालूँगा और इनके कबीले को कैद कर लूँगा और औरतों को बाजार में कसब कमाने के लिए मजबूर करूँगा। वह क्रोध से दाँत पीसने लगा और साथ ही दरबारी अदब भूल बैठा।

बादशाह ने अपनी घबराई हुई आँखें पुत्र पर डालीं। उसका पीला चेहरा सफेद हो गया। उसने कहा—"तुमने शाइस्ता खाँ को और मुहम्मद अमीन को कैद कर लिया है, इसके लिए हमारा हुक्म लेने और हमें इत्तला तक देने की जरूरत नहीं समझी। तुम जानते हो शाइस्ता खाँ शाही रिश्तेदार है, इज्जतदार है और जोरावर आदमी है और मुहम्मद अमीन भी उस आदमी का बेटा है जिसके ताल्लुके बहुत हैं। बेटे, इतने उतावले न बनो। समझ से काम लो। सुलेमान शिकोह ने कुछ कैदी भेजे थे?"

"जी हाँ।"

"और तुमने उन सबके हाथ कटवा डाले? पेट के लिए जान झोंकने वाले सिपाहियों पर यह जुल्म?"

"उन्हें तम्बीह होनी जरूरी थी। जिससे लोग समझें कि तख्त के खिलाफ बगावत करने का नतीजा क्या होता है।"

"और तुमने अन्धाधुन्ध फौजें भरती करके शहर के लोगों को डरा दिया है। तुम बगावत को दावत दे रहे हो। दारा—मेरे बेटे, याद रक्खो कि तुम खतरे से खेल रहे हो। तुम्हें यह भी याद रखना चाहिए कि अभी बादशाह हमीं हैं। हम तुम्हें हुक्म देते हैं कि शाइस्ता खाँ और मुहम्मद अमीन को फौरन छोड़ दो और अपने अमीरों को खुश करो और इन्साफ और ईमानदारी को हाथ से न जाने दो।"

दारा ने होंठ काटे। उसने कुछ कहना चाहा—पर बादशाह ने तल्खी ज़बान से कहा—"खामोश! सुलेमान शिकोह को फ़ौरन लौट आने का फर्मान भेज दो, याद रखो उसकी फौज की जल्द-से जल्द ज़रूरत पड़ेगी।"

इतना कह कर बादशाह ने दारा के जवाब की अपेक्षा नहीं की। उधर से उन्होंने मुँह फेर लिया और मारवाड़ के महाराज जसवन्त सिंह की ओर नज़र उठाई। महाराज जसवन्त सिंह, राव सुजान सिंह बुन्देला, अमर सिंह चन्द्रावत, राव रतन सिंह राठौर और राव राम सिंह सीसोदिया चुपचाप बादशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे।

बादशाह ने कहा—'महाराज जसवन्त सिंह, आप अच्छी तरह जानते हैं कि हमने हमेशा आप के साथ भलाई की है और आपके भाई अमर सिंह के हक पर आपको मारवाड़ का राजा तसलीम किया। अब हम आप से उम्मीद करते हैं कि तख्त के लिए आप अपनी ज़िम्मेदारी का ख्याल रक्खेंगे।"

महाराज जसवन्त सिंह ने अपने साथियों की ओर छिपी नज़र से देखा और कहा—"जहाँपनाह, आप हम राजपूतों को तख्त का सच्चा वफ़ादार पाएँगे।"

बादशाह ने अन्य राजपूत सरदारों की ओर नज़र उठाई। उसने कहा—

मगर हुजूर, मैं कहे देता हूँ कि मैं उसकी कुछ भी परवा नहीं करता, मैं उसे मच्छर की भाँति पीस डालूँगा।"

"तुम समझ नहीं सकते। मुराद की जवाँमर्दी और औरङ्गजेब की चालाकी गजब ढा देगी। एक ऐसी आग भड़केगी कि कुहराम मच जायगा।" इतना कह कर बादशाह ने व्याकुल होकर दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा—"या खुदा, हमने कभी यह नहीं सोचा था कि जीते जी हमें ये दिन देखने नसीब होंगे।" बादशाह का मुँह लटक गया।

दारा ने तैश में आकर कहा—"यह सब हुजूर की ही गलती का नतीजा है। हुजूर ही ने इस मुसीबत को न्योता दिया है। अगर आप मीरजुमला को फौज देकर दक्खन न भेजते तो औरङ्गजेब की आज यह ताब न होती। खैर, मैं मीरजुमला और उसके लड़के मुहम्मद अमीन से समझ लूँगा और शाइस्ता खाँ से भी, जो औरङ्गजेब का भेदिया है। मैं इन्हें कत्ल करा डालूँगा और इनके कबीले को कैद कर लूँगा और औरतों को बाजार में कसब कमाने के लिए मजबूर करूँगा। वह क्रोध से दाँत पीसने लगा और साथ ही दरबारी अदब भूल बैठा।

बादशाह ने अपनी पथराई हुई आँखें पुत्र पर डालीं। उसका पीला चेहरा सफेद हो गया। उसने कहा—"तुमने शाइस्ता खाँ को और मुहम्मद अमीन को कैद कर लिया है, इसके लिए हमारा हुक्म लेने और हमें इत्तला तक देने की जरूरत नहीं समझी। तुम जानते हो शाइस्ता खाँ शाही रिश्तेदार है, इज्जतदार है और जोरावर आदमी है और मुहम्मद अमीन भी उस आदमी का बेटा है जिसकी ताकतें बहुत हैं। बेटे, इतने उतावले न बनो। समझ से काम लो। सुलेमान शिकोह ने कुछ कैदी भेजे थे?"

"जी हाँ।"

"और तुमने उन सबके हाथ कटवा डाले? पेट के लिए जान झोंकने वाले सिपाहियों पर यह जुल्म?"

"उन्हें उम्मीद होनी जरूरी थी। जिससे लोग समझें कि तख्त के खिलाफ बगावत करने का नतीजा क्या होता है।"

"और तुमने अन्धाधुन्ध फौजें भरती करके शहर के लोगों को डरा दिया है। तुम बगावत को दावत दे रहे हो। दारा—मेरे बेटे, याद रक्खो कि तुम खतरे से खेल रहे हो। तुम्हें यह भी याद रखना चाहिए कि अभी बादशाह हमीं हैं। हम तुम्हें हुक्म देते हैं कि शाइस्ता खाँ और मुहम्मद अमीन को फौरन छोड़ दो और अपने अमीरों को कुछ कहो और इन्साफ और दयानतदारी का हाथ से न जाने दो।"

दारा ने होठ काटे। उसने कुछ कहना चाहा—पर बादशाह ने सख्ती जबान से कहा—"खामोश! सुलेमान शिकोह को जल्द लौट आने का फर्मान भेज दो, याद रखो उसकी फौज की जल्द-अज़-जल्द जरूरत पड़ेगी।"

इतना कह कर बादशाह ने दारा के जवाब की अपेक्षा नहीं की। उधर से उन्होंने मुँह फेर लिया और मारवाड़ के महाराज जसवन्त सिंह की ओर नजर उठाई। महाराज जसवन्त सिंह, राव सुजान सिंह बुन्देला, अमर सिंह चन्द्रावत, राव रतन सिंह राठौर और राव राम सिंह सीसोदिया चुपचाप बादशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे।

बादशाह ने कहा—'महाराज जसवन्त सिंह, आप अच्छी तरह जानते हैं कि हमने हमेशा आप के साथ भलाई की है और आपके भाई अमर सिंह के हक पर आपको मारवाड़ का राजा तस्लीम किया। अब हम आप से उम्मीद करते हैं कि तख्त के लिए आप अपनी जिम्मेदारी का ख्याल रक्खेंगे।"

महाराज जसवन्त सिंह ने अपने साथियों की ओर छिपी नजर से देखा और कहा—"जहाँपनाह, आप हम राजपूतों को तख्त का सच्चा वफादार पायेंगे।"

बादशाह ने अन्य राजपूत सरदारों की ओर नजर उठाई। उसने कहा—

"हम जहाँपनाह और तख्त के सेवक हैं।"

"तो आप सब तलवार छू कर कौल हारिए।"

सबने तलवार की शपथ ली। इस पर बादशाह की तसल्ली हुई। उसने मन्द स्वर से कहा—"महाराज जसवन्त सिंह, हम इस वक्त आपके और आपके इन साथी राजपूत सरदारों के जिम्मे एक नाज़ुक और अहम काम सौंपते हैं। आपको मालूम है कि औरङ्गज़ेब बुरहान से दरिया पार कर चुका है और मुराद ने सूरत लूटकर बगावत का झंडा बुलन्द किया है। वे दोनों आगरे की तरफ बढ़े आ रहे हैं। हमने जंग की तैयारियाँ की हैं, लेकिन महाराज जसवन्त सिंह, अपना ही खून बहाना हमें पसन्द नहीं है। आप जाइए, औरङ्गज़ेब को रोकिए, मुराद को भी रोकिए। हमारा मकसद यह नहीं है कि आप उनसे लड़िए। मगर ये लोग शाही हुक्म को न मानकर अगर बढ़ते ही जाँय तो फिर आप फ़ौज से काम ले सकते हैं। हमारा पुराना नमकख्वार अमीर कासिम ख़ाँ आपकी मदद पर आपके हमराह मय एक उम्दा तोपख़ाने के रहेगा।"

बादशाह ने अमीर कासिम ख़ाँ की ओर देखा। उसने बढ़कर ज़मीन चूमी और कहा—"जहाँपनाह, गुलाम जान देकर भी तख्त की ख़िदमत करेगा।"

बादशाह सन्तुष्ट हुए। फिर उन्होंने भरे गले से दारा से कहा—"जाओ बेटे, इन सरदारों को मुनासिब ख़िलअतें और इज़्ज़त के साथ विदा कर दो।"

दारा चुपचाप आदाब बजा कर चल दिया।

बादशाह कुछ देर चुपचाप सिर नीचा किए बैठे रहे, फिर उन्होंने कहा—"महाराज आप जानते हैं कि हम किस क़दर विश्वासघातियों और नमकहरामों से घिर गए हैं। बेटे तख्त के भूखे, बेटियाँ उनकी मददगार, वज़ीर ख़ुदगर्ज़, और अमीर लालची और दग़ाबाज़। अब हमें सिर्फ़ राजपूतों ही का भरोसा है जिनका लहू मेरी नसों में है।"

इतना कह कर बादशाह ने दोनों हाथों से मुँह ढाँप लिया और वे बदहवास से मसनद पर लुढ़क गए।

अदब भंग करके महाराज जसवन्त सिंह आगे बढ़े, उन्होंने सहारा देकर बादशाह को सचेत किया और विविध आश्वासन दे विदा हुए। दीनोदुनिया के बादशाह शाहजहाँ दुःख और निराशा में डूबे बैठे रहे।

: ४३ :

क्षिप्रा के तट पर

महाराज जसवन्त सिंह बहुत धीरे धीरे आगे बढ़े। जसवन्त सिंह की कमान में शाही सेना ने उज्जैन में पड़ाव डाला। औरङ्गज़ेब का क्या इरादा है, वह कहाँ तक आ पहुँचा है, उसकी सेना कैसी और कितनी है इस सम्बन्ध में इस राजपूत योद्धा को कुछ भी ख़बर न थी, न इसने इन बातों को जानने की चेष्टा ही की।

उज्जैन पहुँचकर उसने सुना—दोनों शाहज़ादे क्षिप्रा के उस पार छावनी डाले पड़े हैं और उनके साथ चालीस हज़ार सवार और ज़बरदस्त तोपख़ाना भी है।

यह सुनते ही जसवन्त सिंह के हाथ-पाँव फूल गए। उसने उज्जैन के अन्दर मील दक्षिण-पश्चिम धरमत के मैदान में पड़ाव डाला। शाहज़ादों की सेना यहाँ से केवल एक ही कूच के अन्तर पर थी। जसवन्त सिंह को आशा थी कि शाही सेना की चढ़ाई सुनकर वे बिगड़ैल शाहज़ादे भाग खड़े होंगे और उसे कुछ भी न करना होगा। परन्तु अब उसे यह स्पष्ट दीख पड़ने लगा कि युद्ध अनिवार्य है। जसवन्त सिंह को बादशाह का यह आदेश था कि बिलकुल विवश होकर ही शाहज़ादों से लड़ाई की जाय। इसलिए वह कुछ भी निश्चय न कर सकता था। परन्तु औरङ्गज़ेब एक दृढ़निश्चयी पुरुष था। शाही सेना में अनेक परस्पर विरोधी दल थे। राजपूतों की भिन्न भिन्न

राजाओं के पृथक-पृथक दल थे। उनमें अपनी खानदानी बैरभाव की भावना ऐसी थी कि वे दल एक सेनापति की आधीनता में लड़ने को कभी तैयार न होते थे। सभी को अपनी-अपनी जाति और वंश का अभिमान था। यह तो हुआ राजपूती सैनिकों का भीतरी हाल। उधर राजपूत और मुग़ल सैनिक भी एक दूसरे को द्वेष और घृणा से देखते थे। हिन्दू और मुसलमान सैनिकों में भी मतैक्य न था, न सारी शाही फौज ही एक सेनापति के अधीन थी। कासिम खाँ को जसवन्त सिंह की सहायता करने का हुक्म था—उसके अधीन लड़ने का नहीं। इन सब बातों के अतिरिक्त अनेक मुसलमान अधिकारी गुप्त रूप से औरङ्गज़ेब से मिल गए थे। खासकर कासिम खाँ और उसके साथियों ने तो विश्वासघात करने का पूरा ही इरादा कर लिया था। इसलिए इस युद्ध का पूरा भार राजपूत सेना ही पर पड़ता था।

दुर्भाग्य से महाराज जसवन्त सिंह अच्छे सेनानायक भी न थे। वे केवल एक वीर योद्धा थे। औरङ्गज़ेब जैसे विचक्षण पुरुष से उनकी बराबरी हो नहीं हो सकती थी। केवल यही नहीं कि उनकी योजनाएँ दोषपूर्ण थीं उन्हें सेना संचालन का भी अच्छा अनुभव न था और वे एक धमण्डशील, ज़बरदस्त, असावधान और तुनुकमिज़ाज सेना नायक थे।

सबसे भारी भूल उन्होंने यह की थी कि युद्धभूमि का चुनाव उप-युक्त नहीं किया था। एक छोटे से मैदान में उन्होंने सकोड़कर सारी सेना को एकत्र कर लिया था। जहाँ उनके घुड़सवार न तो स्वतन्त्रता-पूर्वक अपना कौशल दिखा सकते थे न तीव्र गति से घूम कर शत्रु पर आक्रमण ही कर सकते थे। साथ ही जिन टुकड़ियों को सहायता की आवश्यकता थी उन्हें समय पर सहायता भी न दे सकते थे। इसी का यह परिणाम हुआ कि युद्ध आरम्भ होने के बाद वह अपनी सेना पर नियन्त्रण न रख सके। केवल एक छोटे से दल ही तक उनका संचालन रह गया।

दूसरी भूल उन्होंने यह की कि उन्होंने अपने तोपखाने की उपयोगिता का विचार ही नहीं किया। यह उनकी भयानक ग़लती थी। इसके विरुद्ध औरङ्गजेब की सेना में मँजे हुए फ्रान्सीसी और अंग्रेज़ तोपची थे। जिन्होंने ऐसी गोलाबारी की कि जसवन्त सिंह की सभी सेना की धज्जियाँ उड़ गईं। महाराज जसवन्त सिंह ने केवल तलवार से तोप का सामना करने का हास्यास्पद साहस किया था। इसका परिणाम वही होना था जो हुआ।

औरंगजेब की सेना का संगठन और तोपखाना श्रेष्ठ तो था ही, *उसकी सैन्य संख्या भी शाही सेना के बराबर थी।*

जसवन्त सिंह ने रास्ते ही से बराबर औरङ्गजेब के पास दूत-पर दूत भेजे थे, पर इनमें से एक भी लौट कर नहीं आ रहा था। यहाँ आकर उन्होंने देखा—दूत भेजना व्यर्थ है। उन्होंने कासिम ख़ाँ से सम्मति माँगी। परन्तु वह विश्वासघाती प्रथम ही औरङ्गजेब से मिल चुका था। उसने कहा—"महाराज, आप को बादशाह का हुक्म मालूम ही है। अब हमें तो यही उचित है कि चुपचाप बैठकर देखें कि वे किशोर दिल शाहजादे क्या करते हैं। अलबत्ता हम इन्हें इस पार नदी न उतरने देंगे। शाहजादे यदि ऐसी कोशिश करेंगे तो मेरी तोपें उनकी धज्जियाँ उड़ा देंगी। आप इत्मीनान रखिए।"

गर्मी कड़ी पड़ने लगी थी अप्रेल का आरम्भ था। उज्जैन में क्षिप्रा नदी के किनारे उस पार एक पहाड़ की टेकरी पर औरङ्गजेब और मुराद की संयुक्त सेना ने डेरे डाले हुए थे। अभी उनकी सेना पूरी व्यवस्थित नहीं हो पाई थी। लम्बे पहाड़ी कूँच से थकी-माँदी सेना तितर बितर हो गई थी। औरङ्गजेब ने सब ओर से चौकन्ना हो सेना की व्यवस्था की। उसने मुराद को अत्यन्त निकटता से आँखों में रखने के लिए अपने पुत्र सुलतान मुहम्मद को नियुक्त किया था। इस पर भी वह स्वयं आकर उसके निकट रह कर और बारम्बार खुशामद

के नाम से पुकार कर तथा अनेक प्रकार से उसकी लल्लो-चप्पो करके उसे मेरे पर चढ़ा रहा था।

अभी यह संयुक्त सैन्य पूरा विश्राम न कर पाई थी कि एक दिन सूर्योदय के साथ ही नदी के उस पार शाही लश्कर उसे दीख पड़ा। मुराद फ़ौरन घोड़े पर चढ़कर औरङ्गज़ेब के ख़ीमे पर आया। मुराद की आवाज़ सुनते ही औरङ्गज़ेब ने तपाक से बाहर निकल कर रकाब चूमी और आदर पूर्वक उसे ख़ीमे में ले जाकर ऊँची मसनद पर बैठाया। मुराद ने खुश होकर कहा—"आप देख रहे हैं कि अब जंग का वक्त आ गया। चलिए, दो-दो हाथ हो जाय और देखा जाय कि कौन कितने पानी में है।"

औरङ्गज़ेब ने मुस्कुराते हुए और हाथ मलते हुए कहा—"अभी नहीं, अभी नहीं, मगर वह वक्त भी अब आ ही गया है, जब आँ पनाह की बहादुरी के जौहर देखने को मिलेंगे। फ़िलहाल तो हमें चुपचाप ही पड़े रहना चाहिए।"

"चुपचाप पड़े रहने से हासिल?"

"हुजूर, आप देखते ही हैं कि हमारी फ़ौज अभी-अभी और ख़स्ता हाल है। फिर तमाम फ़ौज अभी पहुँच भी नहीं पाई। उसने कड़ा पहाड़ी रास्ता पार किया है, इसके सिवा एक और भी मसलहत है।"

"वह मसलहत क्या है?"

मुराद का प्रश्न सुनकर औरंगज़ेब ने मुस्कुरा कर कहा—"शाही फ़ौज के क़ासिद इस अमर की चिट्ठी लेकर आए थे कि हज़रत बादशाह सलामत ज़िन्दा हैं और हमें अपने इलाक़ों को लौट जाना चाहए। इन्हें मैंने क़त्ल करा डालना मुनासिब समझा। इसकी वजह यह थी कि यह महज़ दारा की कारस्तानी थी और चिट्ठियाँ जाली थीं। जसवन्त सिंह को मैं जानता हूँ। वह क़ाबू में आने वाला नहीं। मगर क़ासिम ख़ाँ ने हुजूर का ख़ादिम होने का पक्का वादा किया है। उसने मेरी उस एक तरकीब पर भी अमल करने का इरादा ज़ाहिर कर दिया

है जो पोशीदा तौर पर मैंने उसे मुकर्रर की है। दरहकीकत बात यह है कि इन बेवकूफ सिपहसालारों को, जो सिर्फ लड़ना या हुक्म बजा लाना ही जानते हैं, इस बात का शायद गुमान भी नहीं, कि हुजूर इतनी जल्द यहाँ आ पहुँचेंगे। उन्होंने तो यह मन्सूबे गाँठ रखे थे कि वे सिप्रा के इस पार जहाँ हमारे लोगों गड़े हैं, शाही छावनी डालकर हमारी नाकेबन्दी कर देंगे और हमें नदी पार करके आगे बढ़ने से कतई रोक देंगे—मगर बफ़्ज़ले खुदा मुझे कासिम खाँ के भेदियों से महाराज जसवन्त सिंह का यह इरादा मालूम हो गया और मैंने उसका कुछ बोल कर इस किनारे पर कब्जा कर लिया।"

"और यह पोशीदा तजवीज क्या है जिसे आप ने और कासिम खाँ ने अमल में लाने का इरादा किया है।" मुराद ने आशिकाना अन्दाज से पूछा। इसपर औरंगजेब ने उसके पास सरक कर धीमे स्वर में कहा—"बहुत मामूली हुजूर और अभी आप उस तजवीज की करामात देखेंगे। मुझे सबसे ज्यादा डर इस बात का है कि कहीं राजा साहब नदी पार करके इधर हमारे लश्कर पर न आ पड़ें। ऐसा हुआ तो तबाही-ही-तबाही है, इस वक्त सिर्फ आपकी जवाँमर्दी और बहादुरी के जौहर ही से बेड़ा पार हो सकता है।"

मुराद ने तैश में आकर कहा—"मैं तो कहता हूँ दुश्मन पर टूट पड़ो, और उसके टुकड़े टुकड़े कर डालो।"

औरंगजेब मुस्कुरा दिया। उसने भेदभरी नजर से मुराद की ओर देखकर कहा—"हरएक काम के तरीके हैं। हुजूर, मैंने जो बात सोची है वह अर्ज करता हूँ। वह देखिए उस पहाड़ी पर मैंने तोपखाना जमा दिया है। आप जानते ही हैं कि हमारे फ्रान्सीसी तोपची कैसे बहादुर गोलन्दाज हैं। बस आप अपनी बहादुर फौज को लेकर दरिया अबूर कर डालिए। ठीक उस पहाड़ी के नीचे से। मैंने घाटो-घाट जाँच लिया है। दरिया में पानी बहुत कम है, मगर अबूर करना आसान न समझिए—दोनों किनारों पर बीहड़ चट्टानें हैं, घुड़सवारों को और

भारी तोपों को बहुत दिक्कत होगी। और ज्योंही आप दरिया में घोड़ा डालेंगे हमारी फ्रेंच तोपें आग उगलने लगेंगी। आप देखते ही हैं कि ये बहुत ऊँची जगह पर हैं यह जगह भी यहाँ से पौन मील पर है। आप चुपचाप यहाँ तक दुश्मन की नजर बचाकर जंगल ही जंगल पहुँच सकते हैं—" यह कहकर औरंगजेब मुराद की ओर देखने लगा कि उसके चेहरे का भाव क्या है।

मुराद ने कहा—"मगर मैंने फ्रेंच तोपचियों से बात की थी—उनका कहना है कि शाही तोपखाना बहुत मजबूत है और हमारी बनिस्बत उनके पास गोला-बारूद भी बहुत ज्यादा है। हम ज्यादा-से-ज्यादा आठ तोपें चला सकते हैं। इसके बाद बस हमारी तोपों का गोला बारूद खत्म हो जायगा और हमारी सिर्फ आधे से भी कम फौज किसी तरह उस पार पहुँच जायगी जिसमें तोपखाना तो बिल्कुल ही नहीं होगा—तो क्या दुश्मन हमारी धज्जियाँ नहीं उड़ा देगा?"

"जी नहीं हमारे फ्रेंच तोपचियों को मेरी यह पोशीदा तजवीज तो मालूम ही नहीं है।"

"मगर मैं यह जान लेना चाहता हूँ?"

"हुजूर, शाही तोपखाना कासिम खाँ के हाथ में है, और वह आपका गुलाम है।"

"और राजा जसवन्त सिंह?"

"वह सुनिए पूरी तफ़सील। मेरे हुक्म से तमाम शाही तोपखाने का गोला-बारूद दरिया की रेती में गाड़ दिया गया है। सिर्फ तीन चार फायर करने लायक ही तोपचियों को दिया गया है शुरू में ज्योंही हुजूर की फौज दरिया पार करने की कोशिश करेगी, शाही फौज भी आप पर गोलाबारी करेगी, मगर बहुत आहिस्ता। क्योंकि मुझे मालूम हो चुका है कि इस फौज के अफसरों को जहाँ तक बने लड़ाई का मौका बचा जाने और हमलोगों को डरा-धमका कर वापस कर देने का ही हुक्म है। वे सिर्फ सिर पर आ पड़ने पर ही लड़ेंगे। मगर हम लड़ेंगे डट

कर और इस फौज को तहस-नहस कर डालेंगे। क्षिप्रा में पानी कम है। पाट भी ज्यादा नहीं है। शाही तोपखाना तीन-चार फैर करके खामोश हो जाएगा और ज्योंही हम उस पार पहुँच कर तलवारें चमकाएँगे कासिम खाँ की फौज भाग खड़ी होगी। अब रह गए जसवन्त सिंह और उनके राजपूत—वे कुल आठ हजार हैं, मगर लाखों के आदमी हैं। उन्हीं पर हुजूर को जवाँमर्दी और बहादुरी का जौहर आजमाना है।"

मुराद ने तलवार खींचकर खूब जोश में कहा—"खुदा की कसम, जो एक भी काफिर जिन्दा बचकर मैदान से जा सके।"

"लेकिन हुजूर, वक्त का इन्तजार करना होगा।"

"कब तक?"

"बस तीन घड़ी रात बीतने तक।"

"अच्छा तो मैं अब चला।" वह झपट कर खड़ा हो गया।

औरङ्गजेब ने अदब से सिर झुका कर कहा—"खुदा हाफिज।"

मुराद पर्दे को धक्का देकर अपने खीमे की ओर दौड़ा और औरङ्गजेब जल्दी जल्दी हाथ मलता और तेजी से कदम बढ़ाता हुआ खीमे में टहलने लगा। फिर उसने तुरन्त कई रुक्के धावकों को देकर उन्हें इधर उधर दौड़ाया।

तीन घड़ी रात बीतते-बीतते औरङ्गजेब का तोपखाना गरज उठा, देखते ही देखते क्षिप्रा के दोनों किनारों पर आग ही आग धधक उठी।

: ४४ :

धरमत का युद्ध

तीज का चाँद आकाश में नीचे को झुक रहा था। तीन पहर रात बीत चुकी थी। ठण्डी हवा के झोंके थकी हुई दुनिया पर प्यार की थपकियाँ लगा रहे थे। शाही लश्कर चुपचाप मीठी नींद में मस्त था,

ली औरङ्गजेब के तोपचियों ने ऊँची पहाड़ी पर तोपों को फिर चढ़ा कर बलवन्त सिंह की सेना के मध्य भाग पर गोलों की मार्री मार करनी आरम्भ की।

अब शाही फौज एक सँकरे मार्ग पर सिकुड़ गई। इस मैदान के दोनों ओर गहरी खाइयाँ और दलदल थी। शाही फौज शीघ्रता से पलट भी न सकती थी। अब अपनी सेना के अग्रभाग को नष्ट होते और औरंगजेब को आगे बढ़ते देख बलवन्त सिंह की प्रधान सेना के दाएँ दल से रायसिंह सीसोदिया, सुजान सिंह बुन्देला, और अमरसिंह चन्द्रावत अपनी-अपनी सेना लेकर भाग खड़े हुए। इसी समय मुराद ने सेना लेकर बलवन्त सिंह के पड़ाव पर धावा बोल दिया। पड़ाव रणभूमि के निकट ही था। वहाँ का रक्षक देवी सिंह बुन्देला औरंगजेब से मिल गया। अब मुराद ने उधर कर राजपूतों के बाएँ दल पर जोरदार आक्रमण किया। थोड़ी ही देर में इस भाग का शाही सेनापति इस्फार खाँ मारा गया और यह पक्ष टूट गया।

अब शाही सेना के दोनों ही पक्ष टूट गए। कासिम खाँ अभी तक दूर खड़ा अपनी सेना सहित तमाशा देख रहा था। अब जो औरङ्गजेब को उसने बढ़ते देखा—तो वह सेना समेत भाग खड़ा हुआ। अब बलवन्त सिंह की सेना को दाहिनी ओर से औरङ्गजेब, बाईं ओर से मुराद और सामने से जुल्फिकार खाँ ने दबोच लिया और राजपूत सेना को इस प्रकार घेर लिया जैसे साँप गेंडुली मार कर शिकार को घेर लेता है। वहाँ राजा बलवन्त सिंह के प्राणत्याग का समय आ उपस्थित हुआ। वे कई घाव खा चुके थे। अब वे समय देख प्राणाहुति पाने को आगे बढ़े। पर उनके साथियों ने घोड़े की लगाम पकड़ ली और उन्हें तलवारों की छाँह में युद्धभूमि से विमुख कर वापस मोड़ी। उन्होंने सीधे जोधपुर की राह ली और वह वे भागों से भरपूर, मूल्य व्याप्त और पछतावे से पूर जोधपुर किले के द्वार पर पहुँचे, इनके आप केवल पच्चीस योद्धा थे।

महाराज जसवन्त सिंह के युद्धक्षेत्र त्यागने के बाद रतलाम के रतनसिंह राठौर शाही सेना के सेनापति बने। उनका अभिप्राय युद्ध को उलझाए रखना हो था जिससे कि भागने वालों का पीछा न किया जा सके। परन्तु शाही सेना में शीघ्र ही भगदड़ मच गई और रतन सिंह ने अपने शरीर पर अस्सी घाव खाकर रणक्षेत्र में प्राण त्यागे।

भागती शाही सेना का किसी ने पीछा नहीं किया। विजयी शाहजादों ने शाही पड़ावों पर अधिकार कर लिया। सारी तोपें, तम्बू, हाथी, खजाना, सब इनके हाथ लगा। सैनिकों ने शाही फौज का सब सामान लूट लिया।

धरमत का यह युद्ध औरंगजेब के लिए एक शुभ शकुन हो गया। जसवन्त सिंह और कासिम खाँ के पीठ फेरते ही औरंगजेब की सेना ने जयनाद किया। औरंगजेब हाथी से उतर पड़ा और वहीं रणभूमि में खून से लथपथ लाशों और तड़पते हुए घायलों के बीच घुटनों के बल बैठ कर उसने शुकराने की नमाज पढ़ी। अपनी पहली विजय की स्मृति में औरंगजेब ने उस युद्धस्थली में एक सराय बनवाने और बाग लगाने की आज्ञा दी। उसने बारम्बार मुराद को बधाइयाँ देते हुए कहा—"हजरत, फतह आपके कदमों में है। इत्मीनान रखिए कि दारा की फौज में बीस हजार सिपाही ऐसे हैं जो पलक मारते हमारे झण्डे के नीचे आ जाएँगे।" मुराद गर्व और आनन्द से पागल हो गया। उसकी इच्छा थी कि वह बिना रुके आगरे पर चढ़ दौड़े। परन्तु औरंगजेब ने कहा—'नहीं, नहीं, हमें यहीं मुकाम करना चाहिए जिससे हमारी फौज ताजा दम हो जाए, और लड़ाई की कमी पूरी हो। इसके अलावा जो खत हमने दिल्ली को लिखे हैं उनके जवाब भी आ जाएँ और हमें मालूम हो जाए कि हमारी तजवीजें ठीक कारगर हो रही हैं। फिर हम धीरे-धीरे आगे बढ़ेंगे।"

: ४५ :

सफेद-डाकू

पाठक उन दोनों योरोपियन यात्रियों को न भूले होंगे जिन्होंने सूरत में मुराद के फ्रान्सीसी तोपचियों में मिल कर सूरत की लूट में लूटमार करके गहरा माल मारा था। धरमत की लड़ाई में भी ये मुराद के तोपखाने में नौकर थे। परन्तु अब इनका इरादा आगरे पहुँच कर बादशाह की कोई बढ़िया नौकरी करने का हुआ। इन्होंने शाही सेना के तोपचियों की अकर्मण्यता देखी थी और उनके संगी योरोपियन तोपचियों ने उनकी खूब खिल्ली उड़ाई थी। मालपत्ता भी इनके पास काफी था। इसलिए इन्होंने इन विद्रोही शाहजादों का साथ छोड़ कर शाही नौकरी करने का निर्णय किया था।

धरमत की लड़ाई में हार कर जब शाही सेना भागी तो उसमें बहुत से भगोड़े, चोर, उठाईगीरे और डाकू भी थे—जो केवल लूट के माल में हाथ मारने के लालच में शाही सेना में नौकर हो गए थे। ये दोनों योरोपियन भी इन्हीं डाकू भगोड़ों में मिल गए और आगरे की राह चले।

गर्मी बहुत सख्त थी। जून का महीना था। आग बरस रही थी। ये योरोपियन उसके अभ्यस्त न थे। रास्ते में पानी का बहुत कष्ट था। मार्ग में दो तीन अन्य भगोड़े इनके साथ और हो लिए थे। वे शाही तोपचियों में नौकरी करते थे। अभी राजधानी एक दो दिन का मार्ग रह गया था कि गर्मी की भयानकता से लू लग कर मोशिए ब्लाक बेहोश हो कर गिर गया। उसका घोड़ा छटपटा कर मर गया। उसका युवक साथी बैलिस बड़ा घबराया। वह सहयात्री भगोड़ों की सहायता से उसे पास की एक सराय में ले आया।

वह एक बहुत बड़ी सराय थी। वह ईंटों और पत्थरों की बनी हुई थी। उसकी बनावट मजबूत—किले के माफक थी। सराय का सहन बहुत बड़ा था। उसमें बहुत से झाड़ियों पेड़ थे। खाने-पीने और आवश्यकता की चीजों की अनेक दुकानें थीं। सराय के सहन में यात्रियों के हाथी, घोड़े, पालकी, बहली, ऊँट आदि सैकड़ों की संख्या में एकत्रित थे। एक हजार से भी अधिक यात्री इस समय वहाँ उपस्थित थे जिनमें बहुत से मरमत की लड़ाई से भागे हुए भगोड़े थे। इन योरोपियन यात्रियों ने उसी सराय में आकर आश्रय लिया। वे बीमार को सराय में ले आए।

परन्तु सराय का मालिक इन गोरे चोरों को खूब जानता था। ये लोग शराब पी कर सारी रात शोर शप्पा मचाते—मार-पीट, गाली-गुफ्ता करते और अन्त में बिना पैसा दिए चल देते थे। अतः उसने इन पर तनिक भी दया न की और स्थान देने से इन्कार कर दिया। इस पर डेविड ने कहा—

"लेकिन हमारे साथ एक मरीज है।"

"तो मैं क्या करूँ? तुम देखते हो कि सब कोठरी-कमरे भर गए हैं। सब में इज्जतदार रईस और मनसबदार मुसाफिर ठहरे हैं। जगह ही नहीं है।"

"लेकिन हम भी इज्जतदार मुसाफिर हैं दोस्त।"

"पर जगह भी हो। बेहतर है तुम अगले पड़ाव तक बढ़े जाओ, चार-पाँच कोस ही तो है।"

"हम जा नहीं सकते, हमारा एक घोड़ा मर गया है। और हमारा आदमी बेहोश है।"

"मेरे पास केवल एक कमरा है और उसका पेशगी किराया मुझे मिल चुका है।

"हम भी पेशगी देने को राजी हैं।"

"मगर उस रईस ने एक कमरे की तीन अशर्फी दी हैं।"

"हम चार पदार्थ देने को राजी हैं, यह लो।"

"ओह, तब तो उसे इन्कार ही करना पड़ेगा, खैर आप अपने साथी को ले आइए—यहाँ आप को हकीम भी मिल सकता है। पर वह मूर्ख बड़ा लालची है। बिना दो पदार्थ पेशगी लिए आयगा ही नहीं।"

डेविड ने उसे धन्यवाद दिया और दो पदार्थ उसे और देकर कहा—"खुदा के लिए हकीम को जरूर बुलवा दो।"

सराय वाला बहुत खुश हो गया। पदार्थ टेंट में खोंस कर एक ओर चला गया और इन योरोपियनों ने सराय की उस गन्दी कोठरी में—जिसे वह अमीरों के ठहरने का कमरा बता रहा था—डेरा डाला।

हकीम बिल्कुल नागवारिया और बेहूदा था। वह बड़ी भारी पगड़ी बाँधे और लम्बा लबादा अंग पर डाले हुए था। रोगी की नब्ज पकड़ कर वह बड़ी देर तक अरबी फारसी में कुछ बड़बड़ाता रहा—फिर उसने एक दवा रोगी को खिलाई और इत्मीनान से कहा कि सुबह तक इन्शा अल्ला-ताला वह ठीक हो जायगा।

पर हकीम के जाते ही दवा के असर से रोगी को दस्त लगने लगे। डेविड ने घबरा कर हकीम से कहलवाया कि अब क्या करें, हकीम ने कहा—सब बीमारी निकल रही है। फिक्र न करो। सुबह तक सब ठीक-ठीक हो जायगा।

लाचार बेचारा डेविड बैठा रहा। शाम को सराय के अफसर ने सराय के सब फाटक बन्द कर लिए और सिपाहियों ने पुकार कर आवाज लगाई कि सब लोग अपना-अपना सामान देख सम्भाल लें—और होशियार हो जाँय। इन योरोपियन यात्रियों ने रात काटने का प्रबन्ध किया। परन्तु अभी आधी रात भी नहीं हुई थी कि रोगी मर गया। अब तो डेविड बड़ा घबराया। उसके साथी अंग्रेज भी एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे और सुबह दिन निकलने से प्रथम ही बेचारे डेविड को अकेला छोड़ कर चल बने हुए।

परन्तु फाटक खोलने से पहिले सिपाहियों ने फिर आवाज लगाई—कि फाटक खोला जा रहा है। अपना-अपना सामान सम्हाल लेना। डेविड ने देखा तो उसका बहुत सा सामान उसके ये अमेज सहचारी ले गए थे। उसने दौड़ कर सराय के अफसर से कहा। अमेज अभी सराय के फाटक ही पर थे—पकड़ लिए गए और रस्सियों से बाँध कर सहन में खड़े किए गए। सराय के अफसर ने शहर के हाकिम को इत्तला दी। हाकिम सिपाहियों का एक आधा दस्ता लेकर सराय में आ पहुँचा।

अभी डेविड अपने साथी को दफ्न करने की खटपट ही में पड़ा था, कि हाकिम के सिपाहियों ने उसका सब माल असबाब उठा कर उस पर सरकारी सील-मुहर करना शुरू कर दिया। डेविड ने घबरा कर कहा—'इसके क्या मानी ?'

"माने क्या ? सब माल बादशाह सलामत का।"

"वह कैसे ?"

"कानून है। जो आदमी लावारिस मर जाता है—उसके माल-असबाब का मालिक बादशाह होता है।"

"लेकिन इस मरे हुए का वारिस तो मैं हूँ।"

"यह काजी के सामने साबित करो।"

"फिर, यह सब सामान केवल मोरिया का ही नहीं है। मेरा भी है।"

"यह भी काजी के सामने साबित करना पड़ेगा।"

"लेकिन भाई, हमें अभी लाश का भी तो इन्तजाम करना है।"

"लाश पर तो हमने सील-मुहर नहीं लगाई है।"

इतना कह कर हाकिम ऐंठता हुआ चला गया और सिपाहियों ने उसका सारा माल उठा कर सराय की एक कोठरी में भर दिया और ताला लगा कर उस पर सील-मुहर लगा दी, और चल दिए। यह देख रस्सियों से बँधे ये अमेज चोर खिलखिला कर हँसने लगे।

बेचारा डेविड परेशान और हक्का-बक्का खड़ा रह गया। अब न तो उसे कोई वकील देने वाला था—न मददगार। उसने किसी तरह चाची को मिट्टी दी और अपने सामान की चिन्ता में दौड़-धूप करने लगा। वह कभी काज़ी के पास जाता, कभी अफ़सर के। कभी किसी की खुशामद करता, कभी किसी की।

वे चोर अंग्रेज भी अफ़सर की मुट्ठी गर्म करने से चूक गए। और उसी वक्त वहीं चले गए। इस घटना के तीसरे ही दिन वे दोनों अंग्रेज एक और अंग्रेज सौदागर को लेकर सराय में आए। उनके साथ वह हाकिम और उसके सिपाही थे। आकर उन्होंने डेविड से साहेब सलामत की, और हँस हँस कर बातें करने लगे। इस समय वह देशी लिबास पहने हुए थे। डेविड ने पूछा—"अब आप के यहाँ आने का क्या मतलब है?"

"हम लोग अपने मृत रिश्तेदार का माल असबाब लेने आए हैं।"

"वह तुम्हारा रिश्तेदार कब था?"

"लेकिन तुम कौन हो?"

"मैं मोरिए का वारिस हूँ।"

"मानी लड़के," वह अंग्रेज मुँह चिढ़ा कर हँसने लगा।

डेविड ने कहा—"क्या तुम्हारे पास कोई लिखित सबूत है?"

"तुम क्या काज़ी हो कि तुम्हें सबूत दिखाएँ।" उन्होंने उसकी तरफ से मुँह फेर लिया और हाकिम ने सब सामान उनके हवाले कर दिया।

"लेकिन मैं अपना माल इतनी आसानी से तुम्हें नहीं ले जाने दूँगा।" यह कह कर डेविड ने पिस्तौल निकाल ली। इस पर हाकिम ने कहा—"झगड़ा करने से कोई लाभ नहीं। इनके पास शाही हुक्मनामा है। ये इसे आगरे ले जाएँगे। तुम भी चले जाओ और अपना हक साबित करो।"

डेविड ने देखा कि इन बदमाशों से कोई चारा नहीं चलेगा। वह

उन्हीं के साथ-साथ चला। उसने कहा—"यह अच्छी धींगामुश्ती है कि जबर्दस्ती दूसरे का माल छीना जाता है।"

इस पर एक अंग्रेज ने तलवार निकाल कर कहा—"चुपचाप चला चल लड़के, वरना हम तेरा यह घोड़ा भी छीन लेंगे।"

लाचार डेविड चुपचाप उनके साथ चलता गया। तीन दिन बाद वे आगरे पहुँचे और उन्होंने सब माल एक सराय में रख कर ताला लगा दिया और हँसते हुए एक ओर को चल दिए। निरुपाय डेविड ने भी उसी की बराबर की कोठरी में डेरा जमाया।

: ४६ :

पान का खर्चा

इन दोनों अंग्रेजों का नाम टामस और स्मिथ था। वास्तव में वे पूरे चोट्टे थे। वे दारा के तोपखाने में तोपची थे। लड़ाई के समय खूब शराब पीकर तोप चलाना और बाकी दिनों में शराब पीकर जुआ खेलना या जुआखोरी, लूट-खसोट करना यही इनका धन्धा था। वे वास्तव में कासिम खाँ के भगोड़े और बेईमान तोपची थे। परन्तु स्मिथ दारा का मुँहलगा था। दारा के पास ऐसे खुशामदी लोफरों की आवा जाही खूब रहती थी। वह विलायती शराब की बोतलें चुरा-चुरा कर दारा की खिदमत में पेश किया करता था। इसी की मार्फत वह कार्बिनाना लौंडी भी दारा ने खरीदी थी, जिसकी बराबर हसीन कोई शाही हरम में न थी और जिसे बेगम बनाने पर दारा आमादा था और बादशाह से भी लड़ बैठा था। आप समझ सकते हैं कि शराब और औरत की रिश्वत जहाँ चल जाती है, वहाँ उचित अनुचित और छोटे-बड़े का भेद नहीं रहता।

सामूगढ़ की लड़ाई के बाद भागते भागते जब उन्हें डेविड और उसके साथी के मालदार होने का पता लगा तभी वे लड़ाई-पड़ाई करके-

उसके दोस्त बन गए थे। पर, जब दैवयोग से मोरिए मर गया—और चोरी करने में इन्हें सफलता नहीं मिली तो इन्होंने सदर आगरा आकर दारा से अर्ज की कि मेरा एक रिश्तेदार हुजूर के दरबार में नौकरी करने के विचार से आ रहा था। दुर्भाग्य से उसे यह प्रतिष्ठा प्राप्त न हो सकी और एक सराय में पहुँच कर वह मर गया। वहाँ के हाकिम ने उसका सब माल-असबाब रोक रखा है, वह मुझे दिलाया जाय।

दारा ने कोई खोज-बीन नहीं की और हुक्म दे दिया। जब ग्रामस को स्मिथ की चालाकी का पता चला तो वह झगड़ने लगा कि आधा माल मुझे दो—वरना मैं भण्डा फोड़ दूँगा। लाचार स्मिथ को उसका मुँह बन्द करने के लिए उसे भी आधा हिस्सा देना पड़ा।

दैवयोग से यहीं सराय में ही डेविड की मुलाकात एक फ्रान्सीसी सुनार से हो गई। यह सुनार भी दारा का सेवक था और उसकी बेगमात के लिए जेवर बनाया करता था। इसका नाम येरिवर था, और वह एक भला आदमी था। इसी ने उसे उन अंग्रेज चोरों का सारा हाल बता दिया। उन दिनों भी फ्रान्सीसी लोग अंग्रेज मात्र को अपना दुश्मन समझते—और जहाँ तक बनता उनका काट करते रहते थे। उसी ने डेविड को सलाह दी कि वह वजीरे आजम की खिदमत में जाकर अर्ज करे।

डेविड को तुर्की और अरबी भाषा का कुछ ज्ञान था। उसने अपना वेश तुर्कों जैसा बनाया। सर पर सुर्ख मखमल की पगड़ी पहनी, जिस पर नीले रङ्ग का रेशमी फीता बाँधा। हरे रङ्ग की साटन गले में बाँधी, शरीर पर सुर्ख जमीन की सुनहरी फूलदार अचकन पहनी और वह निर्भय मुगल सल्तनत के वजीर के सामने जा पहुँचा। उसने संक्षेप में वजीर से सारा किस्सा बयान कर दिया।

सुन कर वजीरे आजम ने उस युवक को ऊपर से नीचे तक देखा—

फिर कहा—"क्या वजह है कि तुमने यह पोशाक पहनी है। मुगलिया ढंग के कपड़े क्यों नहीं पहने ?"

युवक ने कहा—"हुजूर मैं तो कल, फ्रांस आदि देशों से यात्रा करता हुआ आ रहा हूँ। इसलिए मैं यही पोशाक पहनता हूँ। आगरे में अभी आया हूँ।"

वज़ीर ने फिर पूछा—"क्या तुम जानते हो कि शहनशाह के रूबरू हाज़िर होने पर किस तरह कोर्निश बजा लाई जाती है ?"

इस पर डेविड ने सीधे खड़े होकर अपने सिर को इतना झुकाया कि वह ज़मीन से छू गया। इसके बाद अपने दाहिने हाथ की पीठ को ज़मीन की तरफ करके अपना सिर उठा लिया और सीधा खड़ा हो गया। ऐसा ही उसने तीन बार किया। वज़ीर साहेब यह देख कर मुस्कुराने लगे। उन्होंने कहा—"दिल्ली में तुम नए आए हो मगर बादशाह सलामत को आदाब बजा लाना ठीक तरीके पर जानते हो।"

वे शीघ्र ही शाही दरबार को चल दिए। साथ में डेविड को भी ले लिया और उसे हिदायत की कि खबरदार रहना—जब बादशाह के सामने पहुँचो—इसी तरह आदाब बजाना।

उन्होंने अपने दो अमीरों को इस सम्बन्ध में समझा दिया कि वे संकेत पाने पर किस तरह उसे बादशाह के सम्मुख पेश करें।

वह लोग दरबार में पहुँचे। वज़ीरे आज़म बादशाह के सामने चले गए और गुलामों ने उसे बादशाह से पचास कदम के फासले खड़ा कर दिया और धीरे से कान में कहा—कि ज्योंही बादशाह सलामत तुम्हारी ओर देखें उसी तरह आदाब बजा लाना।

डेविड ने देखा—कि वज़ीरे आज़म ने बँगले के पास पहुँच कर उसी तरह बादशाह को सलाम किया—फिर तख्त के निकट पहुँच कर उसी भाँति सलाम कर बादशाह से बात करने लगा। बात करते करते उसने हाथ उठा कर डेविड की ओर संकेत किया। बादशाह ने आँख उठा कर डेविड की तरफ देखा, और डेविड के पासवाले अमीर ने

उसे बादशाह बका लाने का संकेत किया। डेविड ने उसी भाँति आदाब अर्ज किया। उस समय दरबार में बहुत अमीर उमरा खड़े थे। वज़ीर धीरे-धीरे बादशाह से बात कर रहा था। तख्त के पास ही नीचे वारा एक सुनहरी चौकी पर बैठा था। बादशाह का तख्त बनाने महल के सामने था। तख्त अनेक प्रकार के रत्नों से जड़ा था। उसी पर बादशाह मसनद पर बैठा था। तख्त पर एक ज़रबफ्त का शामियाना सुनहरी स्तूनों पर तना था।

थोड़ी देर में अमीरों ने उसे चलने का संकेत किया। वे अमीर भी उसके साथ ही दरबार से बाहर आए, और सराय तक गए। डेविड ने वह कोठरी बताई जिसमें वह असबाब बन्द था। उन्होंने उसकी मुहर-ताले तोड़ सब असबाब निकाल लिया और अपने साथ उठा ले गए।

दूसरे दिन डेविड को वज़ीर साहब ने अपने सामने हाज़िर होने का हुक्म दिया। डेविड ने जाकर देखा—वह सारा माल असबाब वहाँ पड़ा है और वे दोनों चोर ज़ंजीर हाथ-पैर बँधे, हथकड़ी बेड़ी पहने वहीं खड़े हैं।

डेविड ने वज़ीर को उसी भाँति सलाम किया जैसे बादशाह को सलाम किया था। वज़ीर ने मुस्करा कर कहा—"क्या यही तुम्हारा सामान है?"

"जी हाँ हुज़ूर!"

"और तुम उन दोनों चोरों को भी पहचानते हो?"

डेविड ने दोनों चोरों की ओर देखा और कहा—"यही दोनों हैं हुज़ूर!"

"देखो, इस सामान से कोई चीज़ गायब तो नहीं है?"

डेविड ने देख कर कहा—"जी, सब ठीक है।"

वज़ीर ने तब डेविड को अपने पुत्र के पास बैठने का इशारा किया। कैदियों को वहाँ से ले जाने का संकेत किया। फिर डेविड से कहा—"क्या तुम मेरे यहाँ नौकरी करोगे?"

"जी, मैं शौक से खर्च करूँगा।"

"और, तो तुम अपना सामान ले जाओ।" यह कह कर अपने गुलाम को इशारा किया। उसने दस मुहर उसे देकर कहा—'यह हुजूर वजीर साहब ने तुम्हें पानी के खर्च के लिए इनायत की है।'

डेविड मुहर और सामान ले खुश-खुश उधर में आया।

: ४७ :

बख्शी अहद की सेवा में

मोहिद मौजिफर बहुत खुशमिजाज आदमी थे। उनसे डेविड की शीघ्र ही गहरी दोस्ती हो गई। दोनों दोस्त साथ-साथ शराब पीते और मजे उड़ाते थे। यद्यपि दोनों की उम्र में बहुत अन्तर था। परन्तु उनका बरताव ही व्यवहार दोस्तों के समान था। मौजिफर उसे अपने घर ले गया और जब उसने पूछा कि क्या उसे वजीर की नौकरी करनी चाहिए। तो उसने कहा—'नहीं, मैं तुम्हें मौका पाते ही बख्शी अहद द्वारा दारा शिकोह के हुजूर में पेश करूँगा।'

यह अवसर शीघ्र ही मिल गया। तीन दिन के बाद ही दारा ने मोहिद मौजिफर से पूछा—"क्या तुम जानते हो—वह फिरंगी नौजवान जो कुछ दिन हुए शाही तोपखाने के कप्तान और एक दूसरे अंग्रेज के विरुद्ध शिकायत लेकर दरबार में हाजिर हुआ था—कहाँ है?"

"हुजूर, उसे नौजवान और मददगारों से रहित समझ कर यह गुलाम अपने घर ले गया है। लड़का होनहार और भला मालूम होता है। वह चाहता है कि आपके से नामी से पेश्तर मुगल शाहनशाह और शाहजादा की—दौलतमन्दी और रुतबे को देख ले जिससे योरोप लौट कर वह उनकी शान-शौकत का जिक्र अपने देशवासियों से कर सके।"

"हम उसे देखना चाहते हैं, उसे अपने हमराह हमारे हुजूर में ले आओ।"

मोहसिन ने जब यह सुसमाचार डेविड को दिया और कहा—"मुबारक हो दोस्त, हुजूर शाहजादा दारा शिकोह की खिदमत में जो योरोपियन रहते हैं वे खूब तनख्वाह पाते हैं। बस, देर न करो—क्योंकि बादशाहों के इरादे पक्षियों के समान होते हैं जिन्हें यदि एक बार भी हाथ से निकल जाने दिया जाय तो फिर काबू आना मुश्किल है।"

दूसरे ही दिन वह डेविड को लेकर शाहजादे की सेवा में पहुँचा। दारा को डेविड ने उसी भाँति सलाम किया जिस भाँति बादशाह को किया था। अठारह वर्ष के इस फिरंगी छोकरे को निर्भय कोर्निश करते देख दारा ने मुस्कुरा कर कहा—"क्या तुम फारसी बोल सकते हो?"

डेविड ने फारसी में जवाब दिया—"हुजूरे आला, मैं फारिस और तुर्किस्तान की भी सैर करके आ रहा हूँ।"

दारा ने एक खत निकाल कर उसे दिया और कहा—"क्या तुम इस खत का तर्जुमा फारसी में कर सकते हो?"

खत, इंग्लैण्ड के बादशाह का एक खरीता था जो सुनहरे अक्षरों में लिखा था। डेविड ने उसका अभिप्राय फारसी में सुना दिया। सुनकर दारा सन्तुष्ट हुआ। उसने मन्द मुद्रा से कहा—"यह खत किस चीज पर लिखा गया है, क्या यह कागज है?"

"नहीं हुजूर, यह बछड़े का खास तौर पर बना हुआ चमड़ा है। योरोप के बादशाह ऐसे ही चमड़े पर शाही खत लिखते हैं। जिससे मौसम और सर्दी गर्मी का उस पर असर न हो।"

"क्या तुम अभी कुछ दिन हमारे मुसाहिबों में रहना चाहते हो?"

"खुशी से", डेविड ने निर्भयता से कहा।

"क्या तुम हमारी खिदमत में रहना पसन्द करोगे?"

"पनाहे आलम, आप जैसे प्रसिद्ध मुगल तख्त के वली अहद की सेवा में रहना मेरा सौभाग्य होगा।"

इस जवाब से दारा खुश हो गया और उसे अपनी खास सेना में भरती कर लिया।

। ४८ ।

बुरी ख़बर

धरमत की हार की खबर पहुँचते ही, आगरे में एकदम खलबली फैल गई। दरबार का रङ्ग बिगड़ गया। बादशाह भय से पीला पड़ गया और दारा क्रोध से खौलता उठा। यद्यपि इस समय दारा ने बहुत भारी सेना का संग्रह कर लिया था। लड़ाई यदि सच्चे और ईमानदार सेनापतियों के हाथ में होती तो विजय निश्चय दारा की होती क्योंकि इस समय भी औरङ्गज़ेब के साथ चालीस हज़ार से ज़्यादा फ़ौज न थी। वह भी थकी-माँदी थी। परन्तु शोक की बात तो यह है कि सारे सरदार दारा से नाराज़ थे, कुछ औरङ्गज़ेब से मिल गए थे। किसी पर भी भरोसा नहीं किया जा सकता था। दारा के दोस्तों ने सलाह दी कि सुलेमान शिकोह के लौटने तक ठहरना चाहिए। पर ज़िद्दी दारा ने यह क़ीमती सलाह भी नहीं मानी। सुलेमान के साथ न केवल एक अच्छी सेना ही थी बल्कि और वीर सरदार तथा सेनापति भी थे जिनसे बहुत काम उठाया जा सकता था। बादशाह ने यह भी चाहा था कि वह स्वयं युद्धक्षेत्र में चले और सेना की कमान अपने हाथ में ले, यदि यह बात भी दारा स्वीकार कर लेता तो विजय की बहुत आशा थी, क्योंकि बादशाह के सामने तो बादशाह के ख़िलाफ़ कोई अमीर तलवार न उठाता और सेना भी जिसे यह विश्वास दिलाया गया था कि बादशाह सलामत मर गए हैं, बादशाह के ख़िलाफ़ नहीं लड़ते। परन्तु अदूरदर्शी दारा को उसे नष्ट करने वालों ने यह पट्टी पढ़ाई थी कि वह फ़ौज की कमान अपने ही हाथ में रखे, जिससे फ़तह का सेहरा उसी के सिर बँधे। बादशाह यदि युद्ध में गए तो उन्हीं का नाम होगा। यह बात दारा की समझ में आ गयी और

ने युद्ध में स्वयं चलने का विचार प्रकट किया तो दारा ने कहा—कि हुजूर ने यदि यह इरादा किया तो मैं यहीं गला काट कर जान दे दूँगा। बादशाह लाचार हो गया। उसने दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा—'या खुदा तेरी रज़ा!' और सेना तथा ख़ज़ाने के सारे अख्तियार दारा को सौंप दिए।

दारा ने, जो किसी की सलाह नहीं मानी इसके भी कुछ कारण थे। वह जल्द-से-जल्द औरंगजेब से भिड़ जाना ही पसन्द करता था। पहिला कारण तो यह था कि वह सोचता था कि अभी तक बादशाह मेरी मुट्ठी में है, उस पर पूरा मेरा अधिकार है। दूसरे इस समय तक तमाम खजाने और आमदनी पर भी उसी का कब्जा था। तीसरे शाही सेना भी उस समय तक उसी के हाथ में थी। चौथे वह समझता था कि शुजा एकदम नष्ट हो चुका है और औरंगजेब तथा मुराद की हारी थकी सेना को तुरन्त दबोच डालना अब बहुत आसान है। उसका विश्वास था कि वे एक बार हारकर फिर किसी काम के न रहेंगे और वह एकदम निष्कण्टक बन जाएगा। बादशाह युद्धक्षेत्र में गए तो कौन जाने युद्ध हो ही नहीं और सन्धि हो जाय और औरंगजेब तथा मुराद अपने-अपने सूबों में लौटा दिए जाएँ। बादशाह तन्दुरुस्त हो जाय और सब राज-काज अपने हाथ में ले लें। अपने बेटे सुलेमान शिकोह की फतह से प्रसन्न होने के स्थान पर वह भयभीत हो गया था। वह सोचने लगा कि यदि उसके आने के बाद उसकी मदद से जीत हुई, तो न जाने बादशाह और दरबारियों की तारीफ से उसके हौसले किस कदर बढ़ जाएँ और फिर उसके दिल में अपने बाप की प्रतिष्ठा और प्रेम स्थिर रहे या न रहे। उन दिनों मुगलों के शाही रक्त का ऐसा ही तौर-तरीका था।

इन सब बातों को विचार करके उसने सेना को तुरन्त कूच करने की आज्ञा दे दी। जब वह विदा होने की आज्ञा लेने बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ तो बूढ़ा बादशाह बेटे को गले लगाकर रोने लगा।

उन्होंने कहा—"खैर बेटा, तुमने अपनी मरजी का काम किया, खुदा इसमें तुम्हें मुबारक और कामियाब करे, परन्तु याद रखो कि यदि लड़ाई बिगड़ गई तो मुँह दिखाने योग्य न रहोगे।" दारा ने बादशाह की बातों का कोई जवाब नहीं दिया और बादशाह को सलाम करके वह चुपचाप बाहर चला गया, और कूच बोल दिया। इस समय दारा के पास एक लाख सवार, बीस हजार पैदल, एक सौ मैदानी तोपें, जिनमें आठ से बारह पौंड का गोला पड़ता था और एक बीस पौंड के गोले वाली किलाफाड़ी तोप भी थी। दो सौ उमदा फरंगी तोपची उसके पास थे। इसके सिवा सजे हुए पाँच सौ हाथी, और बहुत से ऊँट भी थे। इन ऊँटों पर जरबीन लिए एक-एक सवार था जिनमें कैद दो छटाँक तक की गोली पड़ती थी। पाँच सौ हौदे वाले हाथी अलग थे जिन पर दो दो बन्दूकची थे। इनके पास देशी बन्दूकें थीं। फौज में भीड़ भाड़ बहुत थी। बनिए जो रसद देते थे, सर्राफ जो रुपए-पैसे देते तथा सिक्कों को अदल बदल करते थे, तथा अन्य बहुत से लोग नौकर, चाकर, रंडी, भड़ुए भी इस लश्कर के साथ चल रहे थे।

१४ मई १६५८ को जब यह फौज आगरे से चली तो मीलों तक फौज ही फौज दीखती थी। जो इसे देखता उसी का कलेजा दहल जाता था। परन्तु यह आश्चर्य की बात थी कि किसी के मुँह से यह नहीं निकलता था कि दारा की फतह होगी। इसके भी कारण थे। जिन अमीरों की सिफारिश की बादशाह ने बेमुरौवती की थी और दारा ने जिनका समय-समय पर अपमान किया था वे सब मन में खार खाए बैठे थे और वे इस समय दिल से उसकी दुर्दशा देखकर खुश होना चाहते थे। सुलेमान शिकोह और राजा जयसिंह उससे दूर थे, जो उसकी समय पर बड़ी मदद कर सकते थे। वीर महाराज जसवन्त सिंह की दुर्दशा हो ही चुकी थी। जो नई भरती की गई थी उसमें कसाई, नाई, लुहार, बढ़ई, दर्जी, और भटियारे ही शामिल थे। जिन्होंने न कभी हथियार देखे थे न लड़ाई का मैदान। इस प्रकार यह फौज

दुश्मन पर दबाव तो डालती थी परन्तु वह एक मुसीबत और उसका बोझ न थी। इसके सिवा तीस हजार चुनी हुई सेना बादशाह ने किले की रक्षा के लिए अपने अधीन रख छोड़ी थी।

जब दारा अपने सजे हुए विशाल हाथी पर सवार होने लगा तो उसने अमीरों की ओर देखकर कहा—'गरीब माफ़-मगरूर मर्ग।"

इस पर उसके साथ के सरदारों ने कहा—"इन्शा अल्लाताला।"

दारा के हाथी की सुनहरी अम्मारी धूप में सूर्य की भाँति चमक रही थी। उसके चारों ओर राजपूत वीरों के रिसाले थे। इसके बाद सौ मस्त हाथी थे जिनकी सूँडों में जंजीरें और दाँतों पर सोने-चाँदी के हल्के चढ़े थे, जिनके सामने हौदों में नंगी तलवारें लटक रही थीं।

सबसे आगे इस्लाम-बरदार हाथी था। जिसका महावत ढाल-तलवार से सुसज्जित था।

चार दिन कूच करने के बाद दारा ने धौलपुर के निकट पहुँच कर पड़ाव डाला। वहाँ जासूसों ने खबर दी कि अब दुश्मन नजदीक ही है। इसलिए अपने सरदारों और सिपहसालारों से सलाह करके उसने चम्बल नदी के सारे पार लायक घाटों को रोक कर अपने अधिकार में कर लिया और मुनासिब जगहों पर तोपें लगा दीं।

: ४९ :

चम्बल के तीर पर

औरङ्गजेब का लश्कर भी कूच पर कूच करता हुआ उज्जैन और ग्वालियर उलाँघ कर चम्बल के उस ओर आ धमका। लश्कर में उत्साह फैला हुआ था। वह एक विजय प्राप्त कर चुका था। औरङ्गजेब ने उसे बहुत से सब्ज़बाग़ दिखाए थे और छोटे से बड़े तक प्रत्येक सैनिक को पुरस्कृत किया था। उसकी सेना का प्रत्येक सिपाही लड़ने के लिए उतावला हो रहा था। अपने जासूसों के द्वारा उसे दारा की

सेना का राई-रत्ती हाल मालूम होता जाता था। उसने अपने तमाम जनरलों को बुला कर एक छोटी-सी युद्धसभा की, उसमें उसने अपने सेनानायकों को सम्बोधन करके कहा—"अब आपको वह शानदार फ़तह हासिल करने का समय आ गया है जो तवारीख़ में अमर रहेगी। आप अब कूच के लिए तैयार रहिए। हम जितनी जल्दी करेंगे उतनी हमें सफलता मिलेगी। हमें आपकी बहादुरी दिलेरी ईमानदारी और धीरज पर भरोसा है। दोस्तो, यक़ीनन फ़तह आपके कदम चूमेगी।"

इसके बाद उसने प्रत्येक अफ़सर को उसके काम बताए और विदा किया। फिर वह बड़ी बेचैनी से अपने खीमे में टहलने लगा। मुराद ने उसे चिन्तित देखकर पूछा—"क्या कोई दिक्कत दरपेश है?"

"जी नहीं, मगर मैं एक ख़त के जवाब का मुन्तज़िर हूँ, मुझे अफ़सोस "

औरङ्गज़ेब पूरी बात नहीं कर पाया कि उसे उसके चूनमाई मीर बाबा के आने की इत्तला मिली। वह लपक कर खीमे के दरवाज़े तक गया। उतावली से कहा—"भाई जान, एक-एक लमहा बड़ा क़ीमती है। कहो क्या ख़बर लाए?"

मीरबाबा ने मुस्कुरा कर ख़त औरङ्गज़ेब के आगे बढ़ा दिया। औरङ्गज़ेब मोमबत्ती के पास जाकर ख़त पढ़ने लगा। ख़त पढ़ते-पढ़ते उसका चेहरा खिल उठा। उसने मुराद से कहा—"मुबारक हज़रत, हमारी सबसे बड़ी मुश्किल हल हो गई। यहाँ से १२ कोस के फ़ासले पर एक घाट है जहाँ दारा का पहरा नहीं है। वहाँ पानी भी घुटनों तक है। वहाँ के ज़मींदार ने हमारी मदद करना कबूल कर लिया है। रास्ता बीहड़ और विकट है। हमें बज़ाहिर छावनी यहीं बनी रहने देनी होगी और आप अपनी उसी बहादुरी और दिलेरी से ८ हज़ार चुनीन्दा सवारों को ले जाकर इस तरह चुपचाप नदी पार उतर जाइए कि किसी को कानों-कान ख़बर न हो। बस, आप जिस घड़ी नदी के उस पार क़दम रखेंगे उसी घड़ी दारा की तक़दीर का फ़ैसला हो जाएगा।

कीजिए जहाँपनाह, आज रात ही हुजूर की और दारा की किस्मत का फैसला होना है।"

मुराद कुछ देर उसी की हालत में खड़ा रहा। औरङ्गजेब ने उसे आलिंगन किया—पेशानी चूमी और कहा—"खुदा हाफ़िज़!"

मुराद पुरजोश खीमे से निकल गया। औरङ्गजेब देर तक उसकी ओर देखता रहा। फिर उसने एकदम पलट कर मीरबाबा की ओर देखा—लपक कर उसके दोनों कन्धे पकड़ उन्हें हिलाते हुए कहा—"जरूर तुम बहुत थक गए होगे—मगर भाई खान, आज तुम जरा आराम न करने पाओगे। जाओ, छावनी में जगह-जगह नाच जलसा करो, सिपाहियों से कह दो—रंगरेलियाँ मनाएँ, गाएँ, बजाएँ मौज करें।" फिर धीरे से उसका हाथ दबा कर कहा—"जिससे दुश्मन समझे, कि हमारा लश्कर मौज बहार में मस्त है। जाओ भाईजान, अपना काम करो।"

मीरबाबा ने कहा—"जाता हूँ, मगर आप अब तो आराम कीजिए।"

"आराम, नहीं-नहीं, मुझे आज रात भर बहुत-सी चिट्ठियाँ लिखनी हैं।"

और वह फिर अपने खीमे में इधर से उधर तेजी से टहलने लगा। मीरबाबा कुछ देर उसे देखता रहा फिर धीरे से चल दिया। औरङ्गजेब ने अपने खीमे में मुसौदे पहरे बैठा दिए और जरूरी खत लिखने लगा।

: ५० :

चम्बल के पार

धौलपुर पहुँच कर, चम्बल के सारे राह घाट रोक कर तथा उनपर मजबूत चौकी बैठाकर दारा बहुत सन्तुष्ट हुआ। उसका उद्देश्य बिना लड़े औरङ्गजेब को चम्बल के उस पार रोक देने का था, जिससे

सुलेमान शिकोह की सेना को आने का अवसर मिल जाय'। पर औरङ्गजेब ने निर्बाध रूप से नदी पार कर ली।

औरङ्गजेब की सेना के नदी पार उतरने की खबर पाते ही दारा क्रोध से लरजने लगा। उसने तुरन्त स्वयं उसे रोकने जाने का इरादा किया। इस पर फौजदार इब्राहीम खाँ कमर मरदान ने आगे बढ़कर निवेदन किया 'आलमपनाह, आपका खुद इस वक्त दुश्मन के सामने जाना मुनासिब नहीं। सिर्फ बारह हजार फौज का एक दस्ता इस गुलाम के साथ भेजना काफी है। जो औरंगजेब की थकी और बेतरतीब फौज को आनन फानन तबाह कर देगा।" परन्तु विश्वासघाती खलील खाँ ने फौरन मुँह बिचका कर कहा—"हुजूर, यह तो कुछ अच्छी तजवीज नहीं है, इससे वह इज्जत और नामवरी जो हुजूर को मिलनी चाहिए सिर्फ उस अफसर को मिलेगी जो इस मुहिम पर जायगा। इसके अलावा फौज से इस वक्त बारह हजार सवारों का दस्ता अलग कर देना भी कुछ ठीक नहीं मालूम देता। गुलाम का ख्याल है कि अगर ऐसा किया गया तो जो फतह अब यकीनन समझी जाती है, खतरे में पड़ जायगी।"

इस पर दारा कुछ भी निर्णय न कर सका और दूसरे दिन जब शाही सेना ने औरंगजेब के मुकाबिले कूच किया—तबतक उसकी लगभग सारी ही सेना इस पार उतर चुकी थी, और वह तेजी से यमुना के किनारे की ओर बढ़ रही थी।

मुराद की रकाब के साथ औरंगजेब के तीन मजबूत दस्ते सुयोग्य सेनानायकों की अधीनता में एक समग्र तोपखाने सहित नदी के इस पार उतर गए। उसके बाद ही बड़ी सावधानी से औरंगजेब भी अपनी सम्पूर्ण सेना के साथ पार उतर आया। रास्ता बहुत खराब था। गर्मी बेहद थी। जानवर और सैनिक प्यास से तड़प रहे थे। घोड़े कदम कदम पर ठोकरें खाते थे। सिर्फ प्यास से तड़प कर पन्द्रह हजार आदमी राह में मर गए। पर चम्बल के इस पार उतरना बड़ी भारी सैनिक

सफलता थी। औरंगज़ेब की इस एक ही चाल ने दारा के सारे मोर्चों को निकम्मा बना दिया था—घाट-घाट पर दारा ने जो बड़े-बड़े मोर्चे बनाए थे, चौकियाँ बैठाई थीं, लम्बी-चौड़ी खाईं खोदकर तोपें जमाई थीं—वह सारी कारस्तानी कुछ भी काम न आई। आगरे की राह अब औरंगज़ेब के लिए खुली पड़ी थी।

दारा ने यह देखा तो क्रोध से पागल हो गया। वह क्या करे यह कुछ भी निश्चय न कर सका। कोई अच्छा सेनापति सलाहकार और विश्वासी युद्ध-कला-विशारद आदमी उसके पास न था। वह बौखला कर चम्बल का किनारा छोड़ पीछे लौटा। भारी तोपें जो नदी पार जमाई थीं—वहीं छोड़ देनी पड़ीं। अब उसे राजधानी की रक्षा की चिन्ता व्याकुल कर रही थी। पानी की बेहद कमी से जानवर और सैनिक बीच राह तड़प-तड़प कर मर रहे थे, पर वह मरतों और सिसकतों को पीछे छोड़ ताबड़-तोड़ भागा जा रहा था। राह में जो गढ़े-तालाब मिल जाते—सिपाही और जानवर उन पर टूट पड़ते। आखिर वह समूगढ़ के मैदान में आ पहुँचा, जहाँ से आगरा केवल दस मील रह गया था। यहाँ उसने औरंगज़ेब को पहिले ही से सामने खड़े हुए देखा। दारा ने आगरे और औरंगज़ेब के बीच में यमुना किनारे अपना लश्कर डाला।

दारा अपनी सारी सेना को सजाकर पड़ाव से निकला। लोगों ने समझा वह युद्ध करने जा रहा है। परन्तु शत्रु सेना को देखकर वह रुक गया और यह जानने की चेष्टा करने लगा कि शत्रु का इरादा क्या है। दिन भर सेना को व्यर्थ घुमाकर वह सायंकाल में लौट आया। यह उसकी सबसे भयानक भूल थी। औरंगज़ेब अभी व्यवस्थित नहीं था, सेना उसकी बहुत कम थी। कड़ी धूप थी। भूखे-प्यासे सैनिक परेशान हो रहे थे। दारा ने दिन भर अपने सैनिकों को कड़ी धूप में खड़े रख कर व्यर्थ थका डाला। गर्मी में बेकार पचासों बड़े-बड़े सैनिक और हाथी-

थोड़े बेचैन हो गए। औरङ्गज़ेब को आराम करने को पूरी रात और समूचा दिन मिल गया।

इसी समय उसे बादशाह का पैग़ाम मिला। उसमें लिखा था "मेरे प्यारे फ़रज़न्द, मैं हमेशा तुम्हें प्यार करता रहा हूँ, क्योंकि तुम मेरे सबसे बड़े और सबसे अधिक आज्ञाकारी पुत्र हो। मैं चाहता था कि तुम बिना किसी दिक्कत के बादशाह बन जाते, मगर न जाने खुदा को क्या मंज़ूर है। मैं चाहता था कि तुम्हें किले में छोड़ कर मैं मैदाने जंग में जाता और देखता कि मेरे ही नमकहराम नौकर और दुश्मन पुत्र कैसे मेरा मुकाबिला करते हैं। मगर तुमने मेरे बुढ़ापे और कमज़ोरी पर तरस खाकर खुद लड़ाई का खतरा मोल लिया—और दिल न तोड़ने के लिए मैंने तुम्हारी मर्ज़ी के मुताबिक ही किया। परन्तु बेटे, मैं तुम से फिर कहता हूँ कि जब तक सुलेमान शिकोह न आ जाय—लड़ाई मत करना। अब चूँकि मैं कुछ नहीं कर सकता, सिर्फ़ खुदा से दुआ करता हूँ कि ये आँखें तुम्हें शहनशाहे हिन्द होता देखें। खुदा हाफ़िज़!"

परन्तु दारा की हालत बड़ी दुविधा में थी। उसे सूचना मिली थी कि अभी औरङ्गज़ेब का तोपख़ाना नहीं आ पाया है, इसलिए वह चाहता था कि तुरन्त उस पर टूट पड़े। मगर विश्वासघाती सरदारों ने औरङ्गज़ेब से यह तय कर लिया था कि जब तक उसकी तैयारी पूरी नहीं हो जाती, वे दारा को लड़ने से रोकते रहेंगे। यह भी संकेत तय हो चुका था कि ज्योंही औरङ्गज़ेब की तैयारी मुकम्मिल हो जायगी तो औरङ्गज़ेब तीन फ़ायर करेगा। जो रणभेरी का संकेत होगा। इसलिए सलाहकारों ने कहा—"हुज़ूर, अभी शुभ मुहूर्त में तीन दिन हैं, आज से चौथे दिन आपके सितारे इतने बुलन्द हैं कि आपकी फ़तह को दुनिया में कोई नहीं रोक सकता।" दारा भी मन में सुलेमान शिकोह के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। इस प्रकार दारा लश्कर लिए चुपचाप और दो दिन तक दुश्मन के सामने पड़ा रहा। तोप की बात

दी, पर दिल्ली में धारा ने मार कर दिया। उसी दिन आधी रात को औरंगज़ेब के लश्कर में तीन बार नक्कारा बजा। जो उसकी जंग की पूर्णतः तैयारी की सूचना थी। इस संकेत के साथ ही दारा की फौज में भी तैयारियाँ होने लगीं—और लोग कहने लगे—देखें क्या होता है।

: ५१ :

सामूगढ़ का युद्ध

उस दिन २६ मई थी। सूर्योदय से प्रथम ही औरंगज़ेब अपने पूरे लश्कर के साथ धीरे धीरे आगे को बढ़ा। उसने यथास्थान अपने लश्कर को व्यूहबद्ध कर लिया था। अपनी सारी सेना के उसने पाँच भाग किए। वह सेना के मध्य भाग में ऊँचे हाथी पर बैठा था। उसके गिर्द पन्द्रह हजार चुने हुए शरीररक्षक सवार थे, जो सब तेगों, तीरकमान बन्दूक और तलवारों से सुसज्जित थे। दाहिनी ओर उसके बेटे सुलतान मुहम्मद की कमान में पन्द्रह हजार वैसे ही जवाँमर्द सवार थे तथा उसके सहायतार्थ औरंगज़ेब का दूधभाई मीरजुमला भी था, जो बड़ा साहसी, विश्वासी और मुस्तैद सिपाही था और जिसे उसी समय खाँ बहादुर का खिताब दिया गया था। मुहम्मद सुलतान के दाहिनी ओर नजाबत खाँ और दूसरे सरदारों के अधीन पन्द्रह हजार फौज का एक तीसरा दस्ता था। औरंगज़ेब के बाईं ओर मुरादबख्श पन्द्रह हजार वीर और सुसज्जित सवारों सहित मुस्तैद था। वह एक ऊँचे हाथी पर, जिसकी सोने की अम्बारी धूप में सूर्य की भाँति चमचमा रही थी, बैठा था। उसकी बगल में उसका छै साल का बेटा बैठा भी था। पाँचवाँ दस्ता मुराद के बाईं ओर पन्द्रह हजार सिपाहियों का सुयोग्य सेनापतियों की अधीनता में था। इसके बाद मुराद के बाईं ओर खजाने से भरे हाथी, माल असबाब, गाड़ी, ऊँट, बैल आदि थे और सबके पीछे तोपखाना था।

शाही फौज मीलों धीरे धीरे चलने के बाद एक उजड़े हुए गाँव के पास यह लश्कर पहुँचा। यह जगह ज़रा ऊँची थी। वहाँ औरंगज़ेब ने सेना को रोक दिया और तोपखाना आगे लाने का हुक्म दिया। ऊँचे टीलों पर तोपें लगा दी गईं, उनके पीछे बन्दूकची और उनके पीछे ऊँट खड़े किए गए। इन ऊँटों पर चक्करदार तोपें थीं। इनके पीछे पूर्वोक्त व्यूहबद्ध सेना खड़ी हुई। सेना के दाएँ बाएँ कुछ हल्की तोपें गुप्त रीति से लगाई हुई थीं।

दारा ने अपना तमाम तोपखाना सामने एक पंक्ति में सुसज्जित किया था। उसने तोपों की गाड़ियों के पहियों में जंजीरें बंधवा दी थीं कि जिससे दुश्मन उनका उल्लंघन करके भीतर फ़ौज में न घुस सके। इनके पीछे पच्चीस हज़ार पैदल बन्दूकचियों की एक कतार खड़ी थी, जिनके लिए यह तोपखाना एक अच्छी-खासी दीवार थी। इन बन्दूकचियों के बाद पाँच सौ ऊँटों पर चक्करदार तोपें थीं, और इनके पीछे पचास हाथियों की पंक्ति थी। हाथियों के पीछे अट्ठाइस हज़ार सवार खड़े थे। इनके पीछे दारा सिंहल द्वीप के एक बहुमूल्य हाथी पर सवार था। उसके पीछे अनगिनत हाथी थे जिन पर नक्कारे, निशान और बाजे-गाजे के सामान थे। दारा के दाहिनी ओर रामसिंह राठौर अपने पन्द्रह हज़ार वीर सवारों के साथ था। उसके दाहिनी ओर खलीलुल्ला खाँ तीस हज़ार शाही सेना की कमान लिए मुस्तैद था। दारा के बाईं ओर वीर रुस्तम खाँ दक्खनी अपनी पन्द्रह हज़ार सेना के साथ था और उसके बाईं ओर राव छत्रसाल पन्द्रह हज़ार राजपूत सूरमाओं के साथ था। सारी सेना की सज, प्रातःकाल की धूप में चमचमाते हथियारों, रंगबिरंगे झण्डों और निशानों से अत्यन्त शोभनीय मालूम पड़ रही थी।

इस प्रकार सेना का यह व्यूह आधुनिक रण-विद्या से बिलकुल ही भिन्न एक ऐसे तरीके से रचा गया था कि एक दस्ते से दूसरा दस्ता जुड़ा हुआ था। जैसे जंगल में वृक्ष एक पंक्ति में खड़े हों। इस समय

दारा के साथ पचास हजार सवार थे। राजपूत सैनिकों और दारा के ईमानदार पक्षपातियों पर ही इस सेना की पूरी शक्ति निर्भर थी। पर दुर्भाग्य से उसकी आधी सेना ऐसों की थी जिनपर बिल्कुल भरोसा नहीं किया जा सकता था। उसके अनेक मुखियों को औरंगजेब ने फोड़ लिया था जिनमें खलीलुल्ला खाँ प्रमुख था, जिसकी कमान में तीस हजार सेना थी। उसके तोपची भी भरोसे के न थे और सामान ढोने वाले जानवर भी बेकार से थे।

परन्तु औरंगजेब के साथ अनुभवी लड़ाकू वीरों का एक अच्छा जमाव था। उसके श्रेष्ठ तोपखाने का मीरजुमला के योरोपियन तोपची संचालन कर रहे थे। गोलाबारूद भी उसके पास काफी था। अनुशासन और संगठन भी उसका अपूर्व था।

औरंगजेब के आगे बढ़ते हुए लश्कर को देख कर भी दारा ने सेना को आगे नहीं बढ़ाया और जब औरंगजेब ने सेना को एक जगह सुसज्जित करके खड़ा कर दिया—तब भी दारा आगे नहीं बढ़ा। दोनों सेनाएँ अभी भी काफी फासले पर थीं और तोप की मार से परे थीं।

आठ बजे दारा ने तोपों पर बत्ती देने का हुक्म दिया और उसकी भारी तोपें एकदम आग उगलने लगीं—परन्तु यह भारी भूल थी। तोपों की यह मार व्यर्थ जा रही थी। गोले दुश्मन तक न पहुँच कर खेतों में गिर रहे थे। गोला-बारूद व्यर्थ नष्ट हो रहा था। परन्तु तोपों की मार जारी थी। उनकी गर्जना से कानों के पर्दे फटे पड़ते थे। परन्तु उनसे क्या लाभ हो रहा है यह देखने वाला कोई न था।

इसके जवाब में औरंगजेब ने थोड़े से जमदार बम चलाए और चुप हो रहा। जब पहला उभार खतम हो गया तो औरंगजेब की सेना से एक तोप छोड़ी गई। यह विश्वासघातियों के लिए संकेत था। दारा ने फिर फायर की आज्ञा दी। उसकी समाप्ति पर औरंगजेब ने दो फायर किए, परन्तु जब दारा की तोपें इस निरर्थक फायर कर चुकीं तो औरंगजेब ने तीन तोपें एक दम चलाईं।

यह संकेत इस बात का था कि वह वहीं से आगे बढ़कर वार पर आक्रमण नहीं करेगा—प्रत्युत वहीं जम कर मुकाबिला करेगा।

तबेव समझते ही विश्वासघातियों का सरदार कलीउल्ला खाँ घोड़ा दौड़ाता हुआ दारा के सामने आया और बारम्बार कोर्निश करता हुआ बोला—"हजरत, फतह मुबारक, हमने बिना एक बूँद अपने सिपाहियों का खून बहाए अपनी तोपों से दुश्मन के एक भारी हिस्से को मिट्टी और खून के नीचे सुला दिया है। दुश्मन में मुकाबिले का दम नहीं है। अब तो हुजूर बस आप ही हिम्मत और दिलेरी दरकार है। तोप दागने के फायर जारी रखने की अब कुछ जरूरत नहीं। अब तो हमें आगे बढ़ कर दुश्मन पर एकदम हमला बोल देना चाहिए।"

दारा इस विश्वासघाती के दाँवपेंच समझने की योग्यता नहीं रखता था।

उसने तुरन्त तोपों का फायर बन्द कर देने की आज्ञा दी और सेनापति रुस्तम को बुलाकर उसकी राय माँगी।

रुस्तम खाँ एक वीर और सच्चा सेनापति था। उसने कहा—"हुजूर, यह तजवीज निहायत खतरनाक है। बेहतर यही है कि हम इस बात की बाट देखें कि दुश्मन हम पर हमला करे। हमारी फौज मुस्तैद और मजबूत है। जब दुश्मन चढ़ कर आएगा, हम पूरी ताकत से उसका मुकाबिला करेंगे और उसे तहस-नहस कर डालेंगे।"

परन्तु इस सही और बहुमूल्य सम्मति का मज़ाक उड़ाते हुए कलीउल्ला खाँ ने कहा—"मुझे रुस्तम खाँ जैसे बहादुर सिपहसालार से यह उम्मीद न थी कि वह अपने मालिक को ठीक उस वक्त जब कि फ़तह उसके नजदीक है, ऐसी बुजदिलाना राय देगा। मैंने सैकड़ों लड़ाइयाँ देखी हैं। हमले का इन्तजार करना क्या माने? अभी, जब भारी तोपों ने दुश्मन की फौज को पामाल कर दिया है तो फिर क्या वजह कि हम डरे हुए यहाँ खड़े रहें और आगे बढ़कर उसे न खदेड़ें।"

दारा ने फिर रुस्तम का एक शब्द भी नहीं सुना। उसने उसे अपने

दस्ते को लेकर आक्रमण का हुक्म दिया और तोपों की जंजीरें खोल दीं। स्वामी की आज्ञा पाकर रुस्तम खाँ दाएँ पक्ष पर खड़ी अपनी सेना को लेकर नंगी तलवारें लेकर शत्रु पर टूट पड़ा। इस आक्रमण का करारा मुकाबिला औरंगजेब की बन्दूकची सेना ने, जिसका सरदार शफशिकन खाँ था, किया। यह अवरोध ऐसा करारा था कि रुस्तम बहुत कोशिश करने पर भी औरंगजेब की तोपों तक न पहुँच सका। अब अवसर देख साहसी रुस्तम खाँ दाहिनी ओर को मुड़ा और मध्य भाग में अवस्थित औरंगजेब पर झपटा। यह देख औरंगजेब की दाहिनी बाजू के रक्षक बहादुर खाँ ने रुस्तम की राह रोक ली। बहुत घमासान द्वन्द्व युद्ध हुआ और बहादुर खाँ घायल होकर गिरा। इधर इस्लाम खाँ और शेख मीर उसकी सहायता को दौड़ पड़े। अब रुस्तम खाँ भारी विरोध में घिर गया। वह घायल भी हो गया था, थक भी गया था। फिर भी वह अपने दस-बारह वीरों के साथ तलवार से राह बनाता दुश्मन की सेना के मध्य भाग में घुसता चला गया और वहीं खेत रहा। बचे हुए घायल और थके हुए सैनिक तितर बितर हो पीछे लौटे।

इस समय औरंगजेब के बाएँ पक्ष में घनघोर युद्ध मचा हुआ था। वहाँ छत्रसाल हाड़ा के नेतृत्व में शाही सेना पूरी ताकत से मुराद को दबोच रही थी। राव छत्रसाल चाहते थे कि मुराद और औरंगजेब की सेना में दरार पड़ जाय।

वह चुने हुए राजपूतों को ले तलवारें चमकाता हुआ तीर की भाँति दुश्मन की फौज के मध्य भाग तक बैंधता चला गया और औरंगजेब पर टूट पड़ा। मुराद और औरंगजेब के बीच दरार पड़ गई। परन्तु औरंगजेब के शरीररक्षकों ने ढालों की दीवार खड़ी कर राजपूतों को रोका। राजपूतों की उन वीरों के सामने एक न चली। छत्रसाल हाड़ा अपने चिर शत्रु नजाबत खाँ को खोजते चीरते के लिए उसे ढूँढ़ रहा था। नजाबत खाँ भी पास ही था—वह खून भरी तलवार लिए वीरों के दल बादल चीरता, छत्रसाल की आँखें निकालने को छटपटा

रहा था। कुतबशाह का घोड़ा औरंगजेब के हाथी के पास पहुँचा ही था कि नजाबत खाँ ने तलवार मारी। कुतबशाह ने पलट कर धावा फेरा, इसी क्षण नजाबत खाँ की आधी तलवार कुतबशाह की पाँस में घुस गई साथ ही कुतबशाह की तलवार नजाबत खाँ की छाती में। दोनों वीर एक साथ ही खून में लथपथ गिरे और रेलपेल मचाते हुए हाथियों के पैरों तथा घोड़ों की टापों में कुचल कर चटनी हो गए। शेष राजपूत भी छिन्न-भिन्न कट मरे।

: ५२ :

घमासान युद्ध

युद्ध के आरम्भ ही में दारा सेना के मध्य में अपनी जगह छोड़कर रुस्तम खाँ की मदद के लिए औरंगजेब की सेना के दाहिने पक्ष में घुस गया था। इससे भयानक गलती और क्या हो सकती थी। वा प्रधान सेनापति था और उसे समूची सेना पर संचालन और नियन्त्रण कायम रखना आवश्यक था—जिसका उसने तनिक विचार नहीं किया

वह नक्कारे पर डंका बजाता हुआ दुश्मन के सामने बढ़ता चल गया, जहाँ तोपें विकराल मुँह किए उसके स्वागत की प्रतीक्षा कर र थीं। वह क्षण भर बाद ही आगे वाले खतरे से बिलकुल ही अज्ञा था। वह सेना को बढ़ावा देता हुआ और सेनापतियों से बीरता। बातें करता हुआ बढ़ा चला जा रहा था। इस मूर्ख ने स्वयं आ आकर अपने तोपखाने को गोलाबारी करने से रोक दिया था। साधारण हानि न थी।

दुश्मन की तोपें चुप थीं। परन्तु ज्योंही दारा की सेना उनकी में पहुँची वे एक साथ गर्ज उठीं। उनके साथ ही बन्दूकचियों बन्दूकों और जम्बूरदार तोपों की बाढ़ ने दारा की बढ़ती हुई सेना एकाएक ही भून डाला। सारी फ़ौज में एकदम भगदड़ मच ग

दारा ने अब अपने संकट को समझा। उसने तुरन्त तोपों को सामने लाने और बन्दूकचियों तथा फरसियों को आगे आकर लड़ने का आदेश दिया, परन्तु अब समय चूक चुका था और उसकी सारी सेना की तरतीब बिगड़ चुकी थी। सिपाही जिधर उनका मुँह उठे उधर ही भाग रहे थे। परन्तु दारा ने हिम्मत नहीं हारी। वह बड़ी बहादुरी से आगे बढ़ता गया। उसने हाथ का संकेत करके सेना को आगे बढ़ने को कहा—तोपें तो आग बरसा रही थी, बन्दूक की गोलियाँ भूने डाल रही थी, और तीरों से आसमान पटा जा रहा था, परन्तु दारा हिम्मत करके अपने वीर साथियों के साथ आगे बढ़ता ही गया। उसने कहा—"बहादुरो, दुश्मन की तोपें छीन लो।" और वह अपने वीरों के साथ औरङ्गजेब की तोपों तक जा पहुँचा। अन्त में उसने तोपों पर कब्जा कर लिया और जबरदस्ती दुश्मन की फौज में घुस पड़ा और ऊँटों, प्यादों तथा बन्दूकचियों को काटता मारता औरङ्गजेब के सामने तक जा पहुँचा।

खतरा सिर पर देखकर औरङ्गजेब घबराया नहीं। उसने अपने उस्ताद शेख़मीर और दूसरे सेनापतियों को नई सेना देकर उस पर बगल से आक्रमण करने की आज्ञा दी। अब हाथापाई, तलवार और बर्छे चलने लगे। मरने वालों की चीख-पुकार, जानवरों का चिंघाड़ना, घायलों का तड़पना, गर्द-गुबार, गर्मी सबने मिलकर घनघोर युद्ध का भयानक रूप धारण कर लिया। दारा सब से ऊँचे हाथी पर बैठा निरन्तर हाथ से इशारा करके सेनापतियों को बढ़ावा दे रहा था। दुश्मन पीछे हटता जा रहा था और लाशों के ढेर लग रहे थे।

परन्तु इस युद्ध में भी एक बेतरतीबी थी। सिर्फ वे ही सिपाही लड़ पाते थे जो आगे होते थे। यद्यपि तीरंदाज बड़ी फुर्ती से तीर फेंक रहे थे, और आसमान तीरों से पटा हुआ था परन्तु वे तीर सब व्यर्थ जाते थे, शायद इन तीरों में एक तीर शत्रु को घायल करता था। दारा ने स्वयं इतने तीर बरसाए थे कि उसका तरकश खाली हो गया था।

औरङ्गज़ेब दूर नहीं था। वह हाथी पर बैठा अपने लोगों को उत्साहित कर रहा था। पर इसका कुछ भी परिणाम नहीं हो रहा था, लोग भाग रहे थे। अब उसके पास सिर्फ़ पाँच से सौ सिपाही बचे थे। पर उसने निर्भय होकर प्रत्येक सरदार का नाम ले-लेकर पुकारा—"भाइयों, ख़ुदा पर भरोसा करो, दक्खन यहाँ से बहुत दूर है—मरो या फ़तह हासिल करो," इसके बाद उसने आज्ञा दी कि इसके हाथी के पैरों में ज़ंजीर डाल दी जाय और ऊँचे स्वर से बोल उठा कि या तो यहीं जान दूँगा या फ़तह हासिल करूँगा।

दारा ने सोचा कि अब औरंगज़ेब पर धावा मारा जाय। वास्तव में यह उसके लिए अलभ्य अवसर था। परन्तु भूमि पथरीली और ऊबड़-खाबड़ थी। शत्रु के सवार खीलों और मैदानों में गिरोह बाँधे तीर बरसा रहे थे और उनके कारण तेज़ी से दारा बढ़ नहीं पा रहा था। उसकी सेना भी पंक्तिबद्ध नहीं थी। वास्तव में औरंगज़ेब लड़ने के योग्य नहीं रह गया था। परन्तु दुर्भाग्य दारा के साथ था। उसने सोचा अरा फौज को सुस्ताने का अवसर दे दिया जाय और सेना को व्यवस्थित कर लिया जाय। इसलिए उसने सेना को रुकने की आज्ञा दे दी। उसकी यह आज्ञा ही उसके सर्वनाश का कारण बन गई। विजय के मद में मस्त उसके सैनिक एकाएक रुकने की आज्ञा सुनते ही हाथ रोककर आश्चर्य से परस्पर देखने लगे और विजय का यह बड़ा भारी मुहूर्त टल गया।

: ५३ :

मुराद का संकट

दारा जब फिर से औरङ्गज़ेब पर आक्रमण करने का इरादा कर रहा था, तभी उसने देखा कि सेना के वाम पार्श्व में भारी हलचल मची है, अभी वह कुछ सोच भी न पाया था कि एक मुसाहिब हाँफता

हुआ वह समाचार आया कि नजाबत खाँ के हाथ से राव छत्रसाल मारे गए और उनकी फौज गिर गई है। दारा इस खबर को पूरी सुन भी न पाया था कि एक दूसरा समाचार मिला कि बहादुर रुस्तम खाँ, मुहम्मद सुल्तान और मीरबाबा बहादुर खाँ के हाथों मारे गए और उसकी सारी फौज भी भाग खड़ी हुई है।

दारा ने औरङ्गजेब पर छापा मारने का विचार त्याग दिया और बाईं ओर को रुख किया। भारी मार-काट करके मुहम्मद सुल्तान और मीरबाबा ने बहादुर खाँ को अपने पीछे धकेल दिया। उनकी सेना मैदान छोड़ भाग खड़ी हुई। दारा ने इन शत्रुओं को पछाड़ कर पीठ फेरी ही थी कि उसे सूचना मिली, कि रामसिंह राठौर बड़ी वीरता से शत्रु सेना में घुस गया है और बुरी तरह घिर गया है। वह उधर बढ़ा। रामसिंह मुराद बख्श से जोधा से रहा था। मुराद बख्श एक वीर योद्धा था—परन्तु रामसिंह भी एक बाँका वीर था। दोनों वीर बढ़-बढ़ कर हाथ मार रहे थे। जिस रास्ते रामसिंह ने शत्रु की सेना को भेद कर प्रवेश किया था, उस रास्ते लाशों के अम्बार लगे थे। मुराद की जान उसके हाथों सकटे में आ गई थी। उसने मुराद की हरावल को तोड़ डाला था। तोपखाना छीन लिया था और लहू-भरी तथा हवा में खून से भरी तलवार हिलाता वह मुराद के हाथी पर आ धमका था। एक ही बार में उसने महावत को मार गिराया था और शाहजादे के चेहरे पर तीन घाव कर दिए थे। यदि मुराद बख्श फौलाद की अम्मारी में न होता तो उसके टुकड़े टुकड़े हो गए होते। मुराद यद्यपि वीर था, परन्तु इस समय वह बड़े दबाव में फँस गया था। उसके पास बहुत कम सेना बच रही थी और महावत मर चुका था। वह स्वयं ही अपने हाथी को रेल रहा था। साथ ही अपने छः वर्ष के नन्हें बालक की रक्षा भी कर रहा था जिसे उसने इस युद्ध के मैदान में साथ रखने का खतरा उठाया था। बालक युद्ध का मनोरंजक खेल समझ रहा था, वह बारम्बार हौदे से मुँह निकाल कर झाँकता

था। मुराद ने अपनी टाँगों में उसकी गर्दन दबा ली और अपनी ढाल उसकी पीठ पर टाँग दी। फिर वह अपने भयानक शत्रु रामसिंह का मिकट मुकाबिला करने लगा। जो उसके हौदे की रस्सियाँ काटने की चेष्टा कर रहा था। वीर रामसिंह अपने राजपूत योद्धाओं के साथ घोड़े से कूद पड़ा और अपनी तलवारों और भालों से अम्बारी की रस्सियों को काटने लगा। हाथी घायल होकर चिंघाड़ने लगा और मुराद को अब जीवन की कुछ भी आशा न रही। परन्तु उसने उसी समय साहस करके एक तीर मारा जो रामसिंह की छाती को चीर कर पार निकल गया। रामसिंह तुरन्त बेदम होकर हाथी के पैरों में लुढ़क गया, जिसे बौखलाए हुए हाथी ने कुचल डाला।

अपने वीर स्वामी को इस प्रकार मरते देख राजपूत बौखला उठे। वे जीने-मरने की चिन्ता छोड़ मरने-मारने लगे। दारा अभी वहाँ पहुँच भी न पाया था कि इस वीर के मरने की सूचना मिली। वह तेजी से मुराद के हाथी की ओर लपका। यद्यपि वह औरङ्गजेब को पकड़ लेना चाहता था पर मुराद की गिरफ्तारी भी वह कम महत्त्व की नहीं समझता था। मुराद अब भी राजपूतों से घिरा हुआ था और उसके बचने की कोई आशा न थी। उसकी सेना छिन्न-भिन्न हो चुकी थी।

परन्तु होनहार कुछ और ही था। इस समय खलीलुल्लाह खाँ, जो तीस हजार ताजा और उत्तम सवारों का नायक था और जो यदि ईमानदारी दिखाता तो हिन्दुस्तान की बादशाहत का नक्शा ही कुछ और होता। परन्तु उसने अपनी सेना को बिल्कुल लड़ाई से अलग रखा। सेना लड़ने के लिए उतावली हो रही थी परन्तु वह उसे यही दम-दिलासा दे रहा था कि अभी नहीं। अभी वक्त नहीं आया है। वह गुनहगार मिकट ही खड़ा तमाशा देखता रहा।

अब ज्यों ही उसने दारा को इस प्रकार मुराद पर धावा करते देखा, वह विश्वासघाती घोड़ा दौड़ाता हुआ दारा के सामने आया और

दस्तबस्ता होकर बोला—"मुबारकबाद हज़रत सलामत, मसनदमुशिक़ार, हुज़ूर को बख़ैर बसलामती फ़तह मुबारक हो। लेकिन हुज़ूर, यह तो फ़र्माइए कि ऐसे ख़तरनाक मौक़े पर, जब अम्बारी के आसपास से गोलियाँ और तीर पार हो रहे हैं, इतने बड़े हाथी पर क्यों सवार हैं। अगर ख़ुदा-न-ख़्वास्ता बेशुमार तीरों और गोलियों से कोई जिस्मे मुबारक को छू जाय तो हम लोगों को तो मुँह दिखाने का भी ठिकाना न रहेगा। ख़ुदा के वास्ते जल्द उतरिए और घोड़े पर सवार हो लीजिए। अब रहा ही क्या है, सिर्फ़ चन्द भगोड़ों को चुस्ती और मुस्तैदी से सीधा करना और औरंगज़ेब को गिरफ़्तार करना। मैं जानता हूँ कि हुज़ूर इस वक़्त थक चुके हैं मगर यही मौक़ा है। वह औरंगज़ेब थोड़े से साथियों के साथ खड़ा है। आइए और मेरे ताज़ा दम रिसाले के दस्ते को लेकर, जिसे मैंने अभी तक लड़ने से रोक रखा है, धावा बोल दीजिए।"

ग़रीब दारा बिना सोचे-समझे वह भारी भूल कर बैठा और हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हो गया। वह नहीं जानता था कि मैं हाथी से नहीं उतर रहा हूँ बल्कि हिन्दुस्तान के तख़्त को हाथ से गँवा रहा हूँ।

५४

दारा का पलायन

छत्रसाल हाड़ा और रामसिंह राठौर की सहायता के लिए दारा की सारी सेना को दाहिनी ओर मुड़ना और भारी अवरोध का सामना करना पड़ा था। इस लम्बी और थकाने वाली भागाभागी से सैनिक थक गए थे। तेज़ धूप में दम घोटने वाली आँधियाँ आ रही थीं और जलती हुई रेत उनके मुँह और आँखों में भर रही थी। प्यास बुझाने के लिए एक बूँद भी पानी उनके पास न था। इसी समय शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान एक मज़बूत दस्ता लिए दारा पर आक्रमण

करने के लिए आगे बढ़ा। इसके साथ ही दाहिनी ओर की विजयिनी सेना भी बढ़ी। सामने औरङ्गजेब की तोपें मुँह बाए तैयार खड़ी थीं। वास्तव में लड़ाई का अन्त आ ही चुका था। इसी समय दारा हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हुआ। परन्तु, हाथी के हौदे से दारा के उतरते ही फौज में कुहराम मच गया। पहले से आगे-पीछे गद्दारों ने चिल्लाना शुरू कर दिया कि दारा मारा गया। दारा के हाथी के हौदे को सूना देखकर फौज को भी यही विश्वास हो गया। सारा लश्कर, आँधी में जैसे बादल भागते हैं, इधर उधर भागने लगा। बहुत लोग जिन्हें प्रथम ही से इस काम के लिए तैयार रखा हुआ था, चिल्ला-चिल्ला कर यह कहते हुए भाग चले कि भागो-भागो, औरङ्गजेब नई फौज लिए आ रहा है।

दारा लश्कर को इस तरह भागते देख हैरान हो गया। अब उसे अपनी पहाड़-सी भूल समझ पड़ी और खलीलुल्लाह पर सन्देह हुआ। उसने हड़बड़ाकर इधर उधर देखा और पूछा—'खलीलुल्लाह कहाँ है ?"

परन्तु खलीलुल्लाह अब वहाँ कहाँ था। वह तो अपने लश्कर के साथ दौड़ा हुआ औरङ्गजेब की ओर जा रहा था। दारा अब सब समझ गया। वह क्रोध में पागल होकर उस विश्वासघाती को गालियाँ देने लगा। वह बारम्बार कहने लगा—'अब मैं उस कमीने कुत्ते और उसके बाल-बच्चों को जीता न छोड़ूँगा।' परन्तु शोक, वह सब गुस्सा व्यर्थ था। सेना में अब पूरे तौर पर उसके मर जाने की अफवाह फैल चुकी थी और सारी ही फौज में भगदड़ मची हुई थी। लड़ाई शुरू हुए अभी सिर्फ तीन ही घण्टे हुए थे, इतने ही में इतने बड़े महा साम्राज्य के भाग्य का फैसला हो गया। देखते ही देखते इतनी बड़ी बादशाहत उजड़ गई। वह मुगलों की मूर्खतापूर्ण अव्यवस्थित रणनीति का परिणाम था। चारों ओर घायल और मुर्दे सिपाही और हाथी, घोड़े, ऊँट पड़े थे। धूप चमक रही थी। दारा के मित्रों, सेनानायकों में

बहुत कम ऐसे थे जो लड़ रहे थे। बड़े-बड़े सरदार मारे जा चुके थे। बहुत सारे भाग चुके थे।

अब युद्ध-क्षेत्र में उसके बन्दी हो जाने का भय था। इसलिए उसने बचे हुए शुभचिन्तक साथियों की सम्मति से अविलम्ब युद्धस्थल को त्याग कर पलायन किया।

: ५५ :

भाग्य का हेर-फेर

औरङ्गजेब को अपनी विजय की कुछ भी आशा नहीं रही थी। उसकी सारी सेना भाग चुकी थी। कठिनाई से सिर्फ पाँच सौ आदमी उसके इर्द गिर्द रह गए थे। परन्तु वह जीवन-मरण की बाजी लगा चुका था। उसने लड़ते-लड़ते मर जाने का निर्णय किया था। अब उसकी आशा खलीलुल्लाह पर निर्भर थी, जिसकी उसे क्षण क्षण प्रतीक्षा हो रही थी। वह दूर तक आँखें फाड़-फाड़कर शत्रु की सेना की गतिविधि देख रहा था। चारों ओर तीर बरस रहे थे—गोलियाँ सनसनाती हुई उसके कान के पास से गुज़र रही थीं, परन्तु उसको इन सब की कुछ भी परवा न थी।

एकाएक उसे शत्रु सेना में परिवर्तन के चिह्न देख पड़े। उसने क्षणभर ही में देखा कि दारा का विशाल हाथी सूना है और क्षणभर बाद ही देखा कि शत्रु सेना में भगदड़ मच गई है, साथ ही उसने पश्चात् अपने वाम पार्श्व में गर्द का एक बादल उठता देखा। पहले तो उसे भय हुआ कि उसे गिरफ्तार करने को शत्रु की सेना आ रही है। वह सिहर उठा। परन्तु वह अपने चारों ओर शत्रुओं को भागते देख रहा था। भय और आश्चर्य से उसकी आँखें फटी पड़ रही थीं।

उसने दोनों हाथ आकाश की ओर उठा कर अपनी सेना को ललकारना आरम्भ किया—उसके आस-पास के वीर भी तलवारें ऊँची

करके 'अल्ला हो अकबर' का नाद कर उठे। इसके क्षणभर बाद ही उसने खलीलुल्लाह खाँ को सेना के आगे आगे आते देखा, वह हर्ष से खिल उठा।

खलीलुल्लाह खाँ के आधीन जो तीस हजार सेना थी उसमें से इस समय केवल पाँच हजार सेना इस विश्वासघात में उसका साथ दे सकी। अपने पाँच हजार गद्दार साथियों को लेकर उसने औरङ्गजेब को आकर मुबारकबादी दी। औरङ्गजेब ने तुरन्त विजय के नक्कारे पर डंका पड़ने की आज्ञा दे दी। दिशाएँ गूँज उठीं और औरङ्गजेब की भागती हुई सेना लौट पड़ी मुराद भी आगे बढ़ कर औरङ्गजेब से आ मिला। मुबारकबादी की झड़ी लग गई और सेना जयजय नाद कर उठी।

खलीलुल्लाह खाँ ने अदब से आगे बढ़कर औरङ्गजेब से कहा—"हजरत सलामत को फ़तह मुबारक।" औरङ्गजेब ने मुस्कुरा कर मुराद की ओर देखा और कहा—'यह सब आला हजरत की बहादुरी और दिलेरी का बाइस है जो तवारीख में हमेशा कायम रहेगा।" इसके बाद उसने खलीलुल्लाह खाँ का मुराद के सामने पेश करते हुए कहा—"यह अमीर तख्त का वह वफ़ादार ख़ादिम है जिसका सानी मुगलिया सल्तनत में मिलना नामुमकिन है। आला हजरत की फैयाज़ियों से भी यह पूरे तौर पर परिचित है और बखूबी जानता है कि अपने सरदार की खिदमत कैसे की जा सकती है।"

मुराद इन सब बातों को सुन कर खुश हो गया, फिर उसने खलीलुल्लाह खाँ की ओर खलीलुल्लाह खाँ ने मुराद की तारीफों के पुल बाँधे। परन्तु औरंगजेब ने बीच ही में बात काट कर कहा—"हजरत, अब सबसे जरूरी काम जो हमें करना है, वह दारा की गिरफ्तारी और उसकी खानगी पर कब्जा करना है।" उसने तुरन्त अपनी सेना को सुसज्जित किया। लड़ाई खत्म हो चुकी थी और वह अपनी विजयिनी (?) सेना को धीरे-धीरे आगे बढ़ाता हुआ दारा के खेमों तक आ पहुँचा। वहाँ आकर उसने आज्ञा दी कि खेमें चारों ओर से घेर लिए

जायें और उनके गिर्दागिर्द की जमीन खुदवाकर देखी जाय कि कहीं उनके नीचे बारूद न भरा हो। जब सब उसे अच्छी तरह तसल्ली हो गई तो वह मुराद बख्श के साथ हाथियों से उतर कर दारा के खीमों में प्रविष्ट हुआ।

औरंगजेब ने मुराद को दारा की मसनद पर बैठाया और सामने खड़े होकर मुस्कुराते हुए कहा—"मुबारक जहाँपनाह, यह हुजूर की बादशाहत का पहला दिन है।" इसके बाद उसने तीन बार कोर्निश की और हाथ बाँधे अदब से एक तरफ खड़ा हो गया।

इसके बाद खलीलुल्लाह खाँ की बारी आई और उसे बहुत कुछ इनाम इकराम के बाद वजीरे आजम बना दिया गया।

इसके बाद औरंगजेब चुने हुए विश्वस्त सेवकों और सरदारों के साथ सब पचड़ों और मूर्ख भाई को मनाने बनाने और खुशामदियों की बातों में उलझने को छोड़ कर स्वयं आवश्यक व्यवस्था करने को अपनी छावनी में चला। सच पूछा जाय तो अभी उसपर भारी जिम्मेदारियाँ थीं। उसने कुछ अफसरों को दारा की छावनी और माल असबाब, तोप, खीमे, खजाना, गोलाबारूद सब कुछ लूट-पाट कर कब्जे में करने को नियत कर दिया और बाकी सेना को उसने वहीं विश्राम करने और जश्न मनाने की आज्ञा दी। फिर वह अपने खीमे पर पूरे पहरे का प्रबन्ध करके अकेला उसमें चला गया। उसे अब बहुत से महत्त्वपूर्ण खत लिखने थे और बहुत नाजुक मसलों पर गौर करना था।

यह बादशाहों के भाग्य परिवर्तन करने वाली लड़ाई सिर्फ तीन घंटे ही में खत्म हो गई। शाही सेना की ओर के नौ राजपूत और उन्नीस मुसलमान उच्च पदाधिकारी मारे गए। बावन लड़ाइयों के विजेता बूँदी के छत्रसाल भी अपने भाई बन्दों समेत यहीं खेत रहे। ईरानियों और उजबकों के विरुद्ध बड़े बड़े भारी युद्धों का विजेता रुस्तम खाँ उर्फ फ़िरोज़ जंग भी इस युद्ध में काम आया। औरंगजेब की सेना का केवल एक उच्चाधिकारी मरा—आज़म खाँ—वह भी

किया। इस समय उसके साथ सिर्फ पाँच सौ सवार थे जिनमें बहुत से तो उसके घर के गुलाम और सेवक ही थे। बादशाह ने जो शाही खज़ाने से सोने की मुहरें लादकर उसके साथ भेजी थीं वह तथा अपने पास के हीरे जवाहरात और नकद रुपए आदि जो कुछ इस जल्दी में वह साथ ले सकता था ले लिए।

वह प्रतापी राजकुमार, आज सूर्योदय के समय तमाम भारतवर्ष का शहनशाह होने का स्वप्न देख रहा था और आज सुबह तक बड़े बड़े राजपुरुष जिसकी कृपाकोर के भिखारी थे—आज इस दीन दशा में घर से जा रहा था कि शत्रु को भी उस पर दया आ रही थी।

: ५७ :

आगरे में

आगरे पहुँचकर—नगर से दो मील दूर नूरमंजिल नामक एक बड़े बाग में औरङ्गज़ेब ने पड़ाव डाला। पहरे और जासूसों का पूरा प्रबन्ध करके उसने एक बार लश्कर पर गहरी दृष्टि डाली और उसे जशन मनाने की आज्ञा देकर अपने फैलाए हुए जालों के ताने-बाने पर विचार करने लगा।

सबसे पहिले—ज्योंही औरङ्गज़ेब को यह सूचना मिली कि दारा ने दिल्ली की ओर कूच किया है, उसने तुरन्त अपने साहसी और विश्वासी सरदार बहादुर खाँ की अधीनता में एक मजबूत फौज का दस्ता देकर उसके पीछे भेज दिया और आज्ञा जारी कर दी कि दिल्ली-आगरे के सब रास्तों पर चौकियाँ बैठा दो और कि कोई आदमी या कुछ भी सामान किसी भी रास्ते से दारा को न मिल पाए।

इसके बाद उसने बादशाह को एक ख़त लिखा—उसमें लिखा था—"दारा शिकोह की नज़रबंदी और ऐसा बर्ताव के बाइस थे जो जज़्बात पैदा हुए, उनके लिए औरङ्गज़ेब को बहुत ही रंज और

मकबूल है। हुजूर की तबियत अब अच्छी होती जाती है, इसके लिए हुजूर की खिदमत में मुबारकबाद अर्ज करने और मजमून इस मजा से कि जो कुछ इर्शाद हो उसकी तामील की जाय, यह खादिम आगरे में आया है।"

यह खत उसने अपने खास वफादारों के द्वारा बादशाह के पास उसी समय रवाना कर दिया, साथ ही प्रेम और सम्मान पूर्वक सैकड़ों निशानात भी भेज दिए।

दूसरा पत्र उसने शाइस्ता खाँ को लिखा जो बादशाह का साला और उसका मामा तथा आगरे में उसका सबसे बड़ा भेदिया और शुभचिन्तक मित्र था। वह एक अत्यन्त चतुर, बुद्धिमान और शक्तिशाली दरबारी था। उसे औरङ्गजेब ने लिखा—

"मुझे यह जानकर निहायत खुशी हो रही है कि जिस राज में आपके साथ हर वक्त की कमीनी हरकतें की थीं और जिसे आप दिल से नफ़रत करते थे, उससे आपके इस सेवक ने पूरा बदला ले लिया है। अब आप उन सब जरूरी मामलों पर तैयारी कर लीजिए जो आपको पोशीदा तौर पर पहिले ही बता दिए गए हैं। इसके बाद आप आगरे के कर्ता-धर्ता और मालिक हैं।"

यह खत रवाना कर देने के बाद वह कुछ देर तक चुपचाप कुछ सोचता रहा, फिर उसने एक और खत लिखा। यह खत उसने मीर जुमला को लिखा था—उसमें लिखा था "आपका मनसूबा हो गया, दुश्मन पामाल हो गए। अब आपको झूठ मूठ कैद रहने की कोई जरूरत नहीं है। आपके बाल-बच्चे दुश्मनों के हाथ से अब आज़ाद हैं। हमारे सच्चे खैरख्वाह शाइस्ता खाँ और प्यारी बहिन रोशनआरा ने उन्हें बखूबी आराम और हिफाजत से रखा है। लिहाज़ा, अब आप फौरन ही आगरे आकर मुझसे मिलिए, ताकि बहुत ही जरूरी मामलों पर गौर किया जाय—क्योंकि आप बखूबी जानते हैं कि आप ही मुल्क पाने की कुंजी हैं और आपकी आँख औरङ्गजेब की आँख है।"

यह खत उसने अपने दूधभाई मीरबाबा को देकर कहा—"इसे जितना जल्द मुमकिन हो किसी अपने खास आदमी के हाथों औरंगाबाद अभी रवाना कर दो और ताकीद कर दो कि जितनी जल्द मुमकिन हो वह खत को ठिकाने पहुँचा दे। मैं चाहता था कि यह खत तुम खुद ले जाओ मगर मैं तुम्हें दूर नहीं कर सकता—तुम्हारी मदद की मुझे और भी सख्त जरूरत है।"

मीरबाबा खत लेकर हँसता हुआ और सिर हिलाता हुआ चला गया।

औरङ्गजेब कुछ देर उसकी ओर देखता रहा—और मन-ही-मन यह बड़बड़ाया। इसके बाद उसने और एक खत लिखा—यह खत उसने मिर्जाराजा जयसिंह को लिखा—उसमें लिखा था—

"दारा बिल्कुल तबाह हो गया—और वह बड़ा लश्कर भी जिसका उसे भरोसा था—शिकस्त खाया हुआ कर हमारे कब्जे में आ गया अब वह ऐसी बेसरो सामानी से भागा जा रहा है कि सवारों का एक रिसाला भी उसके साथ नहीं है। उम्मीद है हम बहुत जल्द उसे गिरफ्तार कर लेंगे। इधर हजरत बादशाह सलामत इस कदर अलील हैं कि सिर्फ चन्द रोज के मेहमान हैं। इसलिए अगर आप हमारा मुकाबिला इस हालत में करेंगे तो नतीजा बजुज बरबादी के और हलाकत के कुछ न होगा। इसके सिवा—इस अबतर हालत में दारा की तरफदारी करना निहायत नादानी है। आपके हक में अब यही बेहतर है कि हमारे पास हाजिर हों और सुलेमान शिकोह को—जो बआसानी गिरफ्तार हो सकता है पकड़ कर हमारे हुजूर में पेश करें।" यह खत रवाना करके उसने अपनी कमर खोली और आराम किया।

दूसरा दिन निकला। एक-एक करके अनेक अमीर उमरा आकर नजर गुजारने लगे। सबसे प्रथम शाइस्ता खाँ ने आकर मुबारकबाद दी और बहुमूल्य भेंट पेश की। इसके बाद मुहम्मद अमीन खाँ ने जो कि मीरजुमला का बेटा था आकर कदमबोसी हासिल की। फिर और भी

अमीर उमरावों का तांता बँध गया। इन सबको पहिले ही ठीक कर लिया गया था। और अब, जब औरङ्गजेब ने उनका स्वागत सत्कार किया और उन्हें खिताब और जागीर बख्शी तो सब खुश हो गए। सिर्फ तीन अमीर ही बच रहे थे जो औरङ्गजेब से मिलने नहीं आए। एक दानिशमन्द खाँ जो एक विख्यात विद्वान था—दूसरा मुकर्रम खाँ जो शाही हकीम था और तीसरा असद खाँ जो शाहजहाँ का सिपाही वज़ीर था।

इन तीनों के नाम औरङ्गजेब की दृष्टि में चढ़ गए। परन्तु उसने प्रकट में अपने भावों को जाहिर नहीं होने दिया।

भेंट मुलाकातों के खतम होने पर सब सरदारों को मुराद की मुसाहिबी में छोड़कर वह अपने एकान्त खीमे में चला गया। वहाँ सबसे पहिले उसे बादशाह का खरीता मिला। उसमें लिखा था—

“बेशक आप ने जो कुछ किया, नालायकी और बेसमझी से पुर था। तुम पर तो हम हमेशा ही से शफ़क़त रखते हैं। अब तुमको हमारे पास फ़ौरन आना चाहिए, ताकि तुम्हारे मशविरे से उन उमूर का इन्तज़ाम किया जाय जो इस सल्तनत के बाइस वाक़अ और अक्सर हुए हैं।”

इस ख़त को पढ़कर औरङ्गजेब मुस्कुरा दिया और उसे एक ओर फेंक कर उसने दूसरा ख़त पढ़ा।

यह उसकी बहन रोशनआरा का था, उसमें लिखा था कि “ख़बरदार किले में आने का क़स्द न करना, तुम्हें मार डालने के तमाम सामान किये हुए हैं। बेगम ने सौ तातारी बांदियाँ जहाँ तहाँ छिपा रखी हैं, जो तुम पर अपनी नंगी नंगी तलवारें लेकर टूट पड़ेंगी और वे उज़बक गुलाम भी जो अपने हथियारों को बखूबी इस्तेमाल करना जानते हैं तुम्हारी घात में हैं।”

इस ख़त को पढ़कर उसके होठ सिकुड़ गए और उसने उसे मोड़-

रहा। फिर उसने अत्यन्त गुप्त रीति से शाइस्ता खाँ को बुला भेजा। जब दोनों कोठे में बैठे—बाहर कड़ा पहरा लगा दिया। एकान्त होने पर शाइस्ता खाँ खिलखिला कर हँस पड़ा।

औरङ्गजेब ने मुस्कुरा कर उसके दोनों हाथ पकड़ लिए और कहा— "मैं समझता हूँ—नये बादशाह बिल्कुल मौज में हैं।"

"जी हाँ, खूब हाथ रहे हैं, मुजरे हो रहे हैं।"

"बादशाह हैं, वे जो चाहें कर सकते हैं" औरङ्गजेब ने एक भेद भरी नजर से शाइस्ता खाँ की ओर देखा, फिर कहा—

"वे सबूत तैयार हैं।"

"वे हाजिर हैं।"

"शील मुहर और दस्तखत सब ठीक हैं?"

"देख लीजिए।"

उसने कुछ खत निकाल कर औरङ्गजेब के सामने पेश किये, और उसने खूब गौर से देखकर कहा—

"सुभान अल्लाह, बखूबी काम हो जायगा। तो मरे दरबार में आप खुद ये खत पढ़कर सुनाएँगे। मैंने हुक्म दे दिया है। मैं अभी दरबार किया चाहता हूँ।"

शाइस्ता खाँ ने स्वीकार किया। औरङ्गजेब ने एक कीमती मोतियों की माला गले से उतार कर शाइस्ता खाँ के गले में डालते हुए कहा—

"आप यह न समझें कि आपकी खिदमत का यह नाचीज बदला है, बदला तो मैं आपको दे ही नहीं सकता। मगर हाँ जब आप आगरे के हाकिम हो जायँगे तो जरा मुझे तसल्ली होगी। मगर इसके लिए आपको दो चार दिन अभी सब्र करना होगा।"

शाइस्ता खाँ ने हँसकर उठते-उठते कहा—"सब्र जितना कहिए मैं कर लूँगा—फिलहाल खुदा हाफिज।"

दोनों मामा भान्जे गले मिले। औरङ्गजेब इस वक्त अपनी बादशाही शान भी भूल गया।

नकीब ने खबर दी कि दरबार की तमाम तैयारियाँ हो गई हैं और दरबारी अमीर उमरा हाजिर हैं। औरंगजेब धीरे-धीरे उठकर दरबार वाले खीमे में गया। मुराद वहाँ पहिले ही मसनद पर बैठा था। औरंगजेब ने उसका आदाब बजाया और उसके इशारा करने पर बगल में अदब से बैठ गया। दरबार की कार्यवाही आरम्भ हुई।

औरंगजेब ने तमाम दरबारियों और अमीरों को सम्बोधन करके कहा—"आज आपको यहाँ देखकर हमें बहुत खुशी हुई है और हम तसलीम करते हैं कि हमें जो कुछ कामयाबी हुई है वह आप लोगों की मदद और जाफिशाना मशवरे से ही हुई है। इसके लिए हम आपके बहुत-बहुत ममनून हैं और आपको इत्मीनान दिलाते हैं कि ज्योंही सब गड़बड़ मिट जायगी आप लोगों के रुतबे और वसीके दुचन्द कर दिए जाएँगे और मुनासिब तौर पर शुक्रिया अदा किया जायगा। फिलहाल सोचना यह है कि सल्तनत का इन्तजाम कैसे किया जाय और हजरत सलामत जो बहुत जईफ और बीमार हैं जिनसे कि सल्तनत का बोझ उठा नहीं सकते, उनका क्या बन्दोबस्त किया जाय। हजरत ने हमें इर्शाद में तलब फर्माया है। आप लोग मुनासिब समझें तो किले में चलकर हुजूर की कदमबोसी हासिल करें और उनका हुक्म बसरोचश्म बजा लाएँ।"

इतने ही में एक कासिद ने आकर जमीन चूमी और अर्ज की—"हुजूर, शाइस्ता खाँ ने एक जासूस को एक खत के साथ गिरफ्तार किया है, जो किले से दिल्ली जा रहा था। हुक्म हो तो वह खिदमत में हाजिर किया जाय।"

औरंगजेब ने चकित होकर अपने चारों ओर देखा और कहा—"क्या उसे यहाँ बुलवाया जाय, या खिलवत में उसकी जाँच की जाय?"

शाइस्ता खाँ ने कहा—

"उसे यहीं जहाँपनाह के रूबरू हाजिर किया जाना चाहिए और भरे दरबार में वे चिट्ठियाँ खोली जानी चाहिए जिससे उनकी असलियत सबको मालूम हो जाय।"

अब लाचारी का भाव प्रकट करते हुए औरङ्गज़ेब ने मुराद की तरफ देखा। मुराद ने कहा—

"उसे इसी वक्त हमारे रूबरू हाज़िर किया जाय।"

क़ासिद हाथ बाँधकर लाया गया। वह ख़त जो उसके पास से बरामद हुआ था पेश किया गया। उसने तसलीम किया कि हज़रत बादशाह सलामत और बेगम साहिबा ने यह ख़त उसे देकर दारा के पास भेजा था। मुराद के हुक्म से शाइस्ता ख़ाँ ने खोलकर ख़त पढ़ा। उसमें लिखा था—"मेरे प्यारे बेटे, तुम आगरे से दूर न जाना, क्योंकि वह वक्त क़रीब है जब तुम देखोगे कि तुम्हारे बाग़ी और दग़ाबाज़ भाई उसी आदमी के हाथों अपनी करनी को पहुँचेंगे, जो बदक़िस्मती से उनका बाप है। कमीनी और जंगली हरकत करनेवाले मुराद और औरंगज़ेब जल्द क़िले में आयेंगे मगर एक बार अन्दर दाख़िल होने के बाद वे ज़िन्दा हो जायेंगे और दूसरे लोग उन्हें कन्धों पर उठाकर ले जायेंगे। उस वक्त मेरे प्यारे बेटे, तुम आगरे पहुँचकर आराम से हिन्दुस्तान पर हुकूमत करना।'

ख़त का मज़मून सुनते ही औरङ्गज़ेब के चेहरे का रंग फ़क़ हो गया। वह अपने पाँव पटकने लगा और हाथ मसनद पर मारने लगा। उसकी आँखों में भय और विस्मय का जैसे तूफ़ान आ गया हो। मुराद गुस्से से होंठ चबाने लगा। दरबारी दंग रह गए।

औरंगज़ेब ने इस तरह अपना सिर पकड़ लिया कि जैसे वह बहुत सोच में पड़ गया हो फिर एकाएक उत्तेजित होकर बोला—"नहीं, नहीं, हम यक़ीन नहीं कर सकते। यह ख़त जाली है, इसे दुबारा पढ़ा जाय। दुश्मन चाहते हैं कि हम अपने प्यारे बुज़ुर्गवार से दूर रहें। नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता, हम उनसे मिलने को ज़रूर ज़रूर जायेंगे।"

इस पर शाइस्ता ख़ाँ ने आँखें फ़र्श पर गड़ाकर कहा—

"हुजूर को इस तरह अपनी जान जोखिम में नहीं डालनी चाहिए। इसमें जो कुछ लिखा है नामुमकिन नहीं है।"

इसपर औरंगज़ेब ने कहा—"मैं चाहता हूँ कि सब अमरा इस खत की लिखावट पर ग़ौर करें और देखें कि कहीं यह खत जाली तो नहीं है।"

तमाम अमीरों ने खत को उलट-पलट कर देखा और एक राय होकर कहा—

"खत असली है और आपको किले में जाने का खतरा नहीं उठाना चाहिए।" इससे औरंगज़ेब ने बहुत रंज प्रकट किया और लाचारी का भाव प्रकट करके दरबार बर्खास्त किया। इसके बाद अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को चुपचाप शहर पर दखल करके किला घेर लेने के लिये दस्तो-दस्त रवाना कर दिया।

: ५८ :

क़ैद में

बादशाह ने जब यह सुना तो वह गुस्से से थर थर काँपने लगा। परन्तु उसका कोप निरर्थक था। उसकी हालत उस शेर के समान थी जो बूढ़ा और घायल हो और पिंजरे में बन्द हो। उसके पास न सेना थी—न सहायक। सारे दरबारी अमीर, जिन्हें उसने बड़ी-बड़ी जागीरें दी थीं और जिन्हें उसने भिखारी से अमीर बनाया था, उसे छोड़ गए थे। सिर्फ़ वज़ीर जाफ़र खाँ अकेला बादशाह के पास था। किले की रक्षा के लिए जो सेना नियत थी, उसके भी बहुत से सिपाही [illegible] गए थे।

बादशाह की उम्र अब अस्सी साल की थी और वह चालीस वर्ष राज कर चुका था। वह अपनी बाँदियों और महल की औरतों से घिरा था, जिनकी संख्या अब भी दो हज़ार के लगभग थी।

उसने अमीर असद खाँ से सलाह की। असद खाँ ही अब उसका सहारा था। उसकी औरङ्गज़ेब को फँसाने की सारी तदबीरें खाली जा चुकी थीं। असद खाँ ने सारे किले का एक चक्कर लगाया। किले के सब फाटक बन्द करा दिए और जो सिपाही मिले उनको पकड़ कर एक छोटी-सी सेना उसने सज्जित कर ली। फिरङ्गी तोपची अभी तक किले में मौजूद थे। उन्हें बुलाकर उसने तोपें तैयार कर उनसे औरङ्गज़ेब की फौज पर गोलाबारी करने का हुक्म दे दिया, जो अब किले के चारों तरफ घेरा डाले पड़ी थी और शहर पर जिसने अधिकार कर लिया था।

मुहम्मद सुलतान ने इन तोपों की कुछ भी परवाह न की। उसने उनका जवाब भी न दिया। उसकी फौज शहर के घरों की आड़ में आराम से अपना बचाव कर रही थी। परन्तु देर तक घेरा डाले पड़ा रहना औरङ्गज़ेब को पसन्द न था। गोलाबारी से भी किला तोड़ना सम्भव न था। क्योंकि घेरा डालने पर भी नतीजा कुछ न होता, यदि ये दोनों शिकवी भाई आगरे ही में रुके रह जाते तो उधर दारा को नई सेना भरती करने का अवसर मिल जाता। इसलिए औरङ्गज़ेब ने जमुना की ओर खुलनेवाली खिड़की के पास की बाहरवाली सब ज़मीन अधिकृत कर ली। इससे किले में जल जाने के साधन रुक गए और किले के सब स्त्री-पुरुष प्यास से तड़पने लगे। अब बाहर से किले में रसद भी नहीं पहुँच सकती थी और खाने-पीने की चीज़ों की भी बेहद तंगी हो रही थी। मुग़ल हरम जो केवल ऐश आराम का अभ्यस्त था, इस कष्ट और दिक़्क़त से सिर्फ दो ही दिनों में बेचैन हो उठा। किले में कुहराम मच गया। सब भूख-प्यास से घबरा उठे।

बादशाह ने बड़े दर्दभरे शब्दों में औरङ्गज़ेब को लिखा कि वह बूढ़े बाप को प्यासा न मारे। परन्तु औरङ्गज़ेब ने कोई जवाब न दिया। परन्तु बात केवल यहीं तक न थी। वे फिरङ्गी तोपची भी जो केवल पेट का धन्धा करते थे, औरङ्गज़ेब के जादू से न बच सके। तीन दिन-रात निरर्थक गोलाबारूद बरबाद करके एक दिन आधी रात के समय

मकान तोपची कमन्द के सहारे किले के बाहर कूद गया और उसके बाद उसके अन्य साथी भी। यह खबर जब बादशाह के अन्य खिदमतगारों और सिपाहियों को लगी तो वे भी एक-एक करके खिसक चले। प्रत्येक को अपनी जान के लाले लगे थे। अब तो जो कुछ जिसके हाथ लगा वही लेकर वह भाग निकला। खास खिदमतगार और खोजे—जो दीवाने खास और महलसरा पर मुकर्रर थे—वे भी भाग चले। इस प्रकार अपने समय का सबसे बड़ा और सबसे अमीर बादशाह शाहजहाँ इस समय असमर्थ बुड्ढा कैदी रह गया, जो अपनी ही परछाईं से डरता था और जिसे अपने प्राणों की आस नहीं दिखती थी। तीन दिन उसने बड़ी कठिनाई से काटे।

इसी समय उसे औरंगजेब का एक खरीता मिला। उसमें लिखा था—

"मुझे अफसोस है कि हुजूर के कदमों में मेरी तरफ से तकसीर हुई है। जिसकी वजह इसके सिवा कुछ नहीं कि मैं बीमार था और इसी वजह से हाजिरी से माजूर। इस अरसे में मेरे मनचले सिपाहियों ने कुछ ज्यादतियाँ की हैं। जिनके लिए मैं माफी का ख्वास्तगार हूँ और अर्ज करता हूँ कि हुजूर मेरे बेटे मुहम्मद सुल्तान को हुजूर में हाजिर होने और आदाब बजा लाने की इजाजत बख्शें। सेहत ठीक होने पर जिसमें बफज्ले खुदा अब देर नहीं है—मैं खुद बारयाबी का फख्र हासिल करूँगा।"

शाहजहाँ को डूबते को तिनके का सहारा मिला और उसे इसमें अपनी राजनीति की सफलता की कुछ आशा दीखी। उसने इस इल्तमास को स्वीकार कर लिया और बड़े ठाठ-बाट से मुहम्मद सुल्तान की अगवानी की तैयारी की गई तथा उसे भेंट देने को मूल्यवान खिलअत के थान भी तैयार किए।

बादशाह का विचार था कि इसी के बेटे को बहकाकर औरंगजेब को खतम कर दिया जाय। मगर वह नहीं जानता था कि उसे काफी

उस बेटे से वास्ता पड़ा है जिसकी तकदीर में पचास साल हिन्दुस्
की बादशाहत भोगनी और पृथ्वी के अमूल्य तख्ते-ताऊस पर बैठ
बदा था। औरंगजेब ने अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को समझा दि
कि किले में दाखिल होते ही फ़ौरन पहरेदारों को कत्ल कर देना
जल्द-से-जल्द भीतर दाखिल होकर तमाम नाके कब्जे में कर शाहन
इसके बाद किले में जो भी हथियारबन्द आदमी मिले, बिना ताम्म
कत्ल कर देना।

मुहम्मद सुलतान ने यही किया भी। किले का द्वार खुलते
अ नन फानन किले पर पूरी तौर पर कब्ज़ा कर लिया और किले
सब सिपाहियों को मौत के घाट उतार बादशाह के रंगमहल पर अ
विश्वस्त जनों का मुस्तैद पहरा बैठा दिया।

बादशाह को इस धोखेबाजी की बिल्कुल आशा ही न थी।
एक प्रकार से बेहोश होकर गिर गया। इसी समय मुहम्मद सुलतान
एक विश्वस्त अफसर के हाथ औरंगजेब का सन्देश बादशाह के
भिजवा दिया। जिसमें लिखा था—

"हुजूर, अब अपने रंगमहल में इतमीनान और आराम से
और सब किस्म की फ़िक्र और परेशानियों से अपने आपको बरी समझ
क्योंकि अब आप सल्तनत का बोझ उठाने के काबिल नहीं रहे
मैंने सल्तनत का तमाम बोझ अपने कन्धों पर उठा लिया है।"

बादशाह बदहवास थे। परन्तु बेगम जहाँआरा और वज़ीर अ
लों ने बादशाह को एक परामर्श दिया और कहा कि यदि यह यो
सफल हो जाय तो औरंगजेब का खात्मा ही है। डूबते को तिनके
सहारा। बादशाह ने एक विश्वस्त खोजे के हाथ मुहम्मद सुल
से कहलाया—

"तुम जानते हो कि तुमसे हम कितनी मुहब्बत करते हैं और
जानते हैं कि तुम कितने लायक हो। पस, हमने इरादा कर लिय
कि हम तुम्हीं को ताजोतख्त दें और हिन्दुस्तान का बादशाह बना

जिससे तमाम तैयारियाँ मौजूद हैं। लिहाज़ा तुम फ़ौरन हमारे पास आ जाओ।"

परन्तु बेचारा बूढ़ा बादशाह अपनी इस चाल में भी असफल रहा। मुहम्मद सुलतान नवयुवक तो था—परन्तु अत्यन्त बुद्धिमान और और विचारशील था। वह दादाजान की चिकनी-चुपड़ी बातों में नहीं आया। वह तो जानता था कि तमाम नगर, और दरबारी उसके बाप ने मुट्ठी में कर लिए हैं इसलिए बूढ़े बादशाह की बात में कोई दम नहीं है। वह इसके योग्य नहीं। इसके सिवा वह अच्छी समझ का नवयुवक था, इसलिए साहस भी न कर सका। इसमें सन्देह नहीं कि बूढ़े बादशाह के प्रति लोगों में इतनी श्रद्धा अब भी थी कि यदि मुहम्मद सुलतान अपने अधीन सेना के साथ बूढ़े बादशाह को लेकर किले से बाहर होता और बादशाह की जो कुछ सेना जो तितर-बितर हो गई थी, एकत्रित हो जाती और वे औरंगजेब पर आक्रमण कर देते तो सम्भव था कि औरंगजेब की सेना में विद्रोह फैल जाता और औरंगजेब भी पिता के सामने आने का साहस न करता। यह सम्भव हो सकता था कि दादा को कैद से छुड़ाने की प्रतिष्ठा के साथ तख्त भी मुहम्मद सुलतान को प्राप्त हो जाता। परन्तु उसके भाग्य में ग्वालियर के किले में कैदी होकर जीवन बिताना लिखा था। तख्ते-ताऊस पर बैठकर हिन्दुस्तान का राज्य करना नहीं।

उसने जवाब दिया—

"अब्बा की जानिब से मुझे हुजूर में हाज़िर होने की इजाज़त नहीं। बल्कि ताकीद की गयी है कि किले के कुल दरवाज़ों और बुर्ज़ों की कुञ्जियाँ चूर अपनी सुपुर्दगी में लेकर मैं यहाँ से बहुत जल्द वापस जाऊँ—क्योंकि वे हुजूर की कदमबोसी के निहायत मुश्ताक हो रहे हैं और सिर्फ़ इतनी ही देर है कि इस तरफ़ से इतमीनान हो जाय तो फ़ौरन आ जायँ।"

बादशाह लाजवाब होकर रह गया। परन्तु उसने एक बार फिर कहला भेजा—

"हम तुमसे तख्त की कसम खाकर कहते हैं और कुरान मजीद हमारे तुम्हारे दर्म्यान है कि अगर तुम इस वक्त ईमानदारी से पेश आओगे तो हम तुम्हीं को बादशाह बना देंगे। इस मौके को ग़नीमत जानो और फौरन चले आओ और दारा खान को कैद से छुड़ा लो और याद रक्खो कि इस तरीके आकबत के अलावा दुनिया में भी तुम्हें नेकनामी हासिल होगी। हम तुम्हें किले में पूरी तौर पर आने जाने की आज़ादी देते हैं।"

परन्तु मुहम्मद सुलतान पर इस करुण पुकार का भी कुछ असर नहीं हुआ। उसने कहला भेजा—

"ये सारी बातें बेकार हैं। हुजूर चाबियाँ भेज दें, वरना मुझे ज़बर्दस्ती उन्हें लेना होगा।"

बादशाह ने सब ओर से निराश होकर चाबियाँ अन्ततः मुहम्मद सुलतान के सुपुर्द कर दीं और यह इरादा प्रकट किया कि यदि उसपर हमला किया गया तो वह अपने अताबाशरा और लौंडियों और असद खाँ के साथ लड़ता हुआ अपनी जान दे देगा। अब असद खाँ ही उसका अकेला साथी रह गया था जो बादशाह की बेकसी पर आँसू बहाता हुआ नंगी तलवार हाथ में लिए बादशाह के कमरे के बाहर एक गुलाम की भाँति पहरा दे रहा था।

चाबियाँ भेजने के साथ बादशाह ने यह कहलाया कि—"अब औरङ्गज़ेब को यहाँ ज़रूर ही आना चाहिए और समझदारी भी इसी में है कि वह ज़रूर आकर हमसे मिले क्योंकि सल्तनत के बाब ज़रूरी इसरार हम उसे समझना चाहते हैं।"

५६

शह-मात

औरंगज़ेब बड़ी ही बेचैनी से मुहम्मद सुलतान के किले से लौटने की प्रतीक्षा कर रहा था। रह रह कर उसके मन में संदेह हो रहा था कि कहीं वह नवयुवक शाहज़ादा अपने दादा से मिल जाय, दग़ा न करे। वह क्षण-क्षण पर किले की ओर देखता और बड़बड़ा रहा था। उसका विश्वस्त अमीर एतबार ख़ाँ हाथ बाँधे चुपचाप उसकी यह हरकतें देख रहा था। औरंगज़ेब ने अधीर होकर पूछा—"क्या बात है कि मुहम्मद सुलतान के आने में देर हो रही है। दो दिन हो गए। क्या किले में कोई हंगामा हो गया है, या मुहम्मद सुलतान ने दग़ा की है।"

"दोनों ही बातें नामुमकिन हैं।" एतबार ख़ाँ ने धीरे से कहा। औरंगज़ेब ने उसे घूर कर देखा और बेचैनी से ख़ीमे में टहलने लगा।

इसी समय एक गुलाम ने मुहम्मद सुलतान के आने की इत्तला दी। उसने कहा—

"ख़ुदावन्द, शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान किले से लौट आए हैं।"

"तो उन्हें यहीं ले आ।"

गुलाम चला गया और मुहम्मद सुलतान ने आकर सलाम किया।

"चाबियाँ मिलीं?"

"जी हाँ," उसने चाबियाँ औरंगज़ेब के पैरों में डाल दीं।

"ख़ज़ाना?"

"हुक्म के मुताबिक बरताव करके उसपर अपनी सील-मुहर लगा दी है।"

"ठीक है। किले में अब कौन-कौन है?"

"सिफ़ हरम, औरतें, बच्चे, दारा खान और असद खाँ, कुछ खानाजाद।"

"असद खाँ अभी है? खैर, पर, तुम रोते हो?"

युवक ख्वाजासरे ने आँखें पोंछीं। उसने कहा—"दारा खान की आप से एक आरज़ू है।"

"कैसी आरज़ू?"

"यह खत है।" उसने खत औरंगजेब के हाथ में दिया और पीछे हट गया।

"हुजूर का मिजाज कैसा है?"

"सुना है—वे बच्चों की तरह ज़ोर-ज़ोर से रो रहे हैं।"

औरंगजेब ने बादशाह के खत पर दृष्टि डाली और कहा—"आह, अभी चन्द ज़रूरी मसले ग़ौर करने को रह गए हैं।" उसने आस्तीन से एक कागज़ निकाल कर कहा—'यह फर्मान लो और अभी जाकर आगरे के कोतवाल का चार्ज ले लो और शहर के तमाम दरवाजों पर सख़्त पहरा बैठा दो। बगैर तुम्हारे दस्ती परवाने के कोई शख्स या माल असबाब शहर से बाहर न जाने पावें न आने पावें। जाओ।"

मुहम्मद सुल्तान ने चुपचाप कागज़ लिया और सलाम करके चला गया। अब उसने एतबार खाँ की ओर रुख किया। उसने कहा—"एतबार खाँ, मैं तुम पर सबसे ज्यादा जोखिम का भारी काम सौंपना चाहता हूँ।"

"गुलाम को जो खिदमत सौंपी जायगी उसे वह जान देकर भी पूरी करेगा।" एतबार खाँ ने कहा। औरंगजेब ने कहा—"हमें तुमसे ऐसी ही उम्मीद है। तुम्हें मैं तमाम किला सौंपता हूँ। खबरदार रहो—हज़रत आला को आरामगाह महलसरा में रहने में कोई तकलीफ न हो। लेकिन फालतू आदमियों को बाहर निकाल दो और नज़र रखो कि बाहर का कोई आदमी या पैगाम किसी किस्म का अन्दर न पहुँचने पाए।"

"ऐसा ही होगा, हुजूर इत्मीनान रखें।"

"बेगम रोशनआरा को यहाँ हमारे हुजूर में भेज दो और वे जिस कदर सामान साथ लाना चाहें, ले आने दो।"

"जो हुक्म!"

"अपनी ज़रूरत के लिए जैसा मुनासिब समझो, नए पहरे और दरवाजे तैयार करा लो जिनके ताले पोशीदा हों, और नज़र रखो कि हज़रत सलामत अपनी ख़िलवतगाह से बाहर न आने पाएँ।"

"जो इरशाद!"

"जाओ, जितना मुनासिब समझो फौज ले जाओ और मामू शाइस्ता खाँ को अभी यहाँ भेज दो।"

एतबार खाँ ने तीन बार सलाम किया और धीमे से बाहर चल दिया।

औरंगज़ेब बड़ी देर तक हाथ मलता हुआ अकेला टहलता रहा। उसने अपने होठों ही में कहा—सिर्फ यह तलवार ही की लड़ाई नहीं है, दिमाग की भी है।

अब बादशाह के तमाम अधिकार छिन गए। वह शाही बन्दी हो गया। आगरे का वह अटूट खजाना, भारत के महाशक्तिशाली बादशाहों का तीन पुश्तों का धन औरंगज़ेब के हाथ आ गया।

: ६० :

बेमुरव्वती

घेरा होने के दूसरे दिन बादशाह को औरंगज़ेब का एक और खत मिला, उसमें लिखा था—

"यह बेमुरव्वती मुझसे इसलिए सरज़द हुई है कि हुज़ूर आलिया मेरी निस्बत हमारे अग्रज को मेहरबानी फर्माते थे और यह ज़ाहिर होता था कि आप विद्रोह के तौर व तरीके से हम सबसे नाराज़ हैं।

"सिर्फ हरम, औरतें, बच्चे, दादा जान और असद खाँ, कुछ ख्वाजासरा।"

"असद खाँ अभी है? खैर, हाँ, तुम रोते हो?"

युवक शाहजादे ने आँखें पोंछीं। उसने कहा—"दादा जान की आप से एक अर्ज है।"

"कैसी अर्ज?"

"यह खत है।" उसने खत औरंगजेब के हाथ में दिया और पीछे हट गया।

"हुजूर का मिजाज कैसा है?"

"सुना है—वे बच्चों की तरह जार-जोर से रो रहे हैं।"

औरंगजेब ने बादशाह के खत पर दृष्टि डाली और कहा—"आप अभी चन्द जरूरी मसले गौर करने को रह गए हैं।" उसने आस्तीन से एक कागज निकाल कर कहा—'यह फर्मान लो और अभी जाकर आगरे के तोशाखाना का चार्ज ले लो और शहर के तमाम दरवाजों पर मुस्तैद पहरा बैठा दो। बगैर तुम्हारे दस्ती परवाने के कोई शख्स या माल-असबाब शहर से बाहर न जाने पाएँ न आने पाएँ। जाओ।"

मुहम्मद सुल्तान ने चुपचाप कागज लिया और सलाम करके चला गया। अब उसने बहादुर खाँ को और तलब किया। उसने कहा—"बहादुर खाँ, मैं तुम पर सबसे ज्यादा जोखिम का भारी काम सौंपना चाहता हूँ।"

"गुलाम को जो खिदमत सौंपी जायगी उसे वह जान देकर भी पूरी करेगा।" बहादुर खाँ ने कहा। औरंगजेब ने कहा—"हमें तुमसे ऐसी ही उम्मीद है। मैं तुम्हें किला सौंपता हूँ। खबरदार रहो—हजरत आला को बाआराम महलसरा में रहने में कोई तकलीफ न हो। लेकिन फालतू आदमियों को बाहर निकाल दो और नजर रखो कि बाहर का कोई आदमी या पैगाम किसी किस्म का अन्दर न पहुँचने पाए।"

"ऐसा ही होगा, हुजूर इत्मीनान रखें।"

"बेगम रोशनआरा को यहाँ हमारे हुजूर में भेज दो और वे जिस कदर असबाबमाल साथ लाना चाहें, ले आने दो।"

"जो हुक्म।"

"अपनी जरूरत के लिए जैसा मुनासिब समझो, नए धावक और हरकारे तैयार करा लो जिनके हालात पोशीदा हों, और नज़र रखो कि हज़रत सलामत अपनी ख्वाबगाह से बाहर न आने पाएँ।"

"जो इर्शाद।"

"जाओ, जितना मुनासिब समझो फौज ले जाओ और मामू शाइस्ता खाँ को अभी यहाँ भेज दो।"

एतबार खाँ ने तीन बार सलाम किया और धीमे से बाहर चल दिया।

औरङ्गजेब बड़ी देर तक हाथ मलता हुआ अकेला टहलता रहा। उसने अपने होठों ही में कहा—सिर्फ यह तलवार ही की लड़ाई नहीं है, दिमाग की भी है।

अब बादशाह के तमाम अख्तियार छिन गए। वह शाही बन्दी हो गया। आगरे का वह अटूट खजाना, भारत के महाशक्तिशाली बादशाहों का तीन पुश्तों का धन औरङ्गजेब के हाथ आ गया।

: ६० :

बेअदबी

कैद होने के दूसरे दिन बादशाह को औरङ्गजेब का एक और खत मिला, उसमें लिखा था—

"यह बेअदबी मुझसे इसलिए सरजद हुई है कि हुजूर बावजूद मेरी निस्बत हमारे दुश्मन को मेहरबानी फर्माते थे और यह इर्शाद होता था कि दारा शिकोह के और न वली के ही हम कभी मानते हैं।

मगर मुझे पुख्ता खबर मिली है कि हुजूर ने मरहठियों से बचे हुए दो हाथी उसके पास भेजे हैं, जिनसे वह नई फौज तैयार करके इस अज़ीम बग़ावत को तवालत दे। पर हुजूर ही गौर फर्माएँ, कि मुझसे इन हरकतों के—जो फर्जन्दों के मामूली तरीके के खिलाफ और उसका मालूम होती हैं—सरज़द हो जाने का बाइस क्या दारा शिकोह की मुहब्बत नहीं है? इन बातों का सबब—कि हुजूर कैद किए गए और फर्जन्दाना खिदमत बजा लाने के लिए मैं इतनी देर तक हुजूर की खिदमत में हाजिर नहीं हो सका? हुजूर से बकमाल माज़रत इल्तजा करता हूँ कि मेरी इस हरकत की ताज्जुबअंगेज़ ज़ाहिरी सूरत पर ख़याल न फर्माकर सिर्फ चन्द रोज़ के लिए सब्र के साथ इसे बर्दाश्त करें। फिर ज्योंही दारा शिकोह चैन व अमन में ख़लल अन्दाज़ होने और हुजूर को और मुझको तकलीफ पहुँचाने के काबिल न रहेगा, त्योंही मैं खुद-ब-खुद किले की तरफ दौड़ा चला आऊँगा और हुजूर के कैदखाने का दरवाज़ा अपने हाथ से खोलकर हाथ बाँध अर्ज़ करूँगा कि अब कुछ रोक-टोक नहीं है।"

खत को पढ़कर बूढ़े बादशाह ने दोनों हाथों से अपनी आँखें ढाँप लीं और उनकी काँपती हुई उँगलियों के बीच से आँसुओं की धार बहने लगी। बड़ी देर तक रो लेने के बाद उनका मन कुछ हल्का हुआ तो उन्होंने दूर पर चाँदनी में बिखरे हुए ताज की ओर दृष्टि की। फिर एक ठण्डी साँस खींचकर वे मसनद पर लुढ़क गए।

: ६१ :

अगला कदम

बूढ़े बाप को कैद कर, किले की नाकेबन्दी मज़बूत कर, चारों ओर जासूसों का जाल बिछा, आगरे की सूबेदारी शाइस्ता खाँ को सौंप, आगरे का तमाम ख़ज़ाना साथ लाद, औरंगज़ेब ने मुराद को संग ले

दारा के पीछे दिल्ली की राह पकड़ी। आगरे में उसने केवल दस दिन मुकाम किया था। इसी बीच में आगरे का उसने सारा बन्दोबस्त ठीक ठीक कर लिया था—और अब वह अपने शिकार के पीछे था। उसने तीन मील चल कर मथुरा में मुकाम किया।

मथुरा में रुकने के उसके दो उद्देश्य थे। एक यह—कि वह, दिल्ली को जो सन्देश भेजे गए थे उनके जवाब की प्रतीक्षा में था, दूसरे, वह मुराद से भी अब निबट लेना चाहता था। क्योंकि प्रथम तो अब मुराद की कोई आवश्यकता ही न रह गई थी, दूसरे लश्कर में भांति भांति की अफवाहें फैल रही थीं। अत्यन्त गुप्त रखने पर भी औरंगजेब के इरादों को लोग भाँप गए थे और लश्कर में छोटे बड़े इशारे से अपने मनोभावों को प्रकट करने लगे थे। इसके अतिरिक्त मुराद के भी कान नित्य भरे जाते थे। वह मूर्ख, अविचारी, ईर्ष्यालु और हठी तो था ही, अब अपने को बादशाह मानकर मनमानी कार्यवाही करने लगा था। वह औरंगजेब को कभी-कभी बहुत तुच्छ दृष्टि से देखता, बहुधा उसकी इच्छाओं का निरादर कर देता। उसके दरबारी अमीरों ने उसे यह कहकर भड़का दिया था कि धीरे-धीरे सारी हुकूमत उसके हाथ से निकल कर औरंगजेब के हाथ चली जा रही है और वही सर्वेसर्वा बनता जा रहा है। इन सरदारों के भड़काने पर चढ़कर वह एक दो बार खुल्लम-खुल्ला औरंगजेब का विरोध कर चुका था। उसने अपनी सेना भी बढ़ा ली थी और बहुधा वह काम बिना औरंगजेब से पूछे कर डालता था। परिस्थिति नाजुक होती जाती थी इसलिए उसने अब मुराद के झमेले को तुरन्त ही तय कर डालने का ही निर्णय कर डाला था। औरंगजेब की तीखी नजर में भूत भविष्य सभी उपस्थित था और इसीलिए अब अविलम्ब उसने भयंकर साहस कर गुजरने का निश्चय दृढ़ कर लिया।

आगरे से चलने के समय भी मुराद ने कुछ दुःख की थी। उसके दरबारी अमीरों ने कहा था—"आपको अब दारा के पीछे जाने की

क्या जरूरत है। आगरे में ही रहिए, औरंगजेब को जाने दीजिए।" औरंगजेब बहुत ऊँच-नीच समझ कर उसे साथ ले आया था। परन्तु उसने अपना लश्कर और छावनी औरंगजेब से अलहदा रक्खी थी। औरंगजेब आगरे से मथुरा तक मुराद की खुशामद में लगा रहा। कभी फल फूल भेजता, कभी कोई सौगात। वह बारंबार मिजाज पुछवाता। इन सब बातों का यह असर पड़ा कि मुराद औरंगजेब पर प्रसन्न हो गया।

ख्वाजा शाहबाज खाँ, जो मुराद का गुलाम और एक वीर पुरुष था, औरंगजेब के सब इरादे जान गया था। उसने भी अपने जासूस लगा रखे थे और ऐसा बन्दोबस्त कर लिया था कि मथुरा पहुँच कर ज्योंही औरंगजेब मुराद के खीमे में पहुँचे—उसे कत्ल कर डाला जाय। परन्तु औरंगजेब इससे असावधान न था। शाहबाज खाँ की मर्मभेदिनी दृष्टि को वह समझ गया था। इसी से उसने निश्चय कर लिया था कि अब देर करना निरापद नहीं है।

उस दिन पन्द्रह जून थी। गर्मी बेहद थी, दिन छिपने में अभी देर थी मगर सूरज की चमक और लू की भयानकता में कुछ भी कमी न आई थी। परन्तु औरंगजेब को इन सब प्राकृत आपदाओं की जरा भी परवाह न थी।

लश्कर की व्यवस्था से अवकाश पाते ही उसने मीर आतिशकुली खाँ को बुला भेजा। खीमे पर कड़ा पहरा लगा था। कुछ देर वह चुपचाप टहलता रहा और मीर हाथ बाँधे नम्र भाव से खीमे के एक कोने में खड़ा उसकी भावभंगी देखता रहा। एकाएक औरंगजेब ने रुक कर तेज आँखों से उसे घूर कर कहा—

"तो तुम हर तरह तैयार हो?"

"क्या आज ही?" मीर ने कम्पित कंठ से पूछा।

"हाँ" औरंगजेब ने धीर स्थिर स्वर से कहा और गले से एक अत्यन्त कीमती हीरों का हार उतार कर उसके हाथ में पकड़ा दिया।

फिर कहा—"इन पत्थरों की क़ीमत तीन लाख रुपया है। जो आप की ख़ानदानी की सिर्फ़ पेशगी किस्त है। इसके बाद जैसा कि मैं अर्ज़ कर चुका हूँ मुझे गुजरात की सूबेदारी और पाँच हज़ारी ज़ात ..."

"मगर जहाँपनाह ..."

"हुनर, उसूली और नमकहलाली की जज़ा जो मैं देता हूँ उसे दुनिया जानती है।" औरङ्गजेब ने आग के शोले आँखों से बरसाते हुए मीर की ओर देखा। मीर ज़मीन तक झुक गया और तब उसने धीरे से कहा—

"जो हुक्म," इसके बाद वह तेज़ी से चला गया।

औरङ्गजेब ने दस्तक दी। एक ख़्वाजासरा ने भीतर आकर सिर झुकाया। औरङ्गजेब ने कहा—"मीर ख़ाँ को भेज दे।"

ख़्वाजासरा सिर झुकाकर चला गया—और एक भीमकाय अमीर ने खीमे में प्रवेश किया। उसका रंग काला, आँखें लाल और भुजदण्ड बलिष्ठ थे। वह बहुत भारी तलवार बाँधे था। वह चुपचाप औरङ्गजेब की आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़ा हो गया।

"क़ुतुब!"

"जी हाँ हुज़ूर!"

"याद रखो यह आख़िरी मुहिम है।"

"जहाँपनाह, यहाँ भी सब इन्तज़ाम चाक चौबन्द है।"

"तो बस, तुम ख़ुद जाओ, साथ में मुहम्मद सुलतान और अपने ख़ास अमीरों को ले जाओ और उसे साथ ले आओ। मगर निहायत होशियारी और समझदारी से।"

"हुज़ूर, इत्मीनान रखें।"

एक बहुमूल्य मोतियों की माला उसकी ओर फेंक कर औरङ्गजेब ने उसे उँगली से खीमे से बाहर जाने का संकेत किया।

फिर वह हाथ मलता हुआ इधर उधर टहलता रहा। उसके हृदय में तूफ़ान उठ रहा था—और उसने सबसे बड़ा साहस कर डालने का

इरादा कर लिया था। वह नहीं जानता था कि किसी गुप्त कान ने उसकी बातें सुन ली हैं।

उसने अपनी सारी योजनाएँ अत्यन्त गोपनीय रख छोड़ी थीं। परन्तु शहबाज़ खाँ से वह न छिपा सका था। जब वह अपनी गुप्त आज्ञाएँ दे रहा था, शहबाज़ खाँ खीमे के बाहर छेद पर कान दिए सुन रहा था और अब वह कीड़े की भाँति रेंगता हुआ वहाँ से निकल रहा था।

परन्तु एक बात रह गई जो शहबाज़ खाँ न जान सका। औरङ्गज़ेब ने कुछ देर चुप रहकर अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को बुलवाया और कहा— 'तुम, प्यारे फ़रज़न्द अमीरों के साथ मुराद के खीमे में जाओ और अपनी हमराह दो सौ तैंतीस घोड़े जो हमने ख़ास तौर पर तैयार रख छोड़े हैं और बीस लाख रुपए नक़द ले जाओ और हमारी ओर से यह नज़राना पेश करके उसे ममनून करो और हमारी ओर से अर्ज़ करो—कि यह वालदे शाही हुज़ूर की तन्दुरुस्ती और उन ज़ख्मों के अच्छा हो जाने की ख़ुशी में है जो हुज़ूर को मैदाने जंग में लगे थे। अलावा इसके भागते हुए बदनसीब दारा की गिरफ्तारी की पोशीदा तजवीज़ें भी हैं जिन पर गौर करना है।"

शाहज़ादे ने पिता का वास्तविक संकेत भी समझ लिया और वह सिर झुका कर चला गया।

: ६२ :

सुनहरा जाल

उस दिन दिन भर मुराद ने शिकार में बिताया था जिसका प्रबन्ध ख़ास तौर पर औरङ्गज़ेब ने किया था। उसका अभिप्राय केवल इतना ही था—कि मुराद खूब थक जाय और अमन मरन वालों की बातों पर वह विचार न कर सके। अधिकांश में औरङ्गज़ेब की यह अभिलाषा पूरी हुई थी।

और अब इस समय मुराद के सीने में कुछ अजब समा बँधा था। कुछ कंचनियाँ ग्वालियर से आई थीं और उनका नाच-गाना हो रहा था। काफूरी बत्तियों की धीमी रोशनी हो रही थी। गुलाब छिड़का जा रहा था। खुशामदी और ऐय्याश मुसाहिब उसे घेरे बैठे थे। बाँदियाँ नाच रही थीं। तबला ठनक रहा था। सारंगी सिसकारी भर रही थी। मुराद मसनद पर पड़ा जाम पर जाम चढ़ा रहा था। लोग बढ़-बढ़ कर उसकी जवाँमर्दी और दिलेरी की तारीफ कर रहे थे और वह सुन-सुन कर फूलकर कुप्पा हो रहा था।

इसी समय उसे मुहम्मद सुलतान और अमीर मीर खाँ के आने की इत्तला मिली। हुक्म होते ही मुहम्मद सुलतान ने नजराना पेश किया। नजराने के घोड़ों और नफीस कपड़ों के साथ बहुत से कमख्वाब के थान, जड़ाऊ जेवरात से भरी चाँदी-सोने की किश्तियाँ, इत्र—गुलाब जल और केवड़े की बोतलें, खुशबूदार तेल और अनेक प्रकार की मिठाइयाँ और तर मेवे चाँदी और हाथीदाँत के खूबसूरत बक्स, और सामान थे। ये सब चीजें जब उसके सामने पेश की गईं और अमीरों के साथ शाहजादा मुहम्मद सुलतान ने सामने आकर आदाब बजाया तो मुराद 'खुशआमदेद' कहकर दोनों हाथ फैलाकर चिल्ला उठा।

प्रत्येक अमीर ने आगे बढ़कर तीन बार शाहाना आदाब बजाया और हुक्म पाकर बैठ गए। मुहम्मद सुलतान ने हाथ बाँधकर कहा—"हुजूर, अब्बा जान ने हुजूर की खुश सेहत और तख्तनशीनी के सिले में हाजिर की हैं और अर्ज किया है कि तशरीफ लाकर आलीजाह ममनून करें—खासकर दारा की गिरफ्तारी के लिए, जो दिल्ली में बेवकूफी कर रहा है, चन्द पोशीदा तजवीजों पर भी मशविरा करना है, जिसके लिए सभी उमरा और वजीर हाजिर हैं।"

अमीर मीर खाँ ने बीच ही में हाथ जोड़कर कहा—"आलीजाह की दस्तबोसी का एक छोटा-सा जलसा भी इस मौके पर करने का बन्दोबस्त हजरत शाहजादा औरंगजेब ने किया है। जल्दी में जो सामान

मुरीद हो सका, किया गया है। हजरत शाहजादा औरंगजेब ने इत्मीनान इत्मीनान कोई कसर नहीं बाकी रखी है। अब हुजूर चलकर तख्तनशीनी की रस्म पूरी कर लीजिए—जिससे हम लोगों की मुरादें बर आएँ।"

दूसरे अमीर ने कहा—"हुजूर के जुलूस की खबर सुनकर दूर-दूर से मशहूर तवायफों और गुनी लोगों का ठठ जमा हो गया है, जो हुजूर की फैयाजी और दरियादिली से वाकिफ हैं, वे बड़ी-बड़ी उम्मीदें लगाए बैठे हैं और हमलोग—जो हुजूर के जाँनिसार गुलाम हैं—आज ही के मुबारक दिन की आस में हैं। आज हम निहाल होंगे हुजूर, हमारी सालहा साल की मुरादें बर आएँगी।"

चापलूसी की इन बातों को सुनकर मुराद बहुत खुश हुआ। वह उन सबसे अनेक बातें करने लगा। एक मुसाहिब ने कहा—

"यह नया खीमा जो जहाँपनाह की ताजपोशी के लिए तैयार कराया गया है, गुलाम अभी देखकर आया है। मुझे हैरत है कि ऐसी मया फौज में कैसे यह बेशकीमती खीमा तैयार करा लिया गया। नीचे से ऊपर तक सुनहरी काम से सजा हुआ—चाँदी की चोबों पर खड़ा जैसे पुकार-पुकार कर जहाँपनाह का इस्तकबाल कर रहा है।"

दूसरे मुसाहिब ने कहा—

"और वे बारह हाथी जिनकी जोड़ का हाथी हमने आज तक नहीं देखा, न जाने कहाँ से लाए गए हैं। उनकी-सी सजधज तो आला हजरत के जमाने में भी नहीं देखी गई थी।"

तीसरे ने कहा—

"मैं तो उन घोड़ों पर फिदा हूँ, जिनकी जोड़ का ज्याद जानवर इन आँखों ने नहीं देखा। हुजूर की सवारी के लिए जो घोड़ा आया है उसी को देखिए किसी ने देखा था ऐसा जानवर!"

मुराद ने खुश हो कर कहा—

"आपने हमारे बारे में जो मिल्लत, मुहब्बत और वफादारी जाहिर की है और आप लोगों ने जो फर्माबर्दारी दिखाई है उसका बयान करना

मुमकिन नहीं है। बस, ज्योंही हम मौका पाएँगे—आप सबको आपकी कीमती खिदमात का इनाम देंगे।"

मुहम्मद सुलतान ने अब खड़े होकर दरख्वास्त अर्ज की—"हुजूर, अब चलना चाहिए। अच्छी साइत जो नजूमियों ने बताई है उसमें अब देर नहीं है। इसके सिवा इस भारी काम को अंजाम देकर अपने सिर का बोझ हल्का करने और दिल की आरज़ू पूरी करने को अब्बाजान बहुत बेताब हो रहे हैं।"

मुराद ने प्रशंसा की दृष्टि से मुहम्मद सुलतान को देखा और कहा—"दुनिया देखे कि भाई की मुहब्बत कैसी होती है।" और फिर वह चलने के इरादे से उठ खड़ा हुआ।

मुराद ज्योंही घोड़े पर सवार हुआ कि अचानक बदहवास दौड़ता हुआ ख्वाजा आया और मालिक की रकाब पकड़कर बोला—

"मालिक!"

"क्या तुम इस वक्त फिर अपना चर्खा चलाओगे?"

"मगर शाहे आलम! आप... ...!"

मुराद की त्योरियों में बल पड़ गए, उसने कहा—

"फिर शाहे आलम, जब कि अब सब लोग हमें बादशाह कहते हैं यहाँ तक कि औरंगजेब भी!"

शाहनवाज ने मुराद के बिल्कुल पास आकर उसके कान में फुसफुसाते हुए कहा—"यह सब मक्कारी है शाहजादा, कहा मानिए आज कहीं मत जाइए। गजब हो जाएगा। मुझे सब कुछ मालूम है। बीमारी का बहाना करके रह जाइए। फिर यह खुद सब हाल-चाल दरयाफ्त करने आएगा। तो मैं इसका फैसला करूँगा।" उसने आँखों से ही इंगित करके कहा—"सब बन्दोबस्त तैयार है हुजूर।"

इसी समय ढोल दमामे और नक्कारे बज उठे। नकीबों ने नए बादशाह का जय-जयकार किया।

मुराद ने क्रुद्ध होकर शाहनवाज से कहा—"हमेशा ही तुम ऐसा

ही जर जाहिर करते रहते हो—हम जानते हैं कि ये सब बेबुनियाद बातें हैं। भाई औरङ्गजेब किस कदर हमसे मुहब्बत करते हैं और हमारी इज्जत करते हैं। क्या तुम नहीं देखते कि वह हमें ही बादशाह मानते हैं। फिर तुम क्यों उनसे जलते हो। बस, हम नहीं चाहते कि तुम हमारे मुआमलात में हारिज हो।"

परन्तु शाहनवाज ने शाहजादा के गुस्से की परवा न की। वह कहता ही गया—"हजरत, ये सब अदब की मीठी-मीठी बातें और चापलूसियाँ दगाबाजी की निशानी हैं। आपको मुनासिब है कि आगरे लौट चलें।"

परन्तु मुराद ने त्योरियों पर बल डालकर कहा—"शाहनवाज, तुम बादशाहों को मश्विरा देने की जुर्रत न करो। अभी तुम्हें हमने वजीरे-आज़म नहीं बना दिया है। सल्तनत के मामलात में मश्विरा करने के लिए हमारे पास तुमसे ज्यादा लायक मशीर हैं।" यह कह उसने घोड़े को एड़ लगाई।

पर शाहनवाज ने फिर उसकी राह रोककर और घोड़े की रास पकड़ कर कहा—"हुजूर, शेर आप के मुँह में मत जाइए।" मगर मुराद ने अपनी तलवार हिला कर कहा—"जबतक यह मेरी बगल में है मुझे किसी का गम नहीं।" उसने घोड़ा बढ़ाया। शाहनवाज ने भी झटपट अपने भरोसे के आदमी इकट्ठे किए और हथियार बाँध मालिक के पीछे दौड़ चला।

मुराद घोड़े पर सवार धीरे धीरे अमीरों से घिरा जा रहा था—सामने से इब्राहीम घोड़े पर सवार आता मिला। वह एक बहादुर ईमानदार सरदार था। उसने शाही अदब-आदाब के अनुसार एक ओर होने की अपेक्षा आगे बढ़कर मुराद के घोड़े की रास पकड़ ली और मुराद के चेहरे पर करुण दृष्टि डालकर कहा—"आप किधर जा रहे हैं हजरत?"

"हम ताजपोशी के लिए जा रहे हैं।"

"सुनकर खुशी हुई। मगर क्या जरूरत है कि ताजपोशी के लिए बादशाह दूसरे के घर जाय, जब कि अपने घर में शिकारगाह का सब सामान मुहैया है।"

यह कहकर उसने मुराद के घोड़े की बाग मोड़नी चाही। मगर मुराद ने जोश में आकर घोड़े को एड़ मारी और आगे बढ़ गया। इसपर इब्राहीम ने चिल्लाकर कहा—

"आप जेलखाने जा रहे हैं।"

शाहनवाज खाँ ने यह आवाज सुनी। वह घोड़े को एड़ देकर आगे बढ़ा और मुराद के सामने आकर बोला—"खुदा और रसूल की खातिर, हुजूर इस दाना अमीर की बात मान लीजिए और पीछे लौटिए।"

मुराद ने जोश में आकर तलवार की मूठ पर हाथ रखा और कहा—"कमबख्त कहे बहादुर मेरा।"

और अलमस्त की भाँति घोड़ा दौड़ाता औरंगजेब की छावनी में घुस गया।

। ६३ ।

पहिला शिकार

ज्योंही मुराद औरंगजेब के खीमे के पास पहुँचा—औरंगजेब ने अपने सब अमीरों सहित बाहर आकर उसका अभिनन्दन किया। औरंगजेब ने उसके मुँह की गर्द और पसीना पोंछा और मसनद पर बैठाकर स्वयं उसकी बगल में बैठा।

औपचारिक शिष्टाचार के बाद औरंगजेब ने नम्रतापूर्वक कहा—"यद्यपि आपने पहिले ही अपने को हिन्दुस्तान का बादशाह घोषित कर दिया है मगर आज के मुबारक दिन—जब दुश्मन पामाल हो गए,—और हुनर की दौलत और नाम कमाल को पहुँच गया—हम आपको

जाँनिसार और हमदर्द अमीर इस मौके पर हुजूर की ताजपोशी का यह छोटा-सा जश्न करके अपने दिल की खुशी जाहिर करना चाहते हैं।"

इसके बाद उसने इशारा किया और मुराद के सिर पर नई पगड़ी बाँधी गई। औरंगजेब ने एक कीमती हीरों की कलँगी बाँध दी और सलाम किया। गुबार हुआ—इसके बाद सब अमीरों ने नजराने पेश किए और सलाम की। मुराद ने शाहाने रुआब से सबकी सलाम कबूल की और मनमाने अलकाब-दर्जे और इनामात उनको देने की इच्छा प्रकट की।

इस पर औरंगजेब ने अर्ज की—"यह सब सोच-समझकर होता रहेगा। फिलहाल हुक्म हो कि दस्तरखान बिछाया जाय। हुजूर दिन भर के थके-माँदे हैं।"

मुराद ने हुक्म दिया और आनन-फानन एक से बढ़ कर एक दस्तरखान चुने गए। सब अमीर खाने बैठ गए। औरंगजेब भी मुराद के नजदीक बैठा। वह धीरे-धीरे खाता और बातचीत करता जाता था। मुराद इत्मीनान से खा रहा था। वह बहुत खुश था और अमीरों से गप्पें भी मारता जाता था। हँसी-मजाक जोरों पर चल रहा था। खाना खत्म होने पर जब कहुवे और शोरबे शराब के पात्र और सुन्दरी कंचनियाँ उपस्थित किए गए—तो औरंगजेब ने मुस्कुरा कर मुराद से कहा—"इस मुबारक दिन की खुशी में जहाँपनाह अपने जाँनिसार इन अमीरों के साथ शगल कीजिए। मेरी आदत तो हजरत को मालूम ही है कि मैं अपने मजहबी ख्यालात के बाइस इस ऐशो इशरत की सोहबत में मौजूद नहीं रह सकता। लेकिन जो लोग इस खुशहाल जलसे में शरीक हैं मीर अहमद और दीगर मुसाहिब आपकी खिदमत गुजारी के लिए हाजिर रहेंगे।"

इतना कह कर औरंगजेब वहाँ से चला गया। फिर यह जलसा और जोश में आया। शराब के दौर पर दौर चलने लगे। संगीत का दरिया बह चला और रूप का बाजार लग गया।

मुराद तो शराब और औरतों का प्रेमी था ही। अब उसने इतनी शराब पी कि तन-बदन की कुछ भी खबर नहीं रही। वह बदहवासी में ऊँट-पटाँग बकने और हँसने लगा। अन्त में बिलकुल बेहोश होकर मसनद पर लेट गया। जल्सा बर्खास्त कर दिया गया। मीर खाँ ने उसके हथियार खोल कर अपने कब्जे में कर लिए और बाहर चला गया।

इसी समय औरंगजेब पाँच-छै गुलामों के साथ खीमे में आया। इस समय आदर-सम्मान की कोई भावना उसके मुख पर न थी। उसके होठों और नेत्रों में कठोरता थी। उसने दो-तीन ठोकरें उसे मार कर कहा—"शर्म की बात है कि तुम बादशाह होकर इस कदर गाफिल और बेखबर हो। अब दुनिया तुम्हें और मुझे क्या कहेगी।"

परन्तु ठोकर खाकर भी मुराद उसी भाँति पड़ा रहा। इसपर औरंगजेब ने अपने गुलामों से जो प्रथम ही से मुस्तैद थे, कहा—"इस बदबख्त के हाथ-पाँव बाँध कर खिलवतखाने में ले चलो, ताकि नशा उतरने तक यह बेशर्मी का तमाशा नहीं होए।" बराबर गुलामों ने आनन-फानन उसे दबोच लिया और उसके हाथ-पैरों की मुश्कें कस दीं। आसन्न विपत्ति को उस बदहोशी में भी समझकर मुराद खूब चीखा-चिल्लाया—परन्तु उसके हाथों और पैरों में तुरन्त हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ डाल दी गईं और उसे भीतरी खीमे में पहुँचा दिया गया।

मुराद के नौकर, चाकर, सिपाही सब दूसरे खीमे में खा पी रहे थे। सभी ने छककर शराब पी थी और उनमें एक भी इस काबिल न था—जिसके होश-हवास दुरुस्त हों। फिर भी शाहनवाज ने मुराद का चिल्लाना सुना—और वह दो-चार आदमियों के साथ तलवार लेकर दौड़ा। पर मीर आतिशकुली खाँ ने जो मुराद का ही अमीर था—उसे समझा-बुझाकर ठण्डा कर दिया और उसे दूसरी ओर ले गया। उसने कहा—"कुछ नहीं बादशाह ज्यादा पी गए हैं। फिर भी शोर मचा रहे हैं और गालियाँ बक रहे हैं। बस इतनी ही बात है।

मैं स्वयं देखे आ रहा हूँ।" शाहनवाज़ खाँ उसके विश्वास में रह गया।

मीर आतिशकुली खाँ उसे समझा-बुझाकर मुराद की छावनी में ले गया। उसने सोचा कि वहाँ जाकर कुछ और मदद इकट्ठी कर लाऊँ। परन्तु मीर आतिश ने मौका पाकर उसका सिर काट डाला। फिर उसने छावनी में देखा—कि कुछ उड़ती-सी खबर वहाँ भी पहुँच गई है। सिपाही दल बाँध-बाँधकर इस बात की चर्चा कर रहे थे। उसने उन सबको यह कहकर ठण्डा कर दिया कि मैं अपनी आँखों से देखे आ रहा हूँ। जहाँपनाह ने ज़रा ज़्यादा चढ़ा ली थी, वे अभी वहीं पर आराम फर्मा रहे हैं। सुबह तशरीफ़ ले आयेंगे। सिपाही अपने ही सेनापति की बात पर विश्वास कर गए। इसके बाद उसने सब बड़े-बड़े अधिकारियों को बड़े-बड़े सब्ज़ बाग दिखाए। ये कुछ-कुछ तो पहिले ही से जानते थे—और अब उच्चाकांक्षा की आशा में कान में तेल डाल बैठे। दिनभर अन्धेर था—उन्हें भारी भारी घूसें दी गईं। वेतन दूने कर दिए गए।

इस प्रकार कुछ घण्टों ही में इस शराबी और मूर्ख जहाँपनाह को लोग एकबारगी ही भूल बैठे, और मामले का गूढ़ मर्म समझ गए।

जब औरंगज़ेब को सूचना मिल गई कि उधर सब ठीक-ठाक हो गया और अब पत्ता तक खड़कने का भय नहीं है, तब उसने हथकड़ियों और बेड़ियों में जकड़े हुए उस अपने सगे भाई को जिसे आज ही संध्याकाल में जहाँपनाह कह कर उसने मुँह की बड़ी खोली थी, एक बन्द जनानी फौलादी अम्बारी में बन्द करके—तेज़ हथिनी पर सलीम गढ़ के किले में कैद करने को दिल्ली की ओर रवाना कर दिया, जिसकी रक्षा के लिए मुहम्मद सुलतान नंगी तलवार हाथ में लिए पाँच सौ सवारों के साथ उसी चुपचाप रात में रवाना हो गया।

प्रभात होते ही मुराद के सब अमीरों और मुसाहिबों ने आकर औरंगज़ेब को सलाम की और उसकी सेवाएँ स्वीकार कीं। औरंगज़ेब

ने उसके दर्जे बढ़ाए। भारी भारी इनाम दिए। तनखाहें दूनी कर दीं। सैनिकों को तीन माह का वेतन इनाम में बाँटा और उन्हें अपनी सेना में रख लिया। दोपहर होते होते मुराद की सारी सेना—दरबारी अमीर उमराव औरंगजेब का जय-जयकार करने लगे।

इस झंझट से निबट कर अब उसने अपने विश्वासी सेवक खानए दौरान को एक अच्छी फौज देकर इलाहाबाद को रवाना कर दिया और उसे हुक्म दिया कि वह वहाँ के हाकिम से इलाहाबाद छीन ले—जो दारा का नियुक्त किया हुआ था। साथ ही उसने विश्वस्त बहादुर खाँ को एक फौज की सरदारी सौंप कर उसे दारा के पीछे भेज दिया जो लाहौर में फौजें जमा कर रहा था। इसके बाद वह इत्मीनान से दिल्ली की ओर रवाना हुआ।

: ६४ :

आलमगीर गाज़ी

औरंगजेब ने बड़ी-बड़ी ऐतिहासिक घटनाएँ बड़ी तेजी से तय कर डालीं। २९ मई सन् १६५८ को उसने समूगढ़ में विजय पाई। पहिली जून को वह आगरे पहुँचा। पाँचवीं जून को आगरे का किला घेरा, आठ जून को किला फतह किया, दस जून को बादशाह को कैद किया। तेरह जून को वह आगरे से चला और पचीस जून को मथुरा में मुराद को कैद किया। इस प्रकार एक महीने से भी कुछ कम समय में उसने इतनी बड़ी-बड़ी साहसिक घटनाएँ कर डालीं जिनका ऐतिहासिक महत्व बहुत अधिक था।

इधर तो उसने मुराद को सलीमगढ़ की ओर रवाना किया। उधर खानए दौरान को एक दस्ता फौज देकर इलाहाबाद की ओर रवाना कर दिया कि वह इलाहाबाद जाकर वहाँ के दारा द्वारा नियुक्त हाकिम से इलाहाबाद छीन कर उस पर दखल कर ले। पर अत्यन्त दूरदेशी

का महत्वपूर्ण कदम था—क्योंकि इलाहाबाद बङ्गाल का द्वार था और अभी उधर प्रबल शत्रु शाह शुजा बङ्गाल में अपनी बड़ी तैयारी कर रहा था जिसकी तरफ से औरंगजेब बेखबर नहीं हो सकता था।

दारा पाँचवीं जून को दिल्ली पहुँच चुका था और अभी तक अपनी रक्षा की झटपट में फँसे रह कर औरङ्गजेब उसके लिए कुछ भी बन्दोबस्त न कर सका था। दिल्ली पहुँचते-पहुँचते दारा के साथ पाँच हजार सवार जमा हो गए थे। अब उसने दिल्ली पहुँचते ही नई सेना भर्ती करना प्रारम्भ कर दिया। धन उसके पास काफी था। बादशाह ने उसे दो हाथी अशर्फियों से लाद कर भेजे थे। उसके पास भी काफी हीरा, मोती, सोना था। फिर दिल्ली के किले से भी उसे भारी मदद मिल गई थी। इस कारण इन बीस दिनों के अवकाश में उसने एक अच्छी सेना तैयार कर ली।

औरङ्गजेब को ये सब सूचनाएँ मिलती रहती थीं। अब उसने बहादुर खाँ को एक जबदस्त फौज देकर दारा को दिल्ली से खदेड़ने और अन्त तक उसका पीछा करने को भेजा। यह सूचना पाते ही दारा ने लाहौर की तरफ कूच बोल दिया। यह बहुत दिनों तक लाहौर का हाकिम रह चुका था और इस समय वहाँ का हाकिम उसका विश्वस्त सरदार सैरत खाँ था। दिल्ली से लाहौर पहुँचने में उसे बाईस दिन लगे। वहाँ के किलेदार ने उसकी पूरी सहायता की और दारा ने बीस हजार सेना एकत्र कर ली। साथ ही सतलुज के सुलतान और व्यास के घाटों पर भी चौकियाँ बैठा दी और वह बड़ी तत्परता से लाहौर की किलेबन्दी में संलग्न हो गया।

मुराद की ओर अपनी संयुक्त सेना को संगठन करने और नई-नई व्यवस्थाएँ करने में औरङ्गजेब को कुछ दिन मथुरा में अटकना पड़ा। अन्त में १ जुलाई को उसने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। वहाँ उसका धूमधाम से स्वागत किया गया।

दिल्ली को मुगल साम्राज्य की नई राजधानी बनाने की जितनी

आवश्यक तैयारियाँ भी उसने शीघ्रता से कीं। नए सूबेदार, कर्मचारी व्यवस्थापक, प्रबन्धक नियत किए। शासन में नए-नए हेरफेर किए और सुदृढ़ प्रबन्ध की स्थापना की।

अन्त में इक्कीस जुलाई को उसने असम्बद्ध तरह ढंग पर अपनी तख़्तनशीनी की रस्म अदा की और शाह फ़रीद मुग़ल के तख़्त ताऊस पर बैठ कर आलमगीर ग़ाज़ी के नाम से उसने अपने को मुग़ल साम्राज्य का बादशाह घोषित किया और अपने नाम का ख़ुतबा पढ़वाया। नए वज़ीरों, अमीरों और मनसबदारों को जागीरें, ख़िताब और इनाम दिए।

इस व्यस्त कार्यक्रम में भी दारा पर उसकी नज़र थी, जो लाहौर में अपने क़दम जमाए था। वह जानता था कि पंजाब और काबुल के सूबेदार उसके दोस्त हैं। वे उसे पूरी सहायता देंगे। वह नहीं चाहता था कि दारा उनसे सहायता पाकर सबल हो जाय। इसलिए उसने ख़लीलुल्ला ख़ाँ को लाहौर का हाकिम नियुक्त कर और उसे दारा का पीछा करनेवालों की मदद करने की हिदायतें दे कर लाहौर की ओर रवाना कर दिया।

इसके बाद उसने दिल्ली के क़िले को व्यवस्थित किया। अपने हरम को लाकर हरम का भी प्रबन्ध किया। शहर में व्यवस्था क़ायम की, कारोबार जारी किया और अब साम्राज्य में अमनोअमान की घोषणा की। यह सब प्रबन्ध करके वह स्वयं अपने शत्रु दारा के पीछे लगा।

बहादुर ख़ाँ ने पाँच अगस्त को ब्यास के पास एकाएक सतलुज को पार किया। दारा के सेनानायकों को अब ब्यास की ओर पीछे हटना पड़ा। इसी बीच औरङ्गज़ेब स्वयं सतलुज पर पहुँचा। यह ख़बर पाकर दारा लाहौर छोड़ मुलतान की ओर जलमार्ग से भागा। इस समय उसका परिवार भी उसके साथ था। उसके पीछे-पीछे औरङ्गज़ेब की सेना लगी थी।

दारा की इच्छा, लाहौर में वहाँ की भलीभाँति क़िलेबन्दी करके,

अपने दल का संगठन करने की थी। पर औरङ्गजेब ने इसका उसे अवकाश नहीं दिया। यद्यपि गर्मी बहुत अधिक थी—फिर भी उसकी सेना रात-दिन बराबर बढ़ती ही चली जाती थी। सिपाहियों का साहस बढ़ाने के लिए वह स्वयं थोड़े से मनुष्यों के साथ प्रायः चार-पाँच कोस सेना के आगे चलता था। वह साधारण सिपाही की भाँति मैला मिलता पानी पीता और सूखी रूखी रोटी खाता, रात को पृथ्वी पर सो रहता था।

यदि दारा लाहौर से काबुल की ओर जाता तो ठीक करता। काबुल न जाकर उसने भारी भूल की। उसके शुभचिन्तकों ने काबुल जाने के लिए उसे बहुत समझाया था। पर सदा की भाँति इस बार भी उसने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया। इस समय काबुल का हाकिम महाबत खाँ था—जो एक प्रतिष्ठित बूढ़ा रईस था। वह औरङ्गजेब का मित्र भी न था, तथा उसके अधीन एक खास शाही सेना भी थी। जो ईरानियों, उजबकों, अफगानों के विरुद्ध रणक्षेत्र में आ चुकी थी। दारा के पास धन रत्न की भी कमी न थी। यदि वह वहाँ जाता तो महाबत खाँ और उसकी सेना की उसे अवश्य सहायता मिलती और वे उसका पक्ष ग्रहण करते। इसके सिवा ईरान और उजबक देश भी वहाँ से निकट थे। वहाँ से उसे अच्छी लड़ाकू सेना प्राप्त हो सकती थी। वह इस बात को भूल गया कि हुमायूँ को जब शेरशाह ने हरा कर भारतवर्ष से निकाल बाहर किया था तब उसने ईरानियों ही से सहायता लेकर फिर राज्य प्राप्त किया था। पर दारा का स्वभाव ही ऐसा था कि समझदार और बुद्धिमानों की सम्मति पर वह कान ही नहीं देता था।

इस बार भी उसने ऐसा ही किया। काबुल न जाकर उसने सिन्ध की राह ली। लाहौर में औरङ्गजेब को सूचना मिली कि वह भक्कर के किले में अपनी बड़ी-बड़ी तोपें और बहुत सा माल असबाब छोड़ कर सहवान की ओर भाग गया है जो सिन्धु नद के मध्य में था। जब औरङ्गजेब को दारा की इच्छा का पता लग गया, तो अब उसका पीछा

जाने का विचार उसने त्याग दिया। यह देख कर कि वह काबुल की ओर नहीं जाता है उसके मन का खटका निकल गया और उसने अब अपने दूधभाई मीरबाबा की अधीनता में आठ दस हज़ार सवार उसका पीछा करने को छोड़े और वह स्वयं शीघ्रता से आगरे की ओर लौटा।

इस समय अनेक चिन्ताएँ उसके मन में उठ रही थीं। वह सोच रहा था, उसकी गैरहाज़िरी में न जाने राजधानी में क्या हो। संभव है जयसिंह और जसवन्तसिंह बादशाह को कैद से छुड़ा दें, या सुलतान शुजा ही आगरे पर चढ़ आए। उसे इस बात की सूचनाएँ मिल रही थीं कि शुजा निरन्तर सेनाएँ भर्ती कर रहा है। उसे यह भी भय था कि कहीं सुलेमान शिकोह ही श्रीनगर के राजा की सेना लेकर पहाड़ों से न उतर पड़े।

सदा की भाँति वह अपनी सेना से चार कोस आगे आगे चल रहा था। चने से चुने हुए सैनिक और सरदार उसके साथ थे। अभी लाहौर कुछ अन्तर पर था। वह लाहौर शीघ्र-से-शीघ्र पहुँचना चाहता था। इसी समय उसने देखा—महाराज जयसिंह चार पाँच हज़ार वीर योद्धाओं के साथ उसकी ओर बढ़े आ रहे हैं। वह एक बार भय से सिहर उठा। वह वास्तव में अत्यन्त खतरनाक स्थिति में आ गया था। जयसिंह बादशाह के कैसे प्रेमी न थे, वह डर गया कि यदि इस समय महाराज जयसिंह जो शाहज़ादों के परम भक्त हैं, उसे कैद कर लें तो क्या हो।

लोगों का अनुमान था कि वास्तव में राजा साहेब औरंगज़ेब को पकड़ने ही के लिए आए थे। परन्तु औरंगज़ेब ने असीम धैर्य का परिचय दिया। वह दूर से ही घोड़ा दौड़ाता हुआ और हाथ हिलाता हुआ, प्रसन्नता प्रकट करता हुआ आगे बढ़ा—और पास पहुँच कर कहा— 'सलामत बाशद राजा जी, सलामत बाशद राजा जी, खुशाम[illegible]र, खुशामदीद। मैं बयान नहीं कर सकता कि मुझे आपके आने का कैसा इन्तज़ार था। बहुत ही खुश हुआ कि आप आ गए। अब

तो लड़ाई खत्म हो चुकी। दारा शिकोह तबाहोबरबाद होकर खाक छानता फिरता है। मैंने मीरबाबा को उसके पीछे भेजा है, यकीन है कि वह जल्द गिरफ्तार हो जायगा।"

इतना कहकर उसने अपने कंठ की मोतियों की माला उतार कर राजा साहेब के गले में डाल दी और कहा—"हमारी फौज निहायत थकी है। इसलिए आप बहुत जल्द आगे बढ़कर लाहौर पहुँच जाइए। वहाँ बदअमनी का मुझे अन्देशा है। मैं आपको पंजाब का सूबेदार मुकर्रर करता हूँ और तमाम अख्तियारात देता हूँ। मैं भी बहुत जल्द आपसे आ मिलूँगा। हाँ, रुखसत होने से पहिले मुझे वाजिब है कि सुलेमान शिकोह के मुआमिले में आपने जो वफ़ादारी की है, उसके लिए आपका शुक्रिया अदा करूँ। लेकिन आपने दिलेर खाँ को कहाँ छोड़ा? और, मैं उसे सख्त सजा दूँगा। अब आप जल्द लाहौर तशरीफ ले जाँय। खुदाहाफिज।"

। ६५ ।

सुलेमान शिकोह की दुर्दशा

बहादुरपुर में हार खाकर जब शुजा पटने की ओर भागा तो उसने मुंगेर में खाइयों और तोपखानों से नया रास्ता रोक लिया और जब महाराज मिर्जा राजा जयसिंह की सीख न मान कर सुलेमान शिकोह उसके पीछे दौड़ गया, तो उसे मुंगेर से पचास मील दक्षिण-पश्चिम में सूरजगढ़ में ही अटकना पड़ा। वह किसी तरह वहाँ से आगे बढ़ ही नहीं सका। यहीं उसे धरमत की पराजय के समाचार मिले, तो उसने लाचार होकर शुजा से सन्धि कर ली और उसे बंगाल, पूर्व बिहार और उड़ीसा का प्रदेश दे वह वापस आगरे की ओर फिरा।

परन्तु तब तक बहुत पानी बह चुका था। अभी वह इलाहाबाद से थोड़ा ही आगे बढ़ा था कि उसे सामूगढ़ की लड़ाई में अपने पिता के

सर्वनाश का समाचार मिला। औरंगज़ेब के ख़त भी यहीं मिर्ज़ा राजा जय सिंह और दिलेर ख़ाँ को मिल चुके थे।

औरंगज़ेब का पत्र पाकर मिर्ज़ा राजा जय सिंह विचार में पड़ गए। शाहजहाँ और दारा की ठीक-ठीक दुर्दशा का उन्हें ज्ञान न था। शाही ख़ानदान के आदमियों और शाहज़ादों पर हाथ उठाना हर हालत में अक्षम्य अपराध है यह मुग़ल नीति वे जानते थे। इसके सिवा सुलेमान शिकोह के पराक्रम और साहस से भी वह परिचित थे। वह यह भी जानते थे कि शाहज़ादा आसानी से अधीन नहीं होगा।

सोच-समझ कर उन्होंने अपने मित्र दिलेर ख़ाँ से सलाह-मशवरा किया। दोनों ने डगमगाती मुग़ल राज्य की नाव की सच्ची परिस्थिति पर विचार किया। कुछ ख़ानगी स्वार्थों के सम्बन्ध में उन्होंने आपस में क़ौल-क़रार भी किया। फिर महाराज सुलेमान शिकोह के ख़ीमे में पहुँचे और कहा—

"शाहज़ादा, आप जिस नाज़ुक हालत में आ पड़े हैं, उसे आपसे छिपा रखना हम मुनासिब नहीं समझते। अब पहले जैसी परिस्थिति नहीं है। हालात ऐसे बदल गए हैं कि इस वक़्त आपको न तो दिलेर ख़ाँ पर भरोसा करना चाहिए, न दाऊद ख़ाँ पर, न अपनी फ़ौज पर। अब आप अपने वालिद की मदद करने को अगर आगे बढ़ेंगे तो ज़रूर पकड़े जाएँगे। लिहाज़ा मेरी आपको यह नेक राय है कि आप जल्द-से-जल्द गढ़वाल के पहाड़ों की ओर चले जाएँ और वहाँ के राजा का आश्रय लें। मुझे आशा है वह आपको आश्रय देगा। स्थान दुर्गम होने और औरंगज़ेब के दो मोर्चों में फँसे रहने के कारण वह वहाँ पहुँच भी न सकेगा। आप वहाँ रह कर बदलते हुए हालात को देखते रहें और जब मौक़ा देखें आकर अपनी जवाँमर्दी और बहादुरी दिखाएँ।"

यह सुनते ही शाहज़ादे का चेहरा ज़र्द हो गया और वह समझ गया कि अपने भी बेगाने हो गए। अब किसी पर भी भरोसा किया

नहीं जा सकता। वह यह भी समझ गया कि यहाँ रहना मौत के मुँह में जाना है। न जाने कौन विश्वासघाती पकड़ कर कैद कर ले।

उसने समझ लिया कि मिर्जा राजा और दिलेर खाँ अब उसे सहायता न देंगे। इसी समय उसने सुना कि उसका पिता दिल्ली से लाहौर को भागा जा रहा है। उसने अपने मित्रों, मुसाहिबों और मनसबदारों से सलाह ली। मनसबदारों, मित्रों और सैनिकों ने उसके साथ जाना पसन्द किया, उन्हें संग लेकर वह इलाहाबाद को लौटा। उसका इरादा था कि गंगा के किनारे होते हुए पहाड़ों के पास नदियों पार करके किसी तरह पंजाब में अपने पिता से जा मिले। वह एक वीर तरुण था। वह तेज़ी और बुद्धिमानी से चला। परन्तु सेना का अधिकांश भाग मिर्जा राजा और दिलेर खाँ के साथ रह गया था। उन्होंने उसे अपना बहुत-सा मूल्यवान सामान छोड़ जाने को लाचार किया। जब वह चलने लगा तो उन्होंने उसका सब माल असबाब लूट लिया जिसमें मुहरों से लदा हुआ एक हाथी भी था। इस हाथी को यहाँ देखे पर लोगों ने समझ लिया कि जब लक्ष्मी ही चली गई तब उसके साथ जाने से क्या लाभ? बहुत से आदमियों ने इस अभागे का साथ छोड़ दिया। अब बहुत कम आदमी उसके साथ रह गए। फिर भी वह आगे बढ़ता ही गया। परन्तु उसने देखा हर दिशा में भारी शत्रु सेनाएँ उसका मार्ग रोके हुए थीं। लोग उसका साथ छोड़ने वाले थे। राह में गँवार देहातियों ने उसे बारम्बार लूटा और उसके साथियों को मार डाला। इस प्रकार निराश होकर वह शरण के लिए श्रीनगर के पहाड़ों में भागा गया। गढ़वाल के राजा पृथ्वी सिंह ने उसे इस शर्त पर आश्रय दिया कि वह सारी सेना छोड़ दे और अपने कुटुम्बियों और केवल सत्रह नौकरों को साथ लाए। अन्त में सुलेमान को यही करना पड़ा।

: ६६ :

खजुआ की लड़ाई

सुलेमान शिकोह से छुटकारा करके शुजा ने फिर से अपना सैन्य संगठन किया और जब उसने सुना कि औरङ्गजेब मुलतान और सिंध की ओर दारा के पीछे घूम रहा है तो वह साहस करके आगरे की ओर फिर लौटा। औरङ्गजेब ने तख्त पर बैठते ही उसे अत्यन्त प्रेम और सम्मानपूर्वक लिखा था कि बिहार और बंगाल का सूबा आपका है। परन्तु शुजा ने इसकी परवा न की और औरंगजेब की गैरहाजिरी से लाभ उठाना चाहा। उसकी महत्त्वाकांक्षा फिर जाग्रत हो उठी।

औरंगजेब को ज्योंही इस बात की सूचना मिली, वह ताबड़तोड़ मुलतान से लौटा। इस समय तक शुजा इलाहाबाद से आगे और तीन पड़ाव बढ़ आया था और खजुआ नाम के एक छोटे से गाँव के पास तालाब के किनारे डेरा डाले हुए था। औरंगजेब ने शुजा के बराबर को बढ़ी था ठेका और शुजा के पड़ाव से आठ मील के अन्तर पर पश्चिम में कोड़ा में अपने पुत्र से आ मिला, जिसे वह पहले ही शुजा के अवरोध के लिए भेज चुका था। इसी दिन मीरजुमला भी दक्षिण से आकर उसे आ मिला। दोनों लश्करों के बीच लड़ाई के योग्य विशाल मैदान था। औरंगजेब लड़ने को बेचैन हो रहा था।

दो जनवरी को औरंगजेब ने अपनी सेना नदी पार की, और व्यूह बद्ध कर आगे बढ़ाई और शत्रु के पड़ाव से एक मील के अन्तर पर आ डटा। उसी रात को मीरजुमला ने दोनों सेनाओं के बीच पड़ने वाली एक छोटी-सी पहाड़ी पर अपना तोपखाना जमा लिया। उसने चालीस तोपें इस युक्ति से जमाईं कि वह चाहे भागती या बढ़ती हुई सेना पर गोले बरसा सके। यथासमय औरंगजेब की सेना में तैयारियाँ होती थीं।

इस समय औरंगजेब की कमान में पचास हजार सेना थी, जो शुजा की तेईस हजार सेना का सामना करने को खड़ी थी।

शुजा को मालूम हो गया कि अपने से तिगुनी सेना से वह परंपरागत युद्धप्रणाली से नहीं लड़ सकता है, इसलिए उसने अपनी सारी सेना तोपखाने के पीछे एक कतार में खड़ी की और एक मजबूत किलेबन्दी बनाई।

दो घड़ी दिन चढ़े, लड़ाई छिड़ी। तोपों, गोलों और बन्दूकों की मयंकर गर्जना के साथ युद्ध आरम्भ हुआ। शुजा अपने स्थान पर थमकर औरंगजेब के आक्रमणों को व्यर्थ करने लगा। इससे औरंगजेब कुछ कठिनाई में पड़ गया। शुजा चाहता था कि गर्मी से घबरा कर शत्रु दल नदी की ओर लौटे तो उस पर सहसा टूट पड़े। औरंगजेब शुजा की इस चाल को समझ गया। अतः वह बढ़ता ही गया, पीछे न हटा। अन्त में दोनों सेनाएँ एक दूसरे से भिड़ गईं और तीरों की वर्षा होने लगी। सैयद आलम ने तीन मतवाले हाथियों को आगे आगे खदेड़ते हुए औरंगजेब के बाएँ पक्ष पर आक्रमण किया। यह आक्रमण इतना भीषण था कि औरंगजेब का वाम पक्ष भंग हो गया और सेना भाग खड़ी हुई। इसी समय न जाने कैसे औरंगजेब के मरने की गलत खबर फौज में फैल गई, जिससे उसकी सेना में भगदड़ शुरू होने लगी। ठीक इसी समय इसके मध्य भाग पर तीव्र आक्रमण हुआ। उस समय औरंगजेब की रक्षा के लिए केवल दो हजार सवार वहाँ थे—परन्तु उसकी सेना के दो पिछले दस्तों ने आगे बढ़ कर शत्रुओं की राह रोक ली। औरंगजेब ने बाईं ओर मुड़ कर सैयद आलम से मोर्चा ले उसे पीछे खदेड़ दिया। परन्तु तीनों मदमस्त हाथी तो बढ़े ही चले आ रहे थे। उनमें से एक औरंगजेब के हाथी के पास तक आ पहुँचा। यह एक संकट काल था। पर औरंगजेब ने अपने हाथी के पैरों में जंजीरें डाल कर उसे वहाँ से न हटने दिया और वह पहाड़ की भाँति अचल खड़ा रहा। शत्रु के हाथी के महावत को

उसने गोली से मार गिराया। फिर शाही महावत इस मस्त हाथी पर पीछे से सवार हो गया और उसे काबू में कर लिया।

अब औरंगजेब ने अपने दाहिने पार्श्व पर बल दिया, जिसे शाहजादा बुलन्द अख्तर ने बुरी तरह झंझोड़ डाला था। यद्यपि शाहजादे की सेना अधिक न थी, पर उसने औरंगजेब की सेना के पैर उखाड़ दिए थे। औरंगजेब ने बड़ी दृढ़ता से उस पक्ष को व्यवस्थित किया और अब दाहिना पक्ष सबल करके आगे बढ़ा। शीघ्र ही उसने शाहजादे की सेना को छिन्न-भिन्न कर दिया। इतने ही में औरंगजेब को एक नई विपद का सामना करना पड़ा, जिसने उसके सारे ही लश्कर को घबराहट में डाल दिया। जोधपुर के राजा जसवन्तसिंह—जो बड़े उत्साह से औरंगजेब से आ मिले थे, और इस युद्ध में दाहिने पक्ष के नायक थे उन्होंने एकाएक विश्वासघात करके औरंगजेब की सेना के पिछले भाग पर आक्रमण कर दिया। इस मार से घबरा कर वह सेना तितर बितर होकर भाग चली। राजा साहेब ने खजाना और असबाब लूटना आरम्भ किया। सारी सेना में भय और आतंक व्याप गया। इसी समय उपयुक्त अवसर समझ शुजा ने एक बहुत बड़ा आक्रमण किया जिससे औरङ्गजेब की सेना में भगदड़ मच गई। औरङ्गजेब भागती सेना को रोक ही रहा था, कि एक तीर सामने से औरङ्गजेब का महावत मारा गया और उसे हाथी का सम्हालना कठिन हो गया। वह बिल्कुल लाचार होकर हाथी से उतरना चाह ही रहा था कि मीरजुमला घोड़ा दौड़ाता आया और कहा—"हजरत, यह क्या गजब करते हैं, यह दक्खन नहीं है, क्या भाग कर दक्खन जाइयेगा।" इस समय सन्ध्या हो रही थी और मीरजुमला दिनभर बहुत व्यस्त रहा था। औरङ्गजेब हाथी पर जम गया। पर उसके चारों ओर शत्रु फैल गए थे और उसे भय हो रहा था कि कहीं मैं शत्रु के हाथ न पड़ जाऊँ।

इसी समय जुल्फिकार खाँ और मुहम्मद सुलतान ने अपनी ताजा दम फौजों को आगे बढ़ा कर शत्रु पर हमला किया। शुजा की फौजों

की कतारें बिखरने लगीं। मीरजुमला के प्रभाव से मारवाड़ी सेना लौट पड़ी। अब सारी ही शाही सेना आगे बढ़ी और उसने शुजा के मध्य भाग को चारों ओर से घेर लिया। तोपों के गोले शुजा के सिर पर से जा रहे थे। इससे वह ख़तरे से बचने के लिए हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हो गया। शुजा के ऐसा करते ही युद्ध की समाप्ति हो गई। जो भूल औरंगजेब करते-करते बचा, वह शुजा ने की। हाथी को सूना देख सेना में यह अफ़वाह फैल गई कि शुजा मारा गया और देखते ही देखते उसके बंगाली सैनिक भाग खड़े हुए। शुजा अपने लड़कों और लेकर आलम के साथ रणक्षेत्र से भाग गया। औरङ्गजेब ने उसकी छावनी लूट ली।

: ६७ :

औरङ्गजेब की उलझन

औरङ्गजेब की इस आकस्मिक जीत को देख कर राजा जसवन्त सिंह युद्ध में जो हाथ लगा लेकर आगरे की ओर चल दिए। जिस समय वे आगरे पहुँचे, आगरे में यह अफ़वाह फैल चली थी कि औरङ्गजेब लड़ाई में हार गया और मीरजुमला के साथ पकड़ लिया गया और शुजा अपनी विजयिनी सेना लिये आ रहा है। इन समाचारों को सुन कर आगरे के हाकिम शाइस्ता खाँ, जो औरङ्गजेब के मामा थे, बहुत घबरा गए और ज़हर पीकर जान देने पर आमादा हो गए। परन्तु उनके खानदान वालों ने प्याला उनके हाथ से छीन कर फेंक दिया। दो दिन तक आगरे में अन्धेरगर्दी रही। यदि जसवन्त सिंह चाहते तो इस बीच में शाहजहाँ को क़ैद से छुड़ा सकते थे, पर वह यह भी न कर सके और आगरे में अधिक ठहरना ठीक न समझ मारवाड़ को कूच कर गए।

औरङ्गजेब यद्यपि लड़ाई जीत गया था—परन्तु वह बड़ी ही उलझन में फँस गया। उसकी बड़ी चिन्ता उसे जसवन्त सिंह की थी। वे न जाने आगरे में जाकर क्या उत्पात खड़ा करें। आगरे की अब उसे ज़बर्दस्त चिन्ता लग गई और उसने निर्णय किया कि आगरे लौटना उसके लिए आवश्यक है। उसे यह भी शीघ्र ही मालूम हो गया कि इस लड़ाई में शुजा की कुछ विशेष हानि नहीं हुई है। उसकी उदारता और सज्जनता के कारण वे सब राजा—जिनके राज्य गंगा के दोनों किनारों पर थे—उसकी सहायता के लिए सेनाएँ भेज रहे थे। उसने यह भी सुना कि शुजा इलाहाबाद में मोर्चा जमाना चाहता है, जो गंगा घाट के रूप में बंगाल का द्वार है।

अब औरङ्गजेब की आशाएँ केवल दो व्यक्तियों पर आधारित थीं। एक उसका बड़ा लड़का मुहम्मद सुलतान और दूसरा मीरजुमला। परन्तु इन दोनों से वह भय भी खाता था। जबसे मुहम्मद सुलतान ने शाहजहाँ को क़ैद किया और आगरे के क़िले पर विजय पाई थी, उसके हौसले बढ़ गए थे और वह कुछ निरंकुश और स्वतन्त्र हो गया था। मीरजुमला के धैर्य, साहस और सद्गुणों का औरङ्गजेब प्रशंसक था। पर उसकी शक्ति से डरता था। भारतवर्ष भर में यह प्रसिद्ध था कि उसके पास बेशुमार धन है और वह बीस मन हीरों का स्वामी है। यह भी सब जानते थे कि वह युक्ति, नीति और बुद्धि से कठिन-से-कठिन काम कर सकता है। कूटनीति-पटु औरङ्गजेब चाहता था कि ये दोनों राजधानी से दूर भी रहें और इन्हें बुरा भी न लगे। इसलिए एक बड़ी सेना उन दोनों को सुपुर्द कर उन्हें शुजा के पीछे भेज दिया। विदा करते समय मीरजुमला से उसने कहा—"शुजा के बाद बंगाल के ज़रख़ेज़ सूबे की हुकूमत आपके ही कब्ज़े में रहेगी। बल्कि आपके बाद आपका बेटा भी इस सूबेदारी का मुस्तहक़ समझा जायगा। गो कि आपकी ख़िदमतें बहुत सी इनायतों के काबिल हैं। मगर उनमें से एक ख़्वाहिश यह है कि आप जब शुजा पर फ़तह पा लेंगे—तब,

अमीरुल उमरा का खिताब जो हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा खिताब है, आपको दिया जायगा।"

इस प्रकार मीरजुमला को संतुष्ट करके उसने अपने बेटे मुहम्मद सुलतान से कहा—"बेटा, ख्याल करो कि मेरी औलाद में तुम सबसे बड़े हो और अपने ही काम पर जाते हो। बेशक, तुमने बड़े-बड़े काम किए हैं, मगर सच पूछो तो अभी कुछ नहीं हुआ है। जब तक सुल तान शुजा को—जो हमारा सबसे बड़ा दुश्मन है, शिकस्त देकर न पकड़ लाओ, हमारे सारे ही काम अधूरे हैं।" इतना कह कर औरङ्गजेब ने मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान को खिलअत दे अनेक हाथी घोड़े भेंट दिए और विदा किया।

परन्तु उसने मुहम्मद सुलतान की बेगम और मीरजुमला के बेटे मुहम्मद अमीन को अपने पास रोक लिया। उसने मुहम्मद सुलतान से कहा— 'बेगम गोलकुण्डा के बादशाह की बेटी है, ऐसी ऊँचे खानदान की खातून को लड़ाई के मैदान में जाना मुनासिब नहीं है।" मुहम्मद अमीन की बाबत यह कहा—"उसकी उम्र बहुत कम है और हमें उसे देखकर बहुत मुहब्बत होती है। मैं कुछ दिन उसे अपनी आँखों के सामने रखूँगा और उसकी तालीम का उम्दा बन्दोबस्त करूँगा।" पर वास्तव में उन दोनों की जान बंधक थी। जिसके कारण मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान किसी प्रकार का कपटाचरण न कर सकें।

यह सब इन्तजाम करके और सब आगा-पीछा सोच कर औरङ्गजेब आगरे लौटा।

: ६८ :

शुजा की शामत

रणक्षेत्र से भाग कर शुजा ने गंगा के इस पार आकर इलाहाबाद में दम लिया। वह इस बात से डर रहा था कि बंगाल के निचले भाग के वे राजा लोग जो उसकी लूट-खसोट के शिकार बने थे—इस

अवसर पर उपद्रव न खड़ा कर दे। जब उसे औरंगजेब के प्रबन्ध का पता लगा तो उसे यह भय हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि मीरजुमला इलाहाबाद को छोड़ किसी दूसरे घाट से गंगा पार कर पीठ पर आ पहुँचे और उसका बंगाल लौटना ही असंभव हो जाय। इन सब बातों पर भलीभाँति विचार कर वह इलाहाबाद से हट कर बनारस और पटना होता हुआ मुंगेर में मुकीम हुआ।

मुंगेर गंगा तट पर एक छोटा-सा शहर था। उसके एक ओर पहाड़ और दूसरी ओर सघन जंगल और नदी थी। सैनिक दृष्टि से यह बंगाल का द्वार समझा जाता था। यहाँ उसने दृढ़ मोर्चा स्थापित किया और नगर तथा नदी के किनारे से पहाड़ तक एक गहरी खाई खुदवाई। अब वह गंगा के घाट को रोककर मीरजुमला की ताक में बैठ गया। थोड़ी-सी शाही सेना आई जिसे वह पन्द्रह दिन तक रोके बैठा रहा। पर अब उसे यह सूचना मिली कि इस सेना में मीरजुमला नहीं है, वह सिर्फ धोखे के लिए भेजी गई थी। मीरजुमला खड़गपुर के राजा बहरोज की मदद से अपनी सेना के साथ मुंगेर के किले से दक्षिण-पूर्व की घाटियों और जंगलों में होकर उसकी पीठ पर पहुँच चुका है। यह सुनते ही शुजा साहिबगंज की ओर दौड़ा और उसने वहाँ एक दीवार बनाकर वहाँ की सकरी घाटी का मार्ग रोक लिया। इससे परिश्रम और खर्च से बनाई खाई छोड़ देनी पड़ी। मुंगेर और राजमहल के बीच गंगा कई चक्कर खाकर गई है, फिर भी बहुत कष्ट उठाकर शुजा मीरजुमला से प्रथम ही राजमहल जा पहुँचा और वहाँ अपना मोर्चा जमा लिया। मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान अपने बाएँ हाथ पर अनेक दुर्गम और भयानक मार्गों को पार करते हुए इसलिए गंगा की ओर चले कि उनका भारी तोपखाना और सेना जल मार्ग से आ रही थी। वे उन्हें साथ-साथ लेना चाहते थे। उन्होंने वीरभूमि और चन्नपर के जमींदारों को भी मिला लिया था। अभी वे वहीं तक पहुँच पाए थे कि शाही सेना में यह अफवाह फैल गई कि दारा अजमेर की लड़ाई

में बीठकर राजपूतों से बदला ले रहा है। इस अफवाह से परेशान होकर मीरजुमला के राजपूत सैनिक सेना छोड़ अपने-अपने घरों को रवाना हो गए। परन्तु मीरजुमला ने अपनी सेना को सम्हाला और अन्त में राजमहल के मैदान में आ डटा। पाँच दिन घनघोर युद्ध हुआ और मीरजुमला की तोपों ने उसकी बुर्जियों को जो मिट्टी और दृक्षों की डालों से बनाई गई थीं नष्ट कर दिया। अब उसे बरसात का भी भय था, उसे राजमहल वहाँ से भागना पड़ा। वो तोपें भी वह छोड़ गया।

मार्च समाप्त हो रहा था। मीरजुमला का राजमहल पर अधिकार होने से गंगा के पश्चिम का सारा प्रदेश शुजा के हाथ से निकल गया।

शुजा के साथ अब केवल पाँच हजार सैनिक रह गए थे और उसकी स्थल सेना लड़ने के योग्य न रह गई थी। उधर मीरजुमला का लश्कर खूब मजबूत था। पर जलसैन्य नाकाफी थी। शुजा के साथ बड़ी-बड़ी तोपें थीं, जिन्हें यारोपियन चलाते थे। फिर बंगाल की समूची जलसेना भी उसी के अधिकार में थी। शुजा ने गौर किले से चार मील पश्चिम टाँडा को अपना प्रधान सैनिक कैम्प बनाया और गंगा के पूर्वी किनारों पर मौके मौके खाइयाँ खादीं।

इस समय मीरजुमला ने उसका पीछा नहीं किया। उसे भय था कि शुजा छापा मारने की इच्छा से छिपा न बैठा हो। इस समय रात ही में भारी वर्षा हो गई। लाचार वर्षा की समाप्ति तक मीरजुमला को राजमहल में ही ठहरना पड़ा।

इससे शुजा को तैयार होने का पूरा मौका मिल गया। उसने नई सेना भरती की। जिनमें अधिकांश पुर्तगीज थे जो कुछ तोपों के साथ बंगाल के निचले प्रान्तों में आ गए थे। ये सब अफगान और दोगले सब मिलाकर नौ-दस हजार थे जिन्हें अपने सद्व्यवहार से शुजा ने अपना साथी बना लिया। इस समय मीरजुमला की फौजें गंगा के पूरे पश्चिम किनारे तक फैली हुई थीं। उत्तर में मुहम्मद मुराद बेग राजमहल में था। शाहजादा स्वयं सेना के एक बड़े भाग का लिए सुतिडकार कों

और इस्लाम खाँ के साथ दक्षिण में तेरह मील की दूरी पर दोगाची स्थान पर शुजा के सामने डटा था। आठ मील और दक्षिण में दूधपुर में अलीकुली खाँ बैठा था। आठ हजार चुने सवारों के साथ मीर जुमला मुगल सीमा के पश्चिम छोर पर राजमहल से अट्ठाईस मील दक्षिण में दूरी पर अधिकार जमाए बैठा था।

मीरजुमला के आदेश से दोगाची के पड़ाव से शुजा पर आक्रमण किए गए जिनमें सफलता मिली। परन्तु तीसरे आक्रमण में मीरजुमला को बहुत हानि उठानी पड़ी। उसके अनेक उच्च अधिकारी और सैनिक मारे गए और कैद हुए।

इसी समय शाहजादा मुहम्मद सुलतान दोगाची में अपने डेरे से चुपचाप भागकर शुजा से जा मिला। बहुत दिनों तक मीरजुमला का हुक्म उठाते उठाते वह तंग आ गया था। वह अपने को सारी सेना का अफसर समझता था और मीरजुमला का अनुशासन उसे सह्य न था। वह मीरजुमला को तिरस्कार की दृष्टि से देखता था। वह दिन-दिन दंभी और उद्दण्ड होता जाता था। एक दिन बात ही बात में उसने कह दिया कि "आगरे के किले की दस्तयाबी मेरी ही कोशिशों और मिहनत से हुई, पस, अगर हजरत इसके लिए किसी के ममनून हों तो उन्हें मेरा ही ममनून होना चाहिए।"

ये बातें औरंगजेब के कान तक भी पहुँचीं और वह नाराज हो गया। यह बात शाहजादे से छिपी न रही। वह डर गया कि कहीं उसे कैद न कर लिया जाय। अन्त में एक रात वह चुपचाप चलकर शुजा के लश्कर में जा पहुँचा। शुजा ने उसे अपनी पुत्री गुलरुख बानू ब्याह देने और तब राजगद्दी प्राप्त करने में उसको मदद देने का शुभ वचन दिया था। पर जब वह मूर्ख शाहजादा अकेला उसके लश्कर में जा पहुँचा, तो शुजा ने उसपर विश्वास नहीं किया। उसने समझा कि कहीं यह औरंगजेब की चाल न हो। मुहम्मद सुलतान ने बड़ी-बड़ी प्रतिज्ञाएँ कीं, बहुत-बहुत कसमें खाईं फिर भी शुजा ने उसे अपनी सेना में

कोई अधिकार नहीं सौंपा। वह उसके चाल-चलन की जाँच ही करता रहा।

ज्योंही मीरजुमला को इसकी सूचना मिली—वह तुरन्त होमाली पहुँचा और सेना में अनुशासन स्थापित किया। दूसरे नायकों ने मीर-जुमला को अपना अधिपति मान लिया और उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार उसने बड़ी ही आफत से शाही लश्कर को बचाया। इस सेना ने केवल एक ही आदमी खोया—वह था केवल शाहज़ादा।

वर्षा ऋतु के कारण अब युद्ध असम्भव हो गया। बंगाल में वर्षा बहुत होती है। मीरजुमला ने मासूमाबाज़ार में डेरा डाला और शाही सेना ज़ुल्फ़िकार खाँ की अध्यक्षता में राजमहल में ठहरी रही। वर्षा के कारण राजमहल के आसपास का तालुका दलदल बन गया। मगर क खाद्य सामग्री शुजा ने रोक दी। मुगल सेना के पास अनाज की बड़ कमी हो गई। इसी समय शुजा ने अकस्मात् राजमहल पर आक्रम करके उसे अधिकृत कर लिया। मुगल सेना बुरी तरह हारी और उ सारे सामान पर शुजा का अधिकार हो गया।

मुहम्मद सुलतान से शुजा की नहीं पटी और वह वर्षा ऋतु समाप्त होने के प्रथम ही भागकर मीरजुमला के लश्कर में आ मिला। मीर-जुमला ने उसका साधारण सत्कार किया और कहा—"अगर्चे आपका कुसूर बहुत बड़ा है, मगर खैर, बादशाह से कोशिश करके माफ़ी की दरख्वास्त करूँगा।"

। ६९ ।

औरङ्गज़ेब का नया क़दम

आगरे में पहुँचकर औरङ्गज़ेब ने नगर की सब व्यवस्था देखी। वालों को त्रुटि पाई उसे ठीक किया। किले के पहरे का पूरा इन्तज़ाम किया मुराद बख्श को उसने ग्वालियर के किले में भेज दिया, और अब

दिल्ली आकर उसने ताऊस पर बैठ कर खुलेआम दरबार करना शुरू कर दिया।

इसी समय उसे सूचना मिली कि शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान ने विद्रोह किया है। पर वह सब परिस्थिति देखकर चुप हो गया। बाद में जब उसे सूचना मिली कि वह फिर वापस आ गया है तो उसने मीर जुमला को हुक्म भेजा कि उसे तुरन्त दिल्ली भेज दो। भाग्यहीन मुहम्मद सुलतान दिल्ली भेज दिया गया। परन्तु उसने ज्योंही यमुना पार की— शाही सिपाहियों ने उसे घेरकर पकड़ लिया, और हथकड़ी बेड़ियों में जकड़ कर जबर्दस्ती एक अम्बारी में बन्द करके ग्वालियर की ओर ले चले। वहाँ वह क़ैद कर दिया गया और आगे चलकर वहीं उसकी मृत्यु हुई।

अपने बड़े बेटे मुहम्मद सुलतान को ग्वालियर के किले में क़ैद करके उसने शाहज़ादा मुअज्ज़म से कहा—"ऐसा नहीं कि तुम भी तरक्क़ी और बुलन्द परवाज़ी के ख़यालात में भाई की तरह हो जाओ और वही मुआमिला तुमको पेश आए जो उसको पेश आया है। याद रक्खो, सल्तनत एक ऐसा नाज़ुक मुआमिला है, कि बादशाहों को अपने हाथ से भी हसद और बदगुमानी होती है। पस, यह ख़्याल कभी न करना कि औरङ्गज़ेब भी अपने बेटों से वही सब देख सकता है, जो बहाँगीर और शाहजहाँ ने आँखों देखा था। या जिस तरह शाहजहाँ ने तख़्तोताज खो दिया, औरङ्गज़ेब भी उसी तरह खो सकता है।"

शाहज़ादा मुअज्ज़म ने हर तरह दीनता दिखा कर बाप की अधीनता और आज्ञाकारिता प्रकट की।

मथुरा की लूट में जो माल जसवन्त सिंह के हाथ लगा था, उससे उन्होंने एक बड़ी सेना एकत्र कर ली और दारा शिकोह को लिखा कि वह आगरे चला आए, मैं उसे राह में मिल जाऊँगा। दारा ने भी बहुत सी सेना एकत्र कर ली थी, पर वह कुछ काफ़ी न थी।

जसवन्त सिंह का पत्र पाते ही वह अहमदाबाद से चल पड़ा। उसे बहुत आशा बँध गई। उसने सोचा कि जब मैं ऐसे नामी राजा की राजधानी में पहुँचूँगा तो मेरे शुभचिन्तक अवश्य मेरे झण्डे के नीचे एकत्र हो जायँगे। इसी भरोसे वह बड़ी तेज़ी से अजमेर की ओर चला।

परन्तु महाराजा जसवन्त सिंह ने अपना वचन पालन नहीं किया। जय सिंह ने एक पत्र देकर उन्हें ऊँच-नीच समझा कर रोक दिया। उन्होंने उन्हें समझाया—"आपने डूबते हुए का साथी बनने में क्या लाभ सोचा है? इसका परिणाम तो यही होगा कि आपके कुटुम्ब की दुर्दशा हो। मैं भी एक राजा हूँ और निवेदन करता हूँ कि राजपूत वीरों का रक्त व्यर्थ बहाने से क्या लाभ है। आप यह भी जान रखिए कि अन्य राजपूत राजा आपको सहायता नहीं देंगे। मैं ही उन्हें रोकूँगा। इसलिए आप ऐसी आग मत भड़काइये जो देश भर में फैल जाय और उसे कोई न बुझा सके। आप यदि दारा को उसके भाग्य के भरोसे छोड़ देंगे तो औरंगज़ेब भी आपको क्षमा कर देगा और आप से वह धन भी नहीं माँगेगा जो खजुआ की लूट में आपने लूटा है। इसके अतिरिक्त आपको गुजरात की सूबेदारी भी मिल जायगी। इसका लाभ आप समझ सकते हैं कि आप एक ऐसे प्रान्त के अधिकारी हो जायँगे जो आपके राज्य के निकट है और जहाँ आप आनन्द से रह सकते हैं और लाभ उठा सकते हैं—इन सब बातों को जो मैंने पत्र में लिखी हैं, पूरा करने का जिम्मा मैं लेता हूँ।"

इस पत्र को पाकर जसवन्त सिंह चुपचाप बैठा रहा और अभागा दारा ज्योंही अजमेर पहुँचा—औरंगज़ेब की सेना ने उसे घेर लिया।

७० :

दोराई की लड़ाई

ठाह से पचपन मील पूर्व में इस बार दारा ने कच्छ के रन को पार किया और भुज और काठियावाड़ में नवानगर की ओर तीन हज़ार

सैनिकों के साथ वह अहमदनगर पहुँचा। वहाँ पर शाहनवाज खाँ दारा के साथ हो गया। सूरत के तोपखाने को भी वह ले आया और अजमेर की ओर चला। परन्तु अजमेर पहुँचते ही उसे जसवन्त सिंह के विश्वासघात का पता लग गया। फिर भी अब उसका वापस लौटना संभव न था। गर्मी बहुत सख्त थी और उस इलाके में पानी की भारी कमी थी फिर विरोधी राजाओं के राज्य में होकर तीस पैंतीस दिन की यात्रा सफर तय करना किसी भी हालत में दारा के लिए सम्भव न था, जिस पर औरंगजेब जैसा शत्रु उसके सिर पर था, जिसके पास बढ़िया सेना थी। अतः अब दारा को युद्ध करने को छोड़ दूसरा उपाय न था।

परन्तु यह स्पष्ट था कि यह बराबर की लड़ाई न थी। अजमेर से चार मील दक्षिण में देवराई की घाटी में औरंगजेब को रोकने का उसने निश्चय किया। उसके दोनों बाजू बिटली और गोकला पहाड़ियों से सुरक्षित थे और अजमेर का समृद्ध नगर उसके पीछे था। अपनी सेना के दक्षिण में दोनों पहाड़ियों के बीच की समतल भूमि में उसने एक दीवार बनवाई और उसके सामने खाइयाँ और स्थान-स्थान पर बुर्जियाँ बनवाईं।

औरंगजेब ने दक्षिण दिशा से इन मोर्चेबन्दियों का सामना किया। पहली मार्च के संध्याकाल में उसने दारा पर गोलाबारी शुरू कर दी। परन्तु शत्रु की खाइयाँ बड़ी दुर्गम थीं, दारा की तोपें और बन्दूकची भी ऊँचे स्थानों पर थे वे औरंगजेब के पैदलों और बन्दूकचियों को मौत के मुँह में धकेलने लगे। दो सप्ताह में भी औरंगजेब पंक्ति भेद न कर सका। तब उसने सेनापतियों से सलाह कर नई योजना बनाई और एक मजबूत दस्ते को ले शाहनवाज खाँ के ऊपर जो दारा के बाएँ पक्ष में था—जोर का आक्रमण किया। उधर जम्मू के पहाड़ी राजा राजरूप के पहाड़ी सैनिकों ने गोकला पहाड़ी पर चढ़ने का एक अज्ञात मार्ग ढूँढ निकाला और वह राजा चुपचाप उस पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया।

थी। कुछ बड़े टट्टू भी साथ थे। थोड़े से नौकर-चाकर थे—जिन्होंने साथ नहीं छोड़ा था। तीन दिन वह बिना रुके चलता चला गया। गर्मी इतनी प्रचंड थी और धूल इतनी उड़ती थी कि दम घुटा पड़ता था। गाड़ी का एक बैल मर गया था। दूसरा भी मरने की दशा को पहुँच चुका था। उसकी बेगम के पैर में एक गहरा घाव हो गया था, जो सड़ गया था। वह एशिया के सबसे समृद्ध, शक्तिशाली साम्राज्य का मनोनीत युवराज ऐसे दीन-हीन वेश में उस उजाड़ रन को पार कर सिन्ध की दक्खिनी सीमा की ओर जा रहा था।

: ७१ :

विश्वासघाती के हाथ में

औरंगजेब की इस प्रबल शत्रु पर तीखी नजर थी। उसने राजा जय सिंह और बहादुर खाँ को जो दारा के पीछे अजमेर से भेज ही दिया था, अब लाहौर के हाकिम खलीलुल्ला खाँ को लिखा कि वह भक्कर जाकर दारा की राह रोक ले। अब सिन्ध के अधिकारी के और बघीर के दस्ते उत्तर-पूर्व से दारा को घेरे हुए आगे बढ़ रहे थे। उसके लिए भाग निकलने को केवल एक ही राह थी और वह उत्तर-पश्चिम को मुड़ा। सिन्ध नदी पार की, और कन्धार की राह ईरान भाग जाने के इरादे से वह सहवान जा पहुँचा।

जब जय सिंह कच्छ के रन को पार कर—बड़ी-बड़ी कठिनाइयों को झेल सिविस्तान की सीमा पर सिन्धु तट पर पहुँचे, तो उन्हें मालूम हुआ कि दारा भारत की मुगल सीमा पार कर गया है और वह सिन्धु के किनारे-किनारे उत्तर की राह, भारत से बाहर की ओर जा रहा है।

इस समय उसका ईरान को निकल जाना अधिक अच्छा होता। परन्तु उसकी बेगम नादिरा बानू ने, जो उस समय इस भयानक यात्रा के कष्टों के कारण सख्त बीमार थी, कहा—"कि अगर आप ईरान

सैनिकों के साथ वह अहमदनगर पहुँचा। वहाँ पर शाहनवाज़ खाँ दारा के साथ हो गया। सूरत के तोपखाने को भी वह ले आया और अजमेर की ओर चला। परन्तु अजमेर पहुँचते ही उसे जसवन्त सिंह के विश्वासघात का पता लग गया। फिर भी अब उसका वापस लौटना संभव न था। गर्मी बहुत सख्त थी और उस इलाके में पानी की भारी कमी थी फिर विरोधी राजाओं के राज्य में होकर तीस पैंतीस दिन का रास्ता लश्कर सहित करना किसी भी हालत में सम्भव न था, तिस पर औरंगज़ेब जैसा शत्रु उसके सिर पर था, जिसके पास बढ़िया सेना थी। अतः अब दारा को युद्ध करने को छोड़ दूसरा उपाय न था।

परन्तु यह स्पष्ट था कि यह बराबर की लड़ाई न थी। अजमेर से चार मील दक्षिण में दोराई की घाटी में औरंगज़ेब को रोकने का उसने निश्चय किया। उसके दोनों बाजू बिटली और गोकला पहाड़ियों से सुरक्षित थे और अजमेर का समृद्ध नगर उसके पीछे था। अपनी सेना के संरक्षण में दोनों पहाड़ियों के बीच की समतल भूमि में उसने एक दीवार बनवाई और उसके सामने खाइयाँ और स्थान-स्थान पर बुर्जियाँ बनवाईं।

औरंगज़ेब ने दक्षिण दिशा से इन मोर्चेबन्दियों का सामना किया। पहली मार्च के सन्ध्याकाल में उसने दारा पर गोलाबारी शुरू कर दी। परन्तु शत्रु की खाइयाँ बड़ी दुर्गम थीं। दारा की तोपें और बन्दूकची भी ऊँचे स्थानों पर थे। वे औरंगज़ेब के पैदलों और बन्दूकचियों को मौत के मुँह में धकेलने लगे। दो सप्ताह में भी औरंगज़ेब पछि पैर न बढ़ सका। तब उसने सेनापतियों से सलाह कर नई योजना बनाई और एक मज़बूत दस्ते को ले शाहनवाज़ खाँ के ऊपर जो दारा के बाएँ पक्ष में था—ज़ोर का आक्रमण किया। उधर जम्मू के पहाड़ी राजा राजरूप के पहाड़ी सैनिकों ने गोकला पहाड़ी पर चढ़ने का एक अज्ञात मार्ग ढूँढ निकाला और वह राजा चुपचाप उस पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया।

जसवन्त सिंह का पत्र पाते ही वह अहमदाबाद से चल पड़ा। उसे बहुत आशा बँध गई। उसने सोचा कि जब मैं ऐसे नामी राजा की राजधानी में पहुँचूँगा तो मेरे शुभचिन्तक अवश्य मेरे झण्डे के नीचे एकत्र हो जायेंगे। इसी भरोसे वह बड़ी तेजी से अजमेर की ओर चला।

परन्तु महाराजा जसवन्त सिंह ने अपना वचन पालन नहीं किया। जय सिंह ने एक पत्र देकर उन्हें ऊँच नीच समझा कर रोक लिया। उन्होंने उन्हें समझाया—"आपने डूबते हुए का साथी बनने में क्या लाभ सोचा है? इसका परिणाम तो यही होगा कि आपके कुटुम्ब की दुर्दशा हो। मैं भी एक राजा हूँ और निवेदन करता हूँ कि राजपूत वीरों का रक्त व्यर्थ बहाने से क्या लाभ है। आप यह भी ध्यान रखिए कि अन्य राजपूत राजा आपको सहायता नहीं देंगे। मैं ही उन्हें रोकूँगा। इसलिए आप ऐसी आग मत भड़काइये जो देश भर में फैल जाय और उसे कोई न बुझा सके। आप यदि दारा को उसके भाग्य के भरोसे छोड़ देंगे तो औरङ्गजेब भी आपको क्षमा कर देगा और आप से वह धन भी नहीं माँगेगा जो खजुआ की लूट में आपने लूटा है। इसके अतिरिक्त आपको गुजरात की सूबेदारी भी मिल जायगी। इसका लाभ आप समझ सकते हैं कि आप एक ऐसे प्रान्त के अधिकारी हो जायेंगे जो आपके राज्य के निकट है और जहाँ आप आनन्द से रह सकते हैं और लाभ उठा सकते हैं—इन सब बातों को जो मैंने पत्र में लिखी हैं, पूरा करने का जिम्मा मैं लेता हूँ।"

इस पत्र को पाकर जसवन्त सिंह चुपचाप बैठा रहा और अभागा दारा ज्योंही अजमेर पहुँचा—औरङ्गजेब की सेना ने उसे घेर लिया।

: ७० :

दोराई की लड़ाई

ठट्ठा से पचपन मील पूर्व में हटकर दारा ने कच्छ के रन को पार किया और भुज और काठियावाड़ में नवानगर की राह तीन हजार

सैनिकों के साथ वह अहमदनगर पहुँचा। वहाँ पर शाहनवाज़ खाँ दारा के साथ हो गया। सूरत के तोपखाने को भी वह ले आया और अजमेर की ओर चला। परन्तु अजमेर पहुँचते ही उसे जसवन्त सिंह के विश्वासघात का पता लग गया। फिर भी अब उसका वापस लौटना संभव न था। गर्मी बहुत सख्त थी और उस इलाके में पानी की भारी कमी थी फिर विरोधी राजाओं के राज्य में होकर तीस पैंतीस दिन की यात्रा करके दक्षिण जाना किसी भी हालत में दारा के लिए सम्भव न था, तिस पर औरङ्गज़ेब जैसा शत्रु उसके सिर पर था, जिसके पास बढ़िया सेना थी। अतः अब दारा को युद्ध करने का कोई दूसरा उपाय न था।

परन्तु यह स्पष्ट था कि यह बराबर की लड़ाई न थी। अजमेर से चार मील दक्षिण में देवराई की घाटी में औरङ्गज़ेब को रोकने का उसने निश्चय किया। उसके दोनों बाजू बिठली और गोकला पहाड़ियों से सुरक्षित थे और अजमेर का समृद्ध नगर उसके पीछे था। अपनी सेना के बचाव में दोनों पहाड़ियों के बीच की समतल भूमि में उसने एक दीवार बनवाई और उसके सामने खाइयाँ और स्थान-स्थान पर बुर्जियाँ बनवाईं।

औरङ्गज़ेब ने दक्षिण दिशा से इस मोर्चेबन्दी का सामना किया। बारहवीं मार्च के संध्याकाल में उसने दारा पर गोलाबारी शुरू कर दी। परन्तु शत्रु की खाइयाँ बड़ी दुर्गम थीं। दारा की तोपें और बन्दूकची भी ऊँचे स्थानों पर थे। वे औरङ्गज़ेब के पैदलों और बन्दूकचियों को मौत के मुँह में धकेलने लगे। दो सप्ताह में भी औरंगज़ेब पंक्ति भेद न कर सका। तब उसने सेनापतियों से सलाह कर नई योजना बनाई और एक मज़बूत दस्ते को ले शाहनवाज़ खाँ के ऊपर जो दारा के बाएँ पक्ष में था—ज़ोर का आक्रमण किया। उधर जम्मू के पहाड़ी राजा राजरूप के पहाड़ी सैनिकों ने गोकला पहाड़ी पर चढ़ने का एक अज्ञात मार्ग ढूँढ़ निकाला और वह राजा चुपचाप उस पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया।

अब ज्यों ही दारा की सेना ने शाहनवाज खाँ के मोर्चे पर धावा बोला, साथ ही औरंगज़ेब का तोपख़ाना भी आग उगलने लगा। इससे दारा की सेना का अन्य भाग शाहनवाज को सहायता न पहुँचा सका। फिर भी शाहनवाज ने डट कर सामना किया। परन्तु अन्त में उसके पैर उखड़ गए और वह भाग चला। औरंगज़ेब ने खाइयों के किनारे तक के सारे मैदान पर अधिकार कर लिया। इसी समय राजरूप के सैनिकों ने गोकला की चोटी पर शाही झंडा गाड़कर ज़ोर से जयनाद किया। अब यह देख कर कि शत्रु पीठ पर भी आ पहुँचे, दारा की सेना निराश हो भाग चली। इसी समय औरंगज़ेब ने खाइयों पर हमला बोल दिया। अब तो सैनिक तथा सेनापति सब भाग खड़े हुए और मैदान औरंगज़ेब के हाथ रहा। गोकला पहाड़ी पर शत्रु का अधिकार हो जाने से दारा बहुत घबरा गया और घोड़े पर केवल बारह साथियों तथा अपने पुत्र सिपर शिकोह के साथ वह सिर पर पैर रखकर गुजरात की ओर भागा। जसवन्त सिंह के बहकाने से जो हज़ारों राजपूत युद्धक्षेत्र के पास ही एकत्र थे, उन्होंने दारा की सेना की सारी सामग्री और सामान ढोने वाले उसके बहुत से जानवर लूट लिए।

कहा जाता है कि इस युद्ध में शाहनवाज खाँ ने उसे पूरा धोखा दिया। प्रकट में वह लड़ रहा था, पर वह दुश्मन से मिला था। जो गोले छोड़े जाते थे, उनमें बीसियों बिना गोली की बारूद भरी थी। उनसे केवल शब्दमात्र ही होता था। शाहनवाज खाँ इसी लड़ाई में मारा गया और महाराज जयसिंह ने दारा को सूचना दी कि पकड़े जाने से बचना चाहते हो, तो तुरन्त युद्धक्षेत्र से अलग हो जाओ। इस पर विमूढ़ की भाँति दारा भाग खड़ा हुआ और खेत औरंगज़ेब के हाथ रहा। युद्ध के समय दारा ने अपना सारा ख़ज़ाना और हरम अजमेर में आनासागर के किनारे छोड़ा था। उन्हें लेकर किसी तरह उसके साथी मेड़ता में उससे आ मिले। यहाँ उसने सुना कि महाराज जयसिंह और बहादुर खाँ की अधीनता में ज़बर्दस्त फ़ौज उसके पीछे आ रही है।

अब दारा की सारी आशा अहमदाबाद पर निर्भर थी। मेड़ता में उसके पास दो हजार सवार एकत्र हो गए थे। पर कुछ राह ही में भागने लगे। कुछ गर्मी से मर गए। उसे इस सख्त गर्मी में यह लम्बा चौड़ा रास्ता विरोधी राजाओं के राज्य में होकर पार करना था। अब खेमे तक उसके पास न थे, फिर कोली लोग रात-दिन उसका पीछा कर रहे थे। वे अवसर पाते ही उसके सिपाहियों पर टूट पड़ते और लूटपाट कर उन्हें मार डालते थे। केवल एक पग पीछे रहना भी खतरनाक था। दिन पर दिन उसकी हालत खतरनाक होती जाती थी। उसके हाथी, घोड़े, ऊँट, सिपाही गर्मी से मरते जाते थे।

किसी तरह इन सब विपत्तियों से बचकर दारा ऐसे स्थान पर पहुँचा जहाँ से अहमदाबाद केवल एक दिन की राह पर था। उसे बड़ी आशा थी कि उसे अब आराम मिल जायगा। परन्तु वह अपने पीछे जिस व्यक्ति को अहमदाबाद का किलेदार बनाया गया था—वह औरंगजेब से मिल गया और दारा को उसके दूत ने सचेत किया कि नगर के निकट न आइए, फाटक बन्द हैं और सेना शस्त्र-सज्जित आपको गिरफ्तार करने को तैयार खड़ी है।

यह सुनकर दारा की बेगम रोने-पीटने लगीं। दारा भी बाल नोचने लगा। उसके पास अब एक भी कोना न था। उसकी बेगम और स्त्रियाँ केवल एक कनात की आड़ में थीं, जिसकी रस्सियाँ बहली के पहियों में बँधी थीं। स्त्रियों के विलाप ने सबको रुला दिया। सब एक दूसरे का मुँह ताक रहे थे, किसी को राह न सूझती थी। दारा विक्षिप्त कनात के भीतर गया—स्त्रियों को तसल्ली दे जब वह बाहर आया, तब उसके मुँह पर मुर्दनी छाई हुई थी। वह किसी से कुछ कहता था, किसी से कुछ। एक साधारण सिपाही से भी पूछता था कि वह क्या करे। वह नहीं जानता था कि कहाँ जाय। आखिर वह वहाँ से आगे बढ़ा। अब उसके पास केवल एक घोड़ा, एक बहली और पाँच ऊँट थे। घोड़े पर वह स्वयं और ऊँटों पर उसकी बेगमात

थी। कुछ बद्-रद्-भी साथ थे। थोड़े से नौकर-चाकर थे—जिन्होंने साथ नहीं छोड़ा था। तीन दिन वह बिना रुके चलता चला गया। गर्मी इतनी भयंकर थी और धूल इतनी उड़ती थी कि दम घुटा पड़ता था। बहली का एक बैल मर गया था। दूसरा भी मरने की दशा को पहुँच चुका था। उसकी बेगम के पैर में एक गहरा घाव हो गया था, जो सड़ गया था। वह एशिया के सबसे समृद्ध, शक्तिशाली साम्राज्य का मनोनीत युवराज ऐसे हीन-हीन वेश में उस उजाड़ रन को पार कर सिन्ध की दक्खिनी सीमा की ओर जा रहा था।

: ७१ :

विश्वासघाती के हाथ में

औरंगज़ेब की इस प्रबल शत्रु पर तीखी नज़र थी। उसने राजा जय सिंह और बहादुर खाँ को तो दारा के पीछे अजमेर से भेज ही दिया था, अब लाहौर के हाकिम खलीलुल्ला खाँ को लिखा कि वह भक्खर जाकर दारा की राह रोक ले। अब सिन्ध के अधिकारी के और जयसिंह के दस्ते उत्तर-पूर्व से दारा को घेरे हुए आगे बढ़ रहे थे। उसके लिए भाग निकलने को केवल एक ही राह थी और वह उत्तर-पश्चिम को मुड़ा। सिन्ध नदी पार की, और कन्धार की राह ईरान भाग जाने के इरादे से वह सहवान जा पहुँचा।

जब जय सिंह छोटे-बड़े रन को पार कर—बड़ी बड़ी कठिनाइयों को झेल सिविस्तान की सीमा पर सिन्धु तट पर पहुँचे, तो उन्हें मालूम हुआ कि दारा भारत की मुग़ल सीमा पार कर गया है और वह सिन्धु के किनारे-किनारे उत्तर की राह, भारत से बाहर की ओर जा रहा है।

इस समय उसका ईरान को निकल जाना अधिक अच्छा होता। परन्तु उसकी बेगम नादिरा बानू ने, जो उस समय इस भयानक यात्रा के कष्टों के कारण सख्त बीमार थी, कहा—"कि अगर आप ईरान

जाने का कस्द करते हैं तो मुझे और मेरी बेटी को शाह ईरान की लौंडियाँ बनना पड़ेगा। जो ऐसी बेइज्जती की बात होगी, जिसे मुग़लिया खानदान कभी गवारा न करेगा।"

हाय रे मुग़लिया खानदान! इस बात को बेगम और दारा दोनों ही भूल गए कि जब हुमायूँ ने शेरशाह से हार कर ऐसी ही आपदाओं में पड़कर ईरान की शरण ली थी, तब उनकी बेगम भी उनके साथ थी, तब शाहे ईरान ने उनकी मर्यादा के अनुकूल ही अभ्यर्थना की थी।

अब दारा को अपने एक पुराने कृपापात्र दादर के पठान सरदार जीवन खाँ की याद आई। जिसका गाँव निकट ही था। वह एक बलवान और प्रसिद्ध जमींदार था। राहजनी और विद्रोह के अपराध में उसे दो बार शाहजहाँ ने हाथी के पाँव तले कुचल देने का दण्ड दिया था और दोनों बार दारा ने उसके प्राण की रक्षा की थी। दारा ने सोचा कि उससे कुछ सिपाहियों की सहायता मिल जाय तो ठट्ठे के किले को, जिसे मीरबाबा घेरे पड़ा था—कब्जे में कर ले और वहाँ जो खजाना है उससे नई सेना भरती करके भाग्य की परीक्षा करे। या फिर काबुल या कन्धार चला जाय।

बोलन घाटी की भारतीय सीमा के छोर से नौ मील पूर्व में स्थित दादर की वह जमींदारी थी—दारा को आशा थी कि दो-दो बार जिसने उसके प्राणों की रक्षा की है—उसके प्रति जीवन खाँ कृतज्ञता प्रकट करेगा।

जीवन खाँ के यहाँ जाने का नाम सुनकर स्त्रियाँ बहुत घबराईं और बोलीं—कि उस डाकू के घर जाना ठीक नहीं है। बेगम और शाहजादी तथा उसके पुत्र सिपर शिकोह ने उसके पैरों पर गिरकर कहा—"उधर मत जाइए, वह पठान भयानक डाकू है। उसका क्या भरोसा!" उन्होंने यह भी समझाया कि ठट्ठे के घेरे को बिना उठाए और बिना लड़ाई-झगड़े के भी आप काबुल जा सकते हैं, जहाँ का हाकिम महावत खाँ

आपकी सहायता करेगा। क्योंकि उसे वहाँ आपने ही हाकिम बनाया था। पर दारा ने न माना—और जीवन खाँ के यहाँ चला गया।

दारा को जीवन खाँ आदरपूर्वक घर ले गया। बेचारी नादिरा बेगम दादर पहुँचते-पहुँचते ही मार्ग के कष्टों से मर गई। इस दुःख से दारा पागल हो गया। उसने सब किया और उसकी लाश को अपने आध्यात्मिक गुरु मियाँ मीर के कब्रस्तान में गड़वाने को लाहौर भिजवा दिया। इस समय उसके कुछ साथी आ गए थे, उनमें से दस आदमियों को उसने अपने परमभक्त गुल मुहम्मद की अध्यक्षता में बेगम की लाश की रक्षा करने के लिए भेज दिया और कहला दिया कि लाहौर से उनकी इच्छा जहाँ हो चले जाँय। काबुल चलना चाहें तो हमारे साथ रहें।

जीवन खाँ ने समझा था कि दारा के साथ बड़ी फौज आती होगी। उसने उसे और उसके साथी सिपाहियों का आदर-सत्कार से ठहराया। पर जब देखा कि उसके साथ केवल दो-तीन सौ ही आदमी हैं, तो उसकी नीयत अशर्फियों से भरे सन्दूकों को देखकर बदल गई। जो लूटमार से अब भी उसके पास बच रहे थे, और भटक भटक कर उसके विश्वासी आदमी उन्हें यहाँ ले आए थे। उसने एक दिन रात के समय अचानक लुटेरों को जमा किया, और दारा के सब रुपए-पैसे, असबाब, स्त्रियों के आभूषण छीन लिए—और दारा और उसके पुत्र सिपहर शिकोह पर आक्रमण किया। जिन्होंने बाधा दी उन्हें तलवार के घाट उतार दिया। फिर उन दोनों भाग्यहीन बाप-बेटों को, दोनों शाहज़ादियों सहित हाथ-पाँव बाँध हाथी पर सवार कराया। एक बधिक को नंगी तलवार लेकर उनके पीछे बैठा दिया और कहा कि ये लोग ज़रा भी हाथ-पाँव हिलाएँ, या इनका कोई मददगार छुड़ाना चाहे तो उसी वक्त सिर काट डालना।

इस प्रकार अपमानजनक रीति से उसने दोनों बाप-बेटों को ठट्ट में मीरबाबा के सुपुर्द कर दिया।

७२

दिल्ली के बाजारों में

सावन की चमकीली धूप थी। दिल्ली के बाजारों में बड़ी उत्तेजना फैली थी। फटाफट सब दुकानें और कारबार बन्द होते जाते थे। लोग इधर-से उधर भागे जाते थे, शहर में बलवे के आसार नजर आ रहे थे। लोगों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ रही थीं और चारों ओर घबराहट फैल रही थी।

एक हथिनी झूमती झामती चाँदनी चौक में बढ़ी चली आ रही थी, वह कोई डीलडौल वाली सिंहलद्वीप की या पेगू की हथिनी न थी जिस पर शाहजादा सज धज कर बैठा करता था। एक गन्दी और मरियल हथिनी थी जिस पर खुले हौदे में एशिया का शानदार युवराज, मुगल साम्राज्य का कर्ता-धर्ता दारा और उसका राजकुमार सिपर शिकोह बैठा हुआ था जिसकी आयु केवल पन्द्रह साल की थी। इनके पीछे हाथ में नंगी तलवार लिए जेलखाने का अफसर गुलाम नजर बेग बैठा था। संसार के इस सबसे समृद्ध साम्राज्य के उत्तराधिकारी के गले में न तो हीरों का कण्ठा ही था, न हमेशा सुशोभित होने वाले जवाहरात ही से वह सुसज्जित था। उसके शरीर पर मलमल का कबा और सिर पर वह पगड़ी न थी, जो भारतवर्ष के बादशाह पहना करते हैं। वे पिता-पुत्र मोटे कपड़ों की मैली कुचैली बगलबन्दी पहने थे, जो शायद हफ्तों से नहीं बदली गई थी और जिसे गरीब-से-गरीब भी दिल्ली में पहनना नहीं पसन्द कर सकता था। एक गन्दी और काली-कलूटी पगड़ी उसके सिर पर लिपटी हुई थी। उसके पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थीं। हाथ जकड़ बंधे थे। उसका सिर नीचे झुका हुआ था—और नजर अपने ही पैरों पर थी। सावन की चमचमाती धूप उनके सिरों पर पड़ रही थी।

इस भाग्यहीन राजपुत्र को इस हीन दशा में देखने के लिए जगह-जगह भीड़ जमा हो जाती थी। लोग खड़े-खड़े दारा के भाग्य पर हाथ मलते और रोते थे। चारों ओर से लोगों के रोने चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। जगह-जगह लोग डाकू जीवन खाँ को गालियाँ दे रहे थे। बच्चे उत्तेजित होकर बुरी तरह चीख रहे थे। जीवन खाँ पठान, जिसे अब मलिक का ख़िताब तथा एक हज़ारी जात का मनसब मिला था—घोड़े पर सवार हथिनी के साथ था—जिसका नया नाम औरंगजेब ने बख्तियार खाँ रक्खा था।

सवारी आगे बढ़ती गई। साथ ही भीड़ बढ़ती गई। लोगों का रोना-चिल्लाना बढ़ता गया। एक फकीर ने दूर से देखा—वह दौड़ा हुआ दारा के सामने आया। दारा जब-जब बाज़ार में निकलता था, फकीरों पर अशर्फियाँ लुटाता था—यह फकीर भी उससे बहुत कुछ पाता था। वह अन्धा फकीर था। वह नहीं जानता था कि आज दारा दुर्दिन का शिकार हो रहा है। उसने सुना कि दारा की सवारी आ रही है। उसने दोनों हाथ पसार कर चिल्ला कर कहा—"दारा दाता, आज क्या इस फकीर को कुछ नहीं मिलेगा सरकार !"

दारा ने सुना। आँख उठाकर उसने फकीर को देखा, जिसकी अन्धी आँखें और हाथ उसी की ओर उठे हुए थे। उसने अपनी कमर में लिपटा हुआ वह कम्बल—जिससे उसका अंग ढँका था, उतार कर फकीर पर फेंक दिया।

दारा की यह उदारता और बेबसी देख लोग ज़ोर ज़ोर से दाग दाग कह कर रो उठे। बहुतों ने कुछ जीवन खाँ का पत्थरों से मारना प्रारम्भ कर दिया, यह देख जीवन खाँ प्राण लेकर भाग खड़ा हुआ और हथियारबन्द सिपाहियों की टुकड़ी ने भीड़ को चीर कर हथिनी को आगे बढ़ाया।

—:०:—

: ७३ :

क़त्ल

उसी कमबख़्त दिन की रात्रि को लाल किले में नए बादशाह का दीवाने ख़ास में दरबार जुड़ा था। शाइस्ता ख़ाँ, मुहम्मद अमीन ख़ाँ, बहादुर ख़ाँ और दानिशमन्द ख़ाँ आदि चुने हुए अमीर और वज़ीर हाज़िर थे। दरबार में दारा के भाग्य का फ़ैसला हो रहा था। अनेक हाफ़िज़, उलमा और मौलवी भी हाज़िर थे। शाहज़ादी रोशनआरा झरोखे में बैठी थी। उसने अपनी बारीक आवाज़ में इन शब्दों में कहा—

"इस्लाम और सल्तनत की भलाई और बहबूदी के लिए हम मुनासिब समझती हैं कि काफ़िर दारा को क़त्ल कर दिया जाय।"

दानिशमन्द ख़ाँ ने कहा—"यह ठीक न होगा, क़त्ल करने की फ़िलहाल ज़रूरत नहीं, मुमकिन है इससे शहर में बलवा हो जाय। उसे हिफ़ाज़त से ग्वालियर के किले में कैद कर लिया जाय।"

शाहज़ादी ने गुस्सा करके कहा—"किस लिए एक काफ़िर और गुमराह कैदी को कैद करने का ख़तरा उठाया जाय? अब हमारी राय है कि उसे फ़ौरन क़त्ल कर डाला जाय।"

ख़लीलुल्लाह ख़ाँ और शाइस्ता ख़ाँ जो प्रथम ही से उससे खार खाए थे, दोनों ने नज़र मिलाई और कहा—"क़त्ल, सिर्फ़ क़त्ल।"

इस पर हकीम दाऊद ने—जो ईरान से भागकर हिन्दुस्तान में आ गया था और ख़ुशामद की बदौलत इस दर्जे को पहुँचा था, कड़क कर कहा—"बेशक क़त्ल। दारा शिकोह को ज़िन्दा छोड़ना हरगिज़ मुनासिब नहीं है। सल्तनत की बेहतरी और सलामती इसी में है कि फ़ौरन इसकी गर्दन मारी जाय। मुझे उसके क़त्ल की सलाह देने में ज़रा भी तअम्मुल नहीं होता क्योंकि वह बेदीन और काफ़िर है, और

अगर ऐसे कत्ल से कुछ गुनाह शायद होता हो तो वह मेरी गर्दन पर हो।"

इस पर बादशाह ने मौलाना और क़ाज़ियों से फ़तवा माँगा, सबने एक स्वर से फ़तवा दिया—"इस्लाम के ख़िलाफ़ काम करने वाले को सज़ाए मौत ही मिलनी चाहिए।"

अब बादशाह ने दारा की मौत का फ़र्मान तैयार कराया। जिसपर बादशाह से तनख़ाह पाने वाले इन धर्मगुरुओं ने दस्तख़त कर दिए। यह कृत्रिम-सा दरबार बर्ख़ास्त हुआ और बादशाह औरंगज़ेब व्यथित अफ़सोस प्रकट करता हुआ और शोकातुर-सा धीरे-धीरे महलसरा में गया।

उसी रात को ख़िज़ाबपुर के क़ैदख़ाने में दारा और सिपर-शिकोह बैठे चूल्हे पर दाल पका रहे थे कि गुलाम नज़र बेग, चार दूसरे गुलामों के साथ नंगी तलवारें लिए—बारहदरी में घुस आया। उन्हें देखते ही दारा ने सिपर शिकोह से कहा—"लो बेटा, क़ातिल आ गए।" यह कहकर वह एक छोटी बर्तन उठाकर उनकी ओर लपका। परन्तु उन बदाचार गुलामों ने उसे धरती पर पटक दिया। चौदह वर्ष का बालक सिपर शिकोह पिता से लिपट कर रोने लगा। इस पर नज़र बेग ने उसे खींचकर अलाहदा कर दिया और इसी समय एक गुलाम ने छुरे से दारा का सिर काट लिया। वे तुरन्त उस सिर को और सिसकते हुए सिपर-शिकोह को लिए हुए—वहाँ से चल दिए।

नज़र बेग ने जब चाँदी की थाली में रखकर वह सिर औरंगज़ेब के सामने पेश किया तो उसने उसके मुँह पर का ख़ून धोने का हुक्म दिया। जब उसे भलीभाँति निश्चय हो गया कि वह दारा का ही सिर है तो उसकी आँखों से आँसू निकल पड़े और हाथ मलते हुए उसने कहा—"ऐ बदबख़्त!" फिर उसने कहा—"अच्छा इस दर्दनाक दृश्य को मेरे सामने से ले जाओ, और लाश को हाथी पर रखकर शहर में घुमाओ फिर हुमायूँ के मक़बरे में दफ़न कर दो।" ऐसा ही किया गया।

(~ उसकी दोनों पुत्रियाँ ठंडी सड़क महल में भेज दी गईं जो कुछ दिन बाद शाहजहाँ और दाराशिकोह की प्रार्थना पर उन्हें सुपुर्द कर दी गईं। सिपर शिकोह को ग्वालियर के किले में भेज दिया गया।

मलिक जीवन खाँ को जब औरंगज़ेब ने पुरस्कृत करके विदा किया तो राह ही में कुछ लोगों ने उसे मार डाला। इस प्रकार उस विश्वासघाती को हाथोंहाथ दण्ड मिल गया।

७४ :

शाही कैदखाना

ग्वालियर का दुर्ग जो उस समय शाही कैदखाना बना हुआ था—एक भारी पहाड़ की चोटी पर तीन फ़र्लांग के घेरे में बना था। इसके चारों तरफ़ हरा-भरा मैदान था। दूर-दूर तक कोई ऊँची जगह न थी जहाँ से इस पर हमला हो सके। इस पर चढ़ने का केवल एक ही रास्ता था जिसके दोनों ओर दीवारें और फाटक बने हुए थे जिनमें से प्रत्येक में सिपाही और सन्तरी मुस्तैद रहते थे। पहाड़ी की राह कुदरती चट्टान के रूप में थी जिसके चारों ओर प्राचीन ज़माने की बैठकें, बारहदरियाँ, बुर्जियाँ आदि बनी हुई थीं। पहाड़ की चोटी पर किले के भीतर विस्तृत मैदान था जिसके चारों ओर अनेक महल बने थे। इनमें भिन्न-भिन्न प्रकार के पत्थर के दरीचे, और पेशदालान तथा सुन्दर समरबाग बने थे। बागान में सरू और अन्य प्रकार के सुन्दर वृक्ष ऐसे ऊँचे खड़े थे कि दूर से नज़र आते थे। इस किले में चमेली का तेल बनाया जाता था, जिसकी बेलें इर्द-गिर्द की तमाम समतल धरती पर अधिकता से फैली हुई थीं। इस इलाके में लोहे की खानें भी अनेक थीं जिनसे बेशुमार चीज़ें तैयार करके साम्राज्य भर में भेजी जाती थीं।

शहर पहाड़ के बगल में था जो कैदियों के लिए प्रसिद्ध था। इसी पेशे से वे रोजी कमाते थे।

मुगल खानदान के शाहजादे और शाही कैदी यहाँ जो एक बार आते थे फिर वापस नहीं जा सकते थे। यहाँ उन्हें सबसे पहले पोस्त पिलाया जाता था। यह अफीम के छिलकों को उबाल कर तैयार किया जाता था। इसके पीने से मामूली कैदी धीरे-धीरे निस्तेज और दुर्बल हो जाता था। उसका पौरुष और साहस ख़त्म हो जाता था। उसकी विचारशक्ति कुण्ठित हो जाती थी और धीरे धीरे अर्धविक्षिप्त अवस्था में घुल घुलकर मर जाता था। कैदी जबतक पोस्त का कटोरा न पी लेता था, उसे खाना नहीं दिया जाता था।

अपने को सबसे बड़ा बहादुर और बादशाह समझने वाला बेवकूफ और बदनसीब मुराद बख्श इसी किले में कैद था। किले में कैद हुए उसे तीन साल बीत चुके थे। अब वह वही मर्द और लापरवाह दिलेर शाहजादा न था जिसे हमने सामूगढ़ और खिप्रा के तट पर विजय पाते देखा था। अब उसके शरीर पर हीरे मोती सजे न थे। न कमर में वह चमकदार तलवार थी, जिसपर उसे बड़ा घमण्ड था। इन सालों में पोस्त पी-पीकर उसकी कमर झुक गई थी। आँखों के चारों ओर स्याही दौड़ गई थी, और वह हर वक्त गुमसुम बैठा अकेला ही बड़बड़ाता रहता था। कभी-कभी वह अपने को बादशाह समझ कर तरह तरह के हुक्म देता—कभी खिलखिलाकर हँसता। कभी हफ्तों गुमसुम पड़ा रहता था।

सर्दी के दिन थे और सुबह का समय। जेलखाने के दारोगा ने एक गुलाम के साथ आकर उसे सलाम किया। गुलाम के हाथ में एक चाँदी का कटोरा था—जिसमें पोस्त भरा था।

मुराद बड़ी देर तक जेलखाने के दारोगा को गुस्से भरी निगाहों से देखता रहा—फिर कहा—"क्या वजह है कि तुम हर रोज इसी वक्त हमारे तखलिए में दखल देते हो। बस, हम यह नापसन्द करते हैं।"

दारोगा ने सिर झुकाकर कहा—"पोस्त पी लीजिए शाहजादा।"

"फिर शाहजादा, कौन है शाहजादा, हम जहाँपनाह हैं।"

"बेहतर, अब हुजूर प्याला उठाइए।"

"हम पोस्त नहीं पिएँगे।"

"तो हुजूर आज खाना नहीं मिलेगा।"

मुराद ने और भी गुस्सा करके पोस्त के प्याले को लिए हुए गुलामों की ओर देख कर कहा—

"तुम सब नमकहराम हो, प्याला हमें दो।"

गुलामों ने प्याला उसे दे दिया। मुराद कड़वी दवा की भाँति उसे गटागट पी गया। पीकर उसने प्याला फेंक दिया और कहा—"अब चले जाओ यहाँ से।"

मगर दारोगा गया नहीं, खड़ा रहा। उसने धीरे से कहा—"कुछ [illegible] आपसे मुलाकात करने आए हैं।"

"कौन हैं वे, क्या औरंगजेब तो नहीं आया है। याद रखो, मैं उस शैतान को हरगिज माफ न करूँगा।"

"जी नहीं, वे अहमदाबाद के उस दीवान के बेटे हैं जिसे आपने बेगुनाह कत्ल करवा डाला था।"

मुराद का गुस्सा काफूर हो गया। उसने भयभीत स्वर से कहा—"उनका यहाँ आने का मतलब क्या है?"

"वे बदले में आपका सिर माँगने आये हैं, जिसका शाही हुक्मनामा उनके पास है। अब आप तैयार हो जाइए।"

अभी उसकी बात समाप्त भी नहीं हुई थी कि चार सैयद नंगी तलवारों से उसे चारों दिशा से घेर कर खड़े हो गये।

मुराद साक्षात् मृत्यु को सामने देख एकदम उछल कर खड़ा हो गया। उसने इधर उधर अपनी तलवार टटोली, पर तलवार वहाँ कहाँ थी। इसी समय एक सैयद ने बढ़कर उसपर तलवार का वार करते हुए कहा—"यह निर्दोष दीवान के खून का बदला है।" तलवार मोंढे

शहर पहाड़ के बग़ल में था जो गवैयों के लिए प्रसिद्ध था। इसी पेशे से वे रोज़ी कमाते थे।

मुग़ल ख़ानदान के शाहज़ादे और शाही कैदी यहाँ जो एक बार आते थे फिर वापस नहीं जा सकते थे। यहाँ उन्हें सबसे पहले पोस्त पिलाया जाता था। यह अफ़ीम के छिलकों को उबाल कर तैयार किया जाता था। इसके पीने से भाग्यहीन कैदी धीरे धीरे निस्तेज और सुस्त हो जाता था। उसका पौरुष और साहस ख़त्म हो जाता था। उसकी विचारशक्ति कुण्ठित हो जाती थी और धीरे धीरे अर्धविक्षिप्त अवस्था में घुल घुलकर मर जाता था। कैदी जबतक पोस्त का कटोरा न पी लेता था, उसे खाना नहीं दिया जाता था।

अपने को सबसे बड़ा बहादुर और बादशाह समझने वाला बेवकूफ़ और बदनसीब मुराद बख़्श इसी किले में कैद था। किले में कैद हुए उसे तीन साल बीत चुके थे। अब वह जवाँमर्द और लापरवाह बेबाक शाहज़ादा न था जिसे हमने समूगढ़ और खिजवा के तट पर विजय पाते देखा था। अब उसके शरीर पर हीरे मोती सजे न थे। न कमर में वह जड़ाऊ तलवार थी, जिसपर उसे बड़ा घमण्ड था। इन सालों में पोस्त पी-पीकर उसकी कमर झुक गई थी। आँखों के चारों ओर स्याही दौड़ गई थी, और वह हर वक़्त गुमसुम बैठा अकेला ही बड़बड़ाता रहता था। कभी-कभी वह अपने को बादशाह समझ कर तरह तरह के हुक्म देता—कभी खिलखिलाकर हँसता। कभी हफ़्तों चुपचाप पड़ा रहता था।

सर्दी के दिन थे और सुबह का समय। कैदख़ाने के दारोग़ा ने एक गुलाम के साथ आकर उसे सलाम किया। गुलाम के हाथ में एक चाँदी का कटोरा था—जिसमें पोस्त भरा था।

मुराद बड़ी देर तक कैदख़ाने के दारोग़ा को ग़ुस्से भरी निगाहों से देखता रहा—फिर कहा—"क्या वजह है कि तुम हर रोज़ इसी वक़्त हमारे तख़लिए में ख़लल देते हो। बस, हम यह नापसन्द करते हैं।"

दारोगा ने सिर झुकाकर कहा—"पोस्त पी लीजिए शाहजादा !"

"फिर शाहजादा, कौन है शाहजादा, हम बादशाह हैं !"

"बेहतर, अब हुजूर प्याला उठाइए !"

"हम पोस्त नहीं पिएँगे !"

"तो हुजूर आज खाना नहीं मिलेगा !"

मुराद ने और भी गुस्सा करके पोस्त के प्याले को लिए हुए गुलामों की ओर देख कर कहा—

"तुम सब नमकहराम हो, प्याला हमें दो !"

गुलामों ने प्याला उसे दे दिया । मुराद कड़वी दवा की भाँति उसे गटागट पी गया । पीकर उसने प्याला फेंक दिया और कहा—"अब चले जाओ यहाँ से !"

मगर दारोगा गया नहीं, खड़ा रहा । उसने धीरे से कहा—"कुछ मुलाकाती आपसे मुलाकात करने आए हैं ।"

"कौन हैं वे, क्या औरंगजेब तो नहीं आया है । याद रक्खो, मैं उस शैतान को हरगिज माफ न करूँगा !"

"जी नहीं, वे अहमदाबाद के उस सैयद के बेटे हैं जिसे आपने बेगुनाह कत्ल करवा डाला था !"

मुराद का गुस्सा काफूर हो गया । उसने भयभीत स्वर से कहा—"उनका यहाँ आने का मकसद क्या है ?"

"वे बदले में आपका सिर माँगने आये हैं, जिसका शाही हुक्मनामा उनके पास है । अब आप तैयार हो जाइए !"

अभी उसकी बात समाप्त भी नहीं हुई थी कि चार सशस्त्र नंगी तलवारों से उसे चारों दिशा से घेर कर खड़े हो गये ।

मुराद लाचार, मृत्यु को सामने देख एकदम उछल कर खड़ा हो गया । उसने इधर उधर अपनी तलवार टटोली, पर तलवार वहाँ कहाँ थी ! इसी समय एक सैयद ने बढ़कर उसपर तलवार का वार करते हुए कहा—"यह निर्दोष सैयद के खून का बदला है !" तलवार मोढ़े

पर पड़ी और मुराद दर्द से कराह उठा। खून का फव्वारा बह चला। इसी समय चारों सैनिक उस पर टूट पड़े और उसी जगह उसके टुकड़े टुकड़े कर डाले।

१७५

शुजा की समाप्ति

अब केवल शुजा ही औरङ्गजेब का एक शत्रु बच रहा था। उसने यद्यपि समझ लिया था कि औरङ्गजेब के सेना का सामना करना संभव नहीं है। मीरजुमला ने, जिसे बराबर सैनिक सहायताएँ मिलती जा रही थीं उसे चारों ओर से घेर लिया था और वह अब जान बचाने के लिए ढाके की ओर भाग गया था, जो बंगाल का समुद्र के तट पर अन्तिम नगर है। परन्तु वहाँ भी उसे शरण नहीं मिली। वहाँ के सारे जमींदार उसके विरुद्ध उठ खड़े हुए, तब वह ढाका छोड़ जलमार्ग से समुद्र की ओर चला। ढाका छोड़ने के दो दिन बाद अराकान के राजा के चटगाँव के सूबेदार ने उसके पास पचपन नावें भेज दी थीं। अब उसे बंगाल को जीतने की तनिक भी आशा न थी। वह कड़ा दिल करके असभ्य मेघों के प्रदेश में जाने को उद्यत हो गया।

उसके इस इरादे को जानते ही उसके कुटुम्बियों और अनुचरों में कुहराम मच गया। परन्तु शुजा ने औरङ्गजेब के हाथों में पड़ने की अपेक्षा यही ठीक समझा और बीस मई १६६० को वह उस बंगाल को छोड़कर—जहाँ वह बीस वर्ष से भी अधिक समय तक शासन कर चुका था, हमेशा के लिए चल दिया। अराकान की इस जलयात्रा में उसके साथ कुटुम्ब के अतिरिक्त केवल चालीस आदमी और थे।

समुद्र पार जाने के लिए उसके पास न तो जहाज ही थे, न वह यही जानता था कि वहाँ जाने से उसकी रक्षा होगी। अब उसने अपने पुत्र सुलतान बाकी को अराकान के राजा के पास, जो मेघों का राजा

था, भेजकर प्रार्थना की—कि आप कुछ दिन हमें आश्रय दें तो हम आपके पास, आ जायें और जब हवा के बदलने की ऋतु आ जाय तब आप मक्का तक पहुँचाने के लिए अपना एक जहाज दे दें, जिसपर सवार होकर हम मक्का और वहाँ से रूम और ईरान को चले जायें। राजा ने उसे आश्रय देना स्वीकार कर लिया और सुलतान शाही को कुछ नावें, जिसके मल्लाह गोवा से भागे हुए पोर्चुगीज थे और जो आवारा और डाकू थे, पर अब राजा के नौकर हो गए थे और मौका पाकर बंगाल के समुद्र तट के गाँवों में डाका मारने का काम करते थे, दे दीं। शुजा अपनी बेगम और तीन पुत्रियों तथा पुत्रों सहित उनपर सवार होकर अराकान पहुँचा।

राजा ने उसकी कोई बहुत आवभगत नहीं की। पर उसके लिए सब आवश्यकता की वस्तुएँ जुटा दीं।

वहाँ उसे कई माह बीत गए—अच्छी खासी ऋतु भी आ गई। पर मक्का जाने के लिए उसे जहाज न मिला। शुजा के पास धन की कमी न थी—वह केवल इतना ही चाहता था कि उसे भाड़े पर जहाज मिल जाय। परन्तु राजा ने उसकी बात पर कुछ ध्यान नहीं दिया। इसी बीच शुजा के मन में एक विचार उत्पन्न हुआ, जिसने उसके हृदय में आशा का संचार कर दिया। उसके साथ कुछ लुटेरे पोर्चुगीज आए थे। कुछ ऐसे ही विदेशी यहाँ अराकान में थे, जिन्हें यहाँ के राजा ने पकड़ कर गुलाम बना लिया था। उसने इन सब बदमाशों का एक संगठन किया और यह षड्यन्त्र रचा कि एकाएक राजा के महल पर आक्रमण करके उसे मार डाला जाय और फिर लौटकर बंगाल में अपने भाग्य की परीक्षा की जाय। परन्तु राजा को किसी तरह उसके षड्यन्त्र का पता लग गया और राजा ने शुजा को पकड़ कर सकुटुम्ब कत्ल कर डालने का हुक्म दिया।

शुजा को जब यह सूचना मिली तो वह भागा। वह पेगू को भाग जाना चाहता था। पर मार्ग दुर्गम पर्वतीय था। वह आध पहर ही में

पकड़ लिया गया। उसने युद्ध किया—पर उसे बाँधकर राजधानी में लाया गया। सुलतान बड़ी ही वीरतापूर्वक लड़ा, पर उन्होंने उसे पत्थर मार-मार कर लोहू लुहान कर दिया। शुजा की बेगम और लड़कियों को भी कैद कर लिया गया। उनके साथ बहुत निर्दयता की गई। सुलतान शुजा को कत्ल कर दिया गया। उसकी बड़ी लड़की से राजा ने विवाह कर लिया। सुलतान बाकी ने अवसर पाकर फिर एक षड्यन्त्र रचा, जो खुल गया। इसपर राजा ने क्रुद्ध होकर इस समूचे राज-परिवार को तलवार के घाट उतार दिया। यहाँ तक शुजा की वह लड़की—जिसके साथ राजा ने विवाह कर लिया था और अब गर्भवती थी, निर्दयता पूर्वक कत्ल कर दी गई और उसके भाइयों तथा सुलतान बाकी के सिर कुल्हाड़ों से काट डाले गए।

७६ :

आखिरी शिकार

अपने सब भाइयों पर विजय प्राप्त करके अन्त में औरङ्गजेब का ध्यान भाग्यहीन दारा के अभागे पुत्र सुलेमान शिकोह की ओर गया। उसने गढ़वाल के राजा पर परवाना भेजा कि शाहजादे को शाही हुजूर में भेज दे। पर बूढ़ा राजा शरणागत का उसके शत्रु को सौंपने को राजी न हुआ। फलतः औरङ्गजेब ने राजा पर चढ़ाई का इरादा किया। इसपर राजा का युवक पुत्र अपने पिता के राज्य को खतरे से बचाने के लिए शाहजादे को औरङ्गजेब को सौंप देने को राजी हो गया। जब शाहजादे को यह समाचार मिला तो वह बर्फीले पहाड़ पार कर लद्दाख पहुँचने की चेष्टा करने लगा। परन्तु उसे पकड़ लिया गया। आत्म-रक्षा के लिए युद्ध करके वह घायल भी हुआ। उसे अन्त में औरङ्गजेब को सौंप दिया गया।

यह शाहजादा कैदी के रूप में अपने भयानक बाबा के सामने दीवानेख़ास में लाया गया। सभी खास-खास अमीर उमरा दरबार में हाज़िर थे। दरबार से बाहर ही कैदी की बेड़ियाँ निकाल दी गईं। परन्तु हथकड़ियाँ जिन पर सोने का मुलम्मा किया हुआ था, हाथों में पड़ी थीं। उस सुन्दर सजीले शाहजादे को इस अवस्था में देखकर दरबारियों की आँखों से आँसू बहने लगे। झरोखे में बहुत-सी बेगमात भी इस भाग्यहीन कैदी को देखने के लिए आ बैठी थीं।

बादशाह ने शाहजादे की हालत पर अफसोस प्रकट किया, और कहा—"ज़रा सर नज़र करो, और इतमीनान रक्खो कि तुम को ज़रर नहीं पहुँचाया जायगा, बल्कि तुम्हारे साथ मिहरबानी की जायगी। तुम्हारा बाप तो सिर्फ इसलिए कत्ल हुआ कि वह काफ़िर और ला-मज़हब हो गया था।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने बादशाह को बंदगी की और आदाब बजाया और कहा—"अगर हुज़ूर की मन्शा यह हो कि मुझे पोस्त पिलाए जाया करें, तो बेहतर है कि मुझे अभी कत्ल करा डाला जाय।"

बादशाह ने कहा—"नहीं, तुमको पोस्त हरगिज़ नहीं पिलाए जाएँगे, इतमीनान रक्खो।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने बादशाह को फिर उसी प्रकार सलाम किया। बादशाह ने कहा—"तुम क्या उस हाथी की बाबत कुछ बता सकते हो—जिसपर अशर्फ़ियाँ लदी थीं और जो लूट लिया गया था?"

"हुज़ूर, मैं कुछ अर्ज नहीं कर सकता—कि उसका क्या हुआ। लेकिन उस हाथी पर दो लाख रुपयों की अशर्फ़ियाँ थीं।"

इसके बाद बादशाह के संकेत से वह दीवाने आम में ले जाया गया, जहाँ से वह दूसरे दिन ग्वालियर के दुर्ग में भेज दिया गया। जहाँ वह एक साल तक पोस्त पी-पी कर, अन्त में मर गया।

—०—

विहंगम दृष्टि

औरङ्गजेब का सारा शासन काल २५-२५ वर्ष के दो समान भागों में बँट जाता है। पहला अर्द्धांश उत्तर भारत में और दूसरा अर्द्धांश दक्षिण भारत में। पहला काल उत्तर भारत का महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काल है। इस काल में सम्पूर्ण सार्वजनिक व सैनिक कार्यवाहियों का केन्द्र उत्तर भारत ही रहा। परन्तु अपने शासन के उत्तरार्ध में औरङ्गजेब अपने कुटुम्बियों, अमीरों, दरबारियों, बड़े-बड़े हाकिमों और सारी सेना के साथ दक्षिण में चला गया, और राज्य की सारी शक्तियाँ दक्षिण में जुट गईं। इसका यह परिणाम हुआ कि उत्तरी भारत की शासन-व्यवस्था गड़बड़ा गई, जिससे प्रजा में दरिद्रता व्याप गई और राज-कर्मचारी अत्याचारी हो गए। यह परिस्थिति पूरे पच्चीस वर्ष तक रही। साम्राज्य का ढाँचा बिखर गया और उसमें अराजकता के लक्षण दीखने लगे।

यह एक मार्के की बात है कि औरङ्गजेब के शासन के पूर्वार्ध में जो महत्वपूर्ण घटनाएँ घटीं वे उत्तरी भारत के किसी एक ही स्थान में केन्द्रित न थीं। इस काल में साम्राज्य का शाही झंडा काबुल से लेकर कामरूप की पहाड़ियों तक और तिब्बत से बीजापुर तक फहराने लगा।

शासन काल के दूसरे वर्ष तेरह मई १६५९ में औरङ्गजेब बड़ी धूमधाम से दिल्ली के तख्ते-ताऊस पर बैठा और इस अवसर पर राज्य भर में उत्सव मनाया गया। शासन काल के पाँचवें वर्ष वह काश्मीर गया, लेकिन जब तक शाहजहाँ जिन्दा कैद में रहा, औरङ्गजेब आगरे नहीं गया। न उसने वहाँ दरबार किया। १६६६ फरवरी में जब शाहजहाँ की मृत्यु हुई, तब वह आगरे गया। राज्यकाल के इक्कीसवें वर्ष में उसने अपने राज्याभिषेक की तिथि का उत्सव मनाने और भेंट लेने की

रस्म को बन्द कर दिया। शासन काल के बारहवें वर्ष में उसने हिन्दू मन्दिर तोड़ने की आज्ञाएँ प्रचारित कीं। इस बीच में राव करण और महेबा का राजा चम्पतराय विद्रोही हुए। राज्याभिषेक के दूसरे वर्ष ही उसने बहुत से करों को माफ कर दिया, लेकिन साथ ही साम्राज्य में कट्टर इस्लाम की स्थापना के लिए कुछ आज्ञाएँ प्रचारित कीं। कुछ प्राचीन रस्म बन्द किए। शाही सिक्कों पर जो कलमा की मोहर लगती थी, वह बन्द कर दी और नौरोज़ का त्योहार भी बन्द कर दिया। नशीली चीज़ों का सेवन, जुआ खेलने और शराब पीने की भी मनाही कर दी। सोलह मई १६५९ को साम्राज्य भर में भाँग की भी पैदावार रोक दी गई। पुरानी मसजिदों की मरम्मत की गई और इमामों, मुअज्जिनों और ख़तीबों के वज़ीफ़े मुकर्रर किए। इक्कीसवें साल उसने दरबार में गाने-बजाने की पूरी मनाही कर दी। साथ ही जन्मतिथि पर तुलादान करने की परिपाटी भी रोक दी। दरबारियों को हिन्दू तरीके से प्रणाम करना रोक दिया गया। शाही नगाड़ा जो अब तक दिन भर बजता था, अब सिर्फ़ तीन घंटे बजने लगा। बड़े-बड़े राजाओं को राज सौंपने के वक्त बादशाह अपने हाथ से जो तिलक करता था, वह रोक दिया और झरोखे में बैठकर दर्शन देने की प्रथा भी बन्द कर दी। नर्तकी और वेश्याओं को विवाह करने को मजबूर किया और सती प्रथा को भी बन्द करने की आज्ञा दी। छोटे बच्चों को गुलाम बनाकर बेचना और हरम में नौकरी करने के लिए उन्हें हीजड़े बनाने की भी सख्त मनाही कर दी गई। कट्टर इस्लामी धर्म के विरोधी फकीरों में मिर्जा मीर के शागिर्द शाह मुहम्मद बदख्शी और सूफी फकीर सरमद, मुहम्मद ताहिर और एक पुर्तगाली पादरी को धर्मभ्रष्ट होने के अपराध में कत्ल कर दिया। बोहराओं के धर्मगुरु सैय्यद कुतुबुद्दीन को, जो अहमदाबाद में रहते थे, उनके सात सौ शिष्यों सहित कत्ल करा दिया गया। राज्याभिषेक के बाद ही सैय्यद मीर इब्राहीम को साढ़े छै लाख रुपया देकर मक्का मदीना खैरात बाँटने के लिए भेज दिया।

आगरे से भागते वक्त दारा अपने हरम की औरतों और लड़कियों को सब जवाहरात आदि के खजाने के—जो आगरे के किले में छोड़ गया था, अपने कब्जे में कर लिया और दारा की नाचनेवाली बाँदी को अपने हरम में दाखिल करके उसका नाम उदयपुरी बेगम मशहूर कर दिया। साथ ही किले के सब शाही जेवरात और कपड़ों पर अपना कब्जा कर लिया।

मुहम्मद सुल्तान को कैद करके ग्वालियर भेज दिया गया। मुतमाद नाम के एक हिजड़े को आगरे के किले का अफसर बना दिया। जिसने कैदी शाहजहाँ के साथ बड़ी सख्ती और निर्दयता का व्यवहार किया। उन दिनों पिता पुत्र में जो पत्र-व्यवहार हुआ, उसमें औरङ्गजेब ने अपनी स्वार्थपरता और नम्रता का पूरा दिखावा करते हुए, और अपने पिता को शासन के अयोग्य और अशक्त कहते हुए अपने कामों का समर्थन किया। उसने बादशाह को लिखा कि जब तक हुकूमत की बागडोर आपके हाथ में रही, मैंने बिना आपके हुक्म के कोई काम नहीं किया। आपकी बीमारी में दारा ने राजकाज अपने हाथ में ले लिया और इस्लाम के खिलाफ कार्यवाहियाँ कीं। मेरा इरादा विद्रोही बनकर आगरे में आने का नहीं था। मैं तो सिर्फ दारा के इस्लाम विरोधी कामों और कुफ्र व बुतपरस्ती को पामाल करना चाहता था। बादशाह बनने में मेरा अपना कुछ भी स्वार्थ न था। बादशाह के लिए यह मुनासिब नहीं कि वह अपने ऐशोआराम में लगा रहे। उसका फर्ज है कि वह आम लोगों की भलाई में अपना सारा समय लगाए।

शाहजहाँ औरङ्गजेब की इस दगा और दगाबाजी को समझता था, और उसने यह भी समझ लिया था कि अब उसका कोई चारा नहीं चल सकता। अन्त में हार मानकर बूढ़े शाहजहाँ को दुर्भाग्य के सामने सिर झुकाना पड़ा। एक के बाद एक दुःखदायी चोट उसपर पड़ी। दारा, मुराद और सुलेमान कत्ल किए गए। शुजा को मेघों के देश में जाकर डाकुओं का शिकार बनना पड़ा। अन्त में उसने ईश्वर का

महाग लिया। कन्नौज का सैय्यद मुहम्मद, जो उसका गुरु, शिक्षक और विद्वान् पुरुष था, अन्त तक बादशाह की सेवा में रहा और उसके साथ शाहजादी जहाँआरा भी, जिसने अपने पिता के लिए सब सुखों को तिलाञ्जलि दे दी—उसके साथ रही। अन्त में चौहत्तर साल की उम्र में—जबकि आगरे में बहुत कड़ी सर्दी पड़ रही थी, मृत्यु उसके निकट आई और उसने परमात्मा को उसकी कृपाओं का धन्यवाद दिया और अपने आपको उसके हवाले कर दिया। मरने से पहले उसने एक वसीयत लिखी और अपने कुटुम्बियों और नौकरों को इनाम दिए। उस वक्त उसके पास उसकी दो बेगमें अकबराबादी महल और फतहपुरी महल, बेटी जहाँआरा और दूसरी स्त्रियाँ भी जो रो रही थीं। अन्त तक बादशाह के होश-हवास ठीक रहे और वह स्त्रियों को तसल्ली देता रहा। अपनी बेगम मुमताज महल की यादगार ताज की ओर मुसम्मन बुर्ज से लेटा हुआ वह टकटकी लगा कर देखता रहा। उसने कलमा पढ़ा और प्रार्थना की कि ऐ खुदा इस दुनिया में मेरी मदद कर, और उस दुनिया में दोज़ख़ की आग से बचा। जब सन्ध्या समय सवा सात बजे सूरज अस्त हो रहा था, इस बड़े बादशाह ने अपनी आखिरी साँस ली।

जिस दिन शाहजहाँ को कैद किया गया था, उसी दिन मुसम्मन बुर्ज के नीचे सीढ़ियों का दरवाज़ा ईंटों से चुनकर बन्द कर दिया गया था। वह दरवाज़ा इस समय तोड़कर उसी राह से उसका जनाज़ा ताजमहल पहुँचा दिया गया, और उसकी बेगम मुमताज़ महल के पास ही उसे दफ़ना दिया गया।

शाहजहाँ की मृत्यु की सूचना पाकर जब औरङ्गज़ेब आगरा पहुँचा तो अपनी बदनसीब बहन जहाँआरा से मिला। जहाँआरा ने एक थाल भर कर हीरे उसके नज़र किए और कहा कि बादशाह तुम्हारे अपराधों को क्षमा कर गया है और क्षमा-पत्र पर दस्तख़त कर गया है। इससे औरङ्गज़ेब लज्जित हुआ और अपनी बहन के आराम से रहने का पूरा पूरा बन्दोबस्त कर गया।

इस बीच सीमाओं पर निरन्तर युद्ध होते रहे। अफगानिस्तान से युद्ध हो रहा था। मीरजुमला कूचबिहार और आसाम में फैला रहा, अन्त में उसको कामयाबी हासिल हुई और ब्रह्मपुत्र के उत्तरी तट से लेकर कलिंग नदी के दक्षिण तट के पश्चिम भाग तक का आसाम प्रदेश मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। यह मीरजुमला की आखिरी फतह थी। इसके बाद ही मार्च १६६३ को वह महान् राजनीतिज्ञ सेनापति मर गया।

मीरजुमला के समान उस युग में दूसरा सेनानायक राजपुरुष मुगल राज्य में न था, जिसने कठिनाइयों पर कठिनाइयाँ सहन करते हुए अपना अनुशासन कायम रखा। यह कोल मन हीरों का मालिक—और बंगाल जैसे धनी प्रदेश का सूबेदार होते हुए भी मृत्यु के समय तक सामान्य सैनिकों की तरह युद्ध की कठिनाइयों को उठाता और कठिन परिश्रम करता रहा। उसके आदेश कड़े-कड़े होते थे और वह सदैव सतर्क रहता था। एक शब्द में कहा जा सकता है कि औरंगजेब का निर्माण मीरजुमला ने ही किया। इस प्रकार निरन्तर पच्चीस वर्ष तक काबुल से लेकर आसाम के अन्तिम छोर तक उत्तर भारत जबर्दस्त संघर्ष और हलचलों का केन्द्र रहा।

औरंगजेब कट्टर मुसलमान था और इस्लाम के अतिरिक्त किसी भी धर्म या जाति के प्रति उदारता प्रकट करना वह पाप समझता था। उसने अपने राज्य में इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्मावलम्बियों को सब राजनैतिक अधिकारों से वंचित करना प्रारम्भ कर दिया। इसका अभिप्राय यह था कि कोई भी अन्य धर्मावलम्बी किसी भी मुस्लिम राज्य का नागरिक नहीं हो सकता।

इस्लाम धर्म के अनुसार प्रत्येक मुस्लिम शासक खुदा का प्रतिनिधि होता है, जिसका प्रधान उद्देश्य इस्लाम को फैलाना है। उसे जिहाद करने का हक है, जिसका मतलब यह है कि जब पवित्र माह समाप्त हो जाय, तब उन सब आदमियों को जो ईश्वर के साथ और देवताओं के

नाम भी बोकते हैं, चाहें मिलें मार डाले जायें, या गुलाम बना लिए जायें, कोई भी अन्य धर्मावलम्बी इस्लामी राज्य में एक दलित समाज के आदमी की तरह रह सकता है कि जिसकी स्थिति एक गुलाम से कुछ ही अच्छी रहती है। ईश्वर के द्वारा दिए गए जीवन और धन का भोग करने के लिए इस्लामी शासक को उसे जिन्दा रखने देते हैं, उसके बदले में उसका फ़र्ज हो जाता है कि वह सब नागरिक अधिकार को त्याग दे और कर के रूप में धन दे जो जज़िया कहाता है। उसे न तो सेना में भरती होने का अधिकार है, न धन संग्रह करने का। उसे जिम्मी कहा जाता है। वह न घोड़े पर चढ़ सकता है, न हथियार बाँध सकता है, न महीन कपड़ा पहिन सकता है। जिम्मी को अदालत में गवाही देने का भी हक नहीं है। उसका यह कर्तव्य है कि वह इस्लाम के प्रत्येक सदस्य के साथ सम्मानपूर्वक दीन भाव से रहे। उसे मार डालने, लूट लेने की आज्ञा पैग़म्बर ने मुसलमान को दी है।

मुगलों के पहले सभी मुसलमान सुलतानों ने ऐसी ही कट्टर मुस्लिम भावनाओं से काफी अत्याचार और खून खराबी से भरे हुए शासन किए। परन्तु अकबर ने सब से पहले यह धार्मिक द्वेष दूर किया और हिन्दुओं से न केवल राजनैतिक सहयोग स्थापित किए, बल्कि उनके साथ बेटी-व्यवहार के सम्बन्ध भी स्थापित किए। परन्तु औरङ्ग-जेब ने फिर से उसी धर्मान्धता का प्रचार किया और हिन्दू धर्म पर धीरे धीरे आक्रमण करने आरम्भ किए। सन् १६४४ में जब वह गुजरात का सूबेदार था, उसने अहमदाबाद के उपनगर ही बसे हुए चिन्तामणि के प्रसिद्ध मन्दिर को गो-हत्या करके भ्रष्ट कर दिया। बाद में उसे मसजिद बनवा दिया। गुजरात के और मन्दिरों को भी उसने ढहा दिया। अपने राज्य के पहले ही वर्ष में उसने बनारस में एक नए मन्दिर बनाने की आज्ञा नहीं दी। साथ ही उसने कटक से लेकर मेदिनीपुर तक के सब छोटे-बड़े मन्दिरों की मरम्मत बन्द कर दी।

सन् १६६९ के अप्रैल में उसने एक आम हुक्म दिया कि हिन्दुओं

की सब पाठशालाएँ और मन्दिर गिरा दिए जायें और उनकी धार्मिक प्रथाएँ बन्द कर दी जायें। इसी समय उसने गुजरात का सोमनाथ मन्दिर, बनारस का विश्वनाथ मन्दिर और मथुरा का केशव राय का मन्दिर ढहाया। मथुरा हिन्दुओं का एक अच्छा धर्म केन्द्र था, विशेष-कर वैष्णवों का बहुत प्रसिद्ध केन्द्र बन चुका था। दुर्भाग्य से यह शहर देहली और आगरा के बीच जाने वाली सड़क पर था, इसलिए इस पर औरङ्गजेब की सबसे क्रूर दृष्टि पड़ी और उसने अब्दुल नबी नाम के कट्टर *मुसलमान को मथुरा का फ़ौजदार नियुक्त किया, जिसने वहाँ* के केशव राय के मन्दिर को ढहा दिया और मथुरा शहर का नाम बदल कर इस्लामाबाद रख दिया।

इसी समय उसने एक महकमा कायम करके साम्राज्य भर के सारे सूबों, परगनों और शहरों में मोहतसिब नियुक्त कर दिए, जिनका काम *हिन्दुओं के तीर्थों और मन्दिरों को तहस-नहस करना ही था।*

१६८० में उसने आमेर रियासत के सब मन्दिर तुड़वा डाले, और *गुजरात के हिन्दुओं* को जो जमीनें वजीफे के रूप में *मिली थीं*, सब जब्त कर लीं। १६७९ में औरङ्गजेब ने साम्राज्य भर के गैरमुस्लिमों पर जजिया कर लगा दिया। स्त्रियों, चौदह वर्ष से कम उम्र के बच्चों और गुलामों को इस कर से छूट दी गई। मठाधीशों और महन्तों को भी यह कर चुकाना पड़ता था। यह कर तीन दरों में लिया जाता था जो बारह, चौबीस और अड़तालीस दरहम प्रति वर्ष थीं। शिवाजी मराठा और उदयपुर के महाराणा राजसिंह ने इस कर के खिलाफ बहुत कुछ कहा-सुनी की। दिल्ली और आसपास की प्रजा ने भी प्रार्थना की, परन्तु औरङ्गजेब ने उस पर ध्यान नहीं दिया। इस कर से बहुत बड़ी रकम *वसूल होती थी। अकेले गुजरात से ही पाँच लाख रुपये आते थे।* इस कर से बचने और अपमानों से छुटकारा पाने के लिए लोग धड़ा-धड़ मुसलमान होने लगे। इतने पर ही औरङ्गजेब चुप नहीं हुआ। उसने मुसलमान सौदागरों पर से चुङ्गी कर बिलकुल उठा लिया, लेकिन

हिन्दू सौदागरों पर पाँच प्रतिशत चुंगी कर बढ़ा दिया। जो लोग मुसलमान हो जाते थे, उन्हें इनाम मिलते थे। ज़मीन-जायदाद मिलती थी, ऊँचे पद मिलते थे, करों से छुटकारा मिल जाता था, विवाद-ग्रस्त जायदाद पर उनका अधिकार मान लिया जाता था। १६७१ में बादशाह ने यह हुक्म दिया कि राज के सब कर वसूल करने वाले सब मुसलमान ही हों और हाकिमों और ताल्लुकेदारों को आज्ञा दी कि वे हिन्दू पेशकारों और दीवानों को निकाल कर मुसलमानों को भरती करें। यहाँ तक कि कानून को मुसलमान बनने के लिए एक प्रसिद्ध कहावत बन गई।

मुसलमान होने के लिए हाथियों पर बैठा कर गाजे-बाजे के साथ जुलूस निकाले जाते थे और उन्हें दैनिक तनख्वाहें दी जाती थीं। मार्च १६९५ में उसने हुक्म दिया कि राजपूतों के सिवा और कोई हिन्दू हाथी, घोड़े और पालकी पर न चढ़ने पाए, न हथियार बाँधे। इसी समय उसने साम्राज्य भर में तीर्थों में भरने वाले धार्मिक मेलों को कतई बन्द कर दिया। होली और दीवाली के त्योहार भी सार्वजनिक रूप से नहीं मनाए जाते थे।

इन सब बातों का यह परिणाम हुआ कि हिन्दुओं में विद्रोह की भावना बढ़ती गई। १६६९ में मथुरा में अचानक विद्रोह उठ खड़ा हुआ। इस विद्रोह का नेतृत्व तिलपट के जाट गोकुला ने किया। मथुरा का हाकिम अब्दुल नबी इस विद्रोह में मार डाला गया। गोकुला ने सादाबाद का परगना लूट लिया। अन्त में गोकुला को दबाने के लिए बड़ी भारी सेना भेजी गई, जिसका नेता हसन अली खाँ था। उसने बड़ा ज़बर्दस्त दमन किया और गोकुला को सपरिवार कैद कर लिया। लेकिन इसके थोड़े दिन बाद ही राजाराम के नेतृत्व में जाटों ने फिर मथुरा में भारी विद्रोह खड़ा किया। सन् १६७२ में सतनामी सम्प्रदाय के साधुओं ने, जिनका केन्द्र नारनौल था, विद्रोह किया।

यह झगड़ा बहुत शीघ्र एक भारी युद्ध में परिणत हो गया। इसमें

पाँच हजार सतनामी साधुओं ने भाग लिया, जिसका नेतृत्व एक बूढ़ी औरत ने किया। उन्होंने नारनौल के फौजदार को मार भगाया और शहर पर कब्जा कर लिया, नारनौल को लूट लिया और जिले में अपना शासन कर लिया। मस्जिदों को ढहा दिया। इस विद्रोह को दबाने के लिए औरङ्गजेब को भारी सेना भेजनी पड़ी।

इसी समय पंजाब में सिक्खों ने सिर उठाया। इस समय सिक्ख लोग गुरु को राजा के समान मानने लगे थे। गुरुओं के दरबार लगते थे और वे दरबारियों और मन्त्रियों से घिरे रहते थे। ये सच्ची मसनद कहलाते थे जो कि पठान बादशाह के खिलाफ 'मसनदे आला' का जिसका दूसरा नाम था। जब जहाँगीर ने गुरु अर्जुन पर दो लाख रुपया जुर्माना किया था और जुर्माना न देने पर उन्हें लाहौर में तपती हुई रेती पर बैठने को बाध्य किया था, जिससे उनकी मृत्यु हो गई थी। इसके बाद उनके पुत्र हरगोविन्द ने सिक्ख सम्प्रदाय को सैनिक रूप दिया और एक छोटी-सी सेना बना ली, जिससे बादशाही सेना की एक दो बार झड़प भी हुई। बादशाह ने उसके बाद गुरु तेग बहादुर को दिल्ली में बुलाकर उसका सिर काट लिया और इसके बाद ही गुरु गोविन्द सिंह ने शाही सेना के साथ युद्ध छेड़ दिया।

गुरु गोविन्द ने निरन्तर लड़ाई जारी रखी और बहुत ही शीघ्र औरंगजेब के लिए वे एक कट्टर शत्रु के रूप में खड़े हो गये। गुरु गोविन्द की मृत्यु के बाद सिक्खों के छोटे-छोटे दल बन गए और वे डाकुओं के समूह की भाँति फिरते और लूटमार करते थे। औरंगजेब की धर्मान्धता का यह परिणाम हुआ कि राजपूतों की वीर जाति उसका शत्रु बन गई।

सन १६७८ के अन्त में जमरूद में जसवन्त सिंह की मृत्यु हुई, उसी समय औरंगजेब ने मारवाड़ को मुगल साम्राज्य में मिला लिया। इस पर दुर्गादास ने बादशाह से लोहा लिया। बादशाह को उससे लड़ने के लिए स्वयं अजमेर जाना पड़ा, जहाँ राठौरों से बड़ा भारी

युद्ध हुआ। बहुत से राजपूत कट मरे और जो बच रहे वे पहाड़ों में छिप गए। किन्तु इसी समय मेवाड़ के राणा राजसिंह ने औरंगजेब को चुनौती दी और औरंगजेब ने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी। इस लड़ाई में बड़ी-बड़ी दिक्कतों का सामना करना पड़ा और औरंगजेब घिर गया। इसमें सबसे अधिक अपमान औरंगजेब के छोटे पुत्र मुहम्मद अकबर खाँ को सहना पड़ा जिसकी उम्र कुल्लीस साल की थी। निरन्तर हार खाने पर वह खिसका जाता था। अन्त में उसने राजपूतों से मिलकर औरंगजेब के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया, जिसे दबाने में औरंगजेब को बहुत अधिक प्रयास करना पड़ा।

मुगल राज्यकाल में मारवाड़ का एक विशेष सैनिक महत्त्व था। मुगल राजधानी से समृद्ध उद्योग-धन्धे वाले नगर अहमदाबाद और खम्भात के आम-धन्धे वाले बन्दरगाह को जाने वाला सबसे सीधा और नजदीक का व्यापारी माल मारवाड़ की सीमा पर होकर जाता था। यह स्वाभाविक था कि औरंगजेब के दिल में यह भावना पैदा हो कि यदि मारवाड़ राज्य मुगल साम्राज्य में मिला लिया जाय तो न केवल राजपूताने के ठीक बीचोबीच एक सैनिक और व्यापारिक महत्त्वपूर्ण सम्म प्रदेश की—जिस पर मुसलमानों का एकाधिपत्य होगा, स्थापना हो जायगी, अपितु उदयपुर के गौरवपूर्ण राणाओं को अलग से घेर लेने के लिए बड़ी भारी सुविधा मिल जायगी।

इसी से महाराज जसवन्त सिंह के मरते ही औरंगजेब मारवाड़ राज्य को हथियाने करने के लिए तुरन्त स्वयं अजमेर को चल दिया। इस घटना और खबर से राजाओं में बड़ी गड़बड़ी पैदा हो गई। उनमें इतनी शक्ति नहीं थी कि वे इस सशक्त मुगल सेना का सामना करें। इसी समय औरंगजेब ने हिन्दुओं पर जज़िया का कर भी लगा दिया था, जो पिछले सौ साल से बन्द था। ये झगड़े हो ही रहे थे कि अमरसिंह से छोटे समय जसवन्त सिंह की दो विधवा रानियों ने लाहौर में दो पुत्रों को जन्म दिया। एक तो कुछ दिन बाद मर गया, दूसरे

अजीत सिंह को लेकर जसवन्त सिंह का कुटुम्ब दिल्ली पहुँचा। अजीत सिंह के अधिकारों के सम्बन्ध में औरङ्गजेब से बहुत बातें हुईं, परन्तु कुछ निर्णय नहीं हुआ और रानी वीरतापूर्वक बालक राजा को लेकर अपने मुट्ठीभर सिपाहियों के साथ मारकाट करके निकल गई और उदयपुर के महाराणा की शरण ली। बादशाह यह सुन कर बहुत गुस्से में आया और बड़ी भारी सेना लेकर अजमेर पहुँचा। वहाँ का मुग़ल हाकिम फौजदार तहव्वुर खाँ था। पुष्कर में राजपूतों से उसकी लड़ाई हुई। राजपूत हार कर पहाड़ों में छिप गए। कहने को बादशाह जीत गया, किन्तु वास्तविक बात यह थी कि राठौरों ने निरन्तर तीस वर्षों तक स्वतन्त्रता का यह युद्ध चलाया और अन्त में अजीत सिंह को जोधपुर का अधिपति बना कर बैठाया।

उदयपुर के राणाओं ने जो राठौरों को सहायता दी उसके बदले में औरङ्गजेब ने मेवाड़ को एकदम तहस नहस कर दिया। लगातार कई वर्ष तक लड़ाई करने के बाद महाराणा से सन्धि हो गई और इस प्रकार से अब औरङ्गजेब अपनी दृष्टि से विजयी हो चुका था। उसके पुत्र अकबर ने राजपूतों से मिल कर विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। परन्तु उस बार उसको सफलता नहीं मिली और उसे सुदूर दक्षिण में जाकर शिवाजी के अयोग्य पुत्र शम्भुजी की शरण लेनी पड़ी। यह एक ऐसी भयानक बात थी कि जो औरङ्गजेब को दक्षिण खींच ले गई, जहाँ उसे पच्चीस वर्ष तक निरन्तर घोड़े की पीठ पर रहना पड़ा और वहीं की मिट्टी में उसे दफ़न होना पड़ा। जिस अमूल्य तख्तेताऊस के लिए उसने अपने बाप को कैद किया, भाइयों को क़त्ल किया, उसपर आराम से बैठना उसे नसीब नहीं हुआ। उसके शासन के इन पिछले पच्चीस वर्षों में उत्तर भारत की सारी ही शासन व्यवस्थाएँ बिगड़ गईं, क्योंकि उस समय राज्य की सारी शक्तियाँ दक्षिण में आ लगी थीं। बादशाह स्वयं अपने कुटुम्बियों, दरबारियों, हाकिमों और सारी सेना के साथ दक्षिण चला गया था। इस प्रकार

अनिच्छापूर्वक देशनिकाले के दिनों में दक्षिण में पड़े हुए अधिकारी और सैनिक अपने घरों को लौट आने के लिए बेचैन हो गए। यहाँ तक कि एक अफसर दिल्ली आने के लिए एक वर्ष की छुट्टी लेने के लिए बादशाह को एक लाख रुपया भेंट करने को तैयार हो गया। राजपूतों ने भी शिकायत की कि हम इस प्रकार जिन्दगी भर दक्षिण में पड़े रहे तो हमारे वंश ही नष्ट हो जायेंगे। इधर उत्तरी भारत का शासन-प्रबन्ध ढीला होकर धीरे धीरे बिगड़ता गया, प्रजा गरीब होती गई, लोगों में भ्रष्टाचार बढ़ता और अकर्मण्यता बढ़ गई। इसके अतिरिक्त राजपूतों में, सिक्खों में और दूसरी जातियों में जो विद्रोह और अशान्ति के बीज बादशाह बो गया था, उनका पूरा विकास हुआ और साम्राज्य के सारे उत्तरी भाग में एक प्रकार की अराजकता फैल गई। यह परिस्थिति पच्चीस वर्ष तक बनी रही। यह काल थोड़ा न था। इतने काल में तो भारतीय समाज की एक पूरी की पूरी पीढ़ी निकल गई।

दक्षिण में शिवाजी ने औरङ्गज़ेब की गैरहाज़िरी का लाभ उठा कर अपने राज्य का पूरा विस्तार कर लिया था, और अपनी शक्तियाँ बहुत बढ़ा ली थीं। वह दक्षिण का एकछत्र सर्वश्रेष्ठ और समर्थ राजा बन बैठा था। मुग़ल सूबों को मारने से और डाका कर सूरत को लूटने से उसकी धाक जम गई थी। बीजापुर और गोलकुण्डा के राजा उससे भय खाते थे। दक्षिण में अकेले उसी की तूती बोल रही थी। शिवाजी को परास्त करने के लिए औरंगज़ेब ने जो उद्योग किए थे, उनमें एक बार राजा जयसिंह की सहायता से उसे इतनी ही सफलता प्राप्त हो गई थी कि शिवाजी ने साम्राज्य के प्रति राजभक्त बने रहने की स्वीकृति दे दी थी और आगरे भी चला गया था। परन्तु दो परम ओजपी के समकक्षी व्यक्तियों का मेल सम्भव न था। शिवाजी आगरे से लौट कर आया तो उसने पूरे वेग से दक्षिण में मुग़लों का संहार आरम्भ कर दिया, और अपने राज्य का अधिक-से-अधिक विस्तार करके दक्षिण की

सब मुस्लिम शक्तियों को दमित करके वह दक्षिण का सबसे बड़ा हिन्दू शक्ति राज्य बन चुका था। उसके पास अस्सी हजार तक सैनिक लड़ने के लिए तैयार रहते थे। यद्यपि औरंगजेब उत्तर में बड़े झंझटों में फँसा था, फिर भी वह शिवाजी की तरफ से बेखबर न था। उसने शिवाजी को घेर करने के लिए कुछ भी कसर न छोड़ी थी। परन्तु उसका कुछ भी वश न चला और शिवाजी अपने उद्देश्य में सफल होता चला गया। अन्त में शिवाजी की मृत्यु हुई और उसके बाद उसका अयोग्य पुत्र शम्भुजी राजा बना दिया गया। शम्भुजी में पिता के कोई गुण न थे। वह लापरवाह, दुराचारी, मूर्ख और अकर्मण्य व्यक्ति था। यद्यपि लड़ाइयों के जो जाल शिवाजी के मृत्युकाल में फैले हुए थे, उनके कारण शम्भुजी को गद्दी पर बैठते ही लड़ाइयों में फँसना पड़ा, परन्तु उसके दुर्भाग्य से उसी समय औरंगजेब का पुत्र अकबर उसकी शरण आ गया जिसके कारण बादशाह औरंगजेब एकदम बौखला उठा और एक बड़ी भारी सेना लेकर दक्षिण को चला आया। यहाँ आकर उसने गोलकुण्डा और बीजापुर के राज्यों को तहस-नहस कर दिया। इस समय गोलकुण्डा की गद्दी पर अबुल हसन, एक कमजोर और आलसी आदमी था जो न कभी दरबार करता था, न गोलकुण्डा के किले से बाहर जाने का साहस ही करता था। उसके हिन्दू मन्त्री मादण्णा और आकण्णा राज्य के सर्वेसर्वा थे। सुल्तान अबुल हसन अपने जनानखाने में पड़ा हुआ अनगिनत रखैलियों और नर्तकियों के साथ जीवन बिताता था। उन दिनों हैदराबाद दुराचार और विलास का केन्द्र बन गया था। यहाँ बीस हजार वेश्याएँ थीं, जो हर शुक्रवार को सार्वजनिक चौक में नृत्य करती थीं। अनगिनत शराबखानों में प्रतिदिन शराब की बड़ी-बड़ी पखालें खाली की खाली हो जाती थीं। इस प्रकार इस सुल्तान की पौने तीन करोड़ रुपयों की वार्षिक आय ऐश आराम में खर्च हो जाती थी।

दक्षिण में आकर औरंगजेब लगातार लड़ाइयों और झंझटों में

लगा रहा। उसे बड़ी-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। महामारी और अकाल से उसका लश्कर तबाह हो गया। चारों ओर लाशों के ढेर लग गए। अन्त में गोलकुण्डा को उसने फतह किया। गोलकुण्डा को जीतने पर वहाँ के किले से उसको सोने-चाँदी के बर्तनों, रत्नों और बहुमूल्य सामान के अतिरिक्त सात करोड़ रुपए नकद भी मिले। जीते हुए राज्य की आमदनी दो करोड़ सत्ताइस लाख थी।

बीजापुर राज्य भी उसने विजय किया। बादशाह ने बीजापुर के सुल्तान को 'खाँ' का खिताब दिया और एक लाख रुपया सालाना पेंशन भी नियत कर दी। धूमधाम के साथ उसने सजे रथों पर बैठ कर सोने चाँदी की मोहरें लुटाते हुए बीजापुर में प्रवेश किया और अपनी विजय की सूचना वहाँ की मशहूर तोप 'मलिके मैदान' पर खुदवा दी।

शिवाजी के मरने पर मराठा राज्य में बहुत झगड़े-झंझट उठ खड़े हुए थे। शिवाजी का बड़ा लड़का बहुत ही अयोग्य था। इसलिए दरबारियों ने शिवाजी के छोटे लड़के राजाराम को—जिसकी उम्र दस वर्ष की थी, सिंहासन पर बैठा दिया। परन्तु इससे मराठे सरदारों में आपस में फूट पड़ गई और सेनापतियों ने शम्भुजी को ही राजा मान लिया। शम्भुजी ने जब उसके विद्रोही शाहजादे अकबर को शरण दी तो बादशाह का गुस्सा और बढ़ गया। वह शाहजादा एक अज्ञात गाँव में बैठा हुआ सेना की भरती की व्यवस्था कर रहा था। इस समय उसके पास दो हजार घुड़सवार थे। उधर शम्भुजी दिन-पर-दिन आलसी और ऐयाश होता जाता था। उसने तब राजकाज अपने मंत्री कवि कलश पर छोड़ दिया था, जो इलाहाबाद का एक कनौजिया ब्राह्मण था। जब औरंगजेब ने चारों ओर से उस पर चढ़ाई की, तब उसे बहुत सी लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। परन्तु शम्भुजी के दुराचार और अस्थिर चित्तवृत्ति के कारण उसके बहुत से आदमी उसे छोड़-छोड़ कर शत्रुओं से जा मिले। इससे उसका संगठन टूट गया। बादशाह

लड़ाई पर लड़ाई चलता जा रहा था कि इसी समय शाही लश्कर में प्लेग फूट निकला—जिससे एक लाख आदमी मर गए।

जिस समय शाहजादा अकबर ने चार सौ घुड़सवार सैनिकों का एक दस्ता, जिनमें अधिकांश राजपूत थे, और बारबरदारी के पचास ऊँट लेकर शम्भुजी की शरण ली, उस समय शम्भुजी के सरदार भीतरी विद्रोह कर रहे थे। शम्भुजी ने अपने विरोधियों के नेताओं को कैद कर लिया। फिर भी व्यवस्था बिगड़ रही थी। एक षड्यन्त्र चल रहा था कि शम्भुजी को कत्ल कर दिया जाय और राजा राम को अकबर के संरक्षण में गद्दी पर बैठा दिया जाय। पर षड्यन्त्र फूट गया और शम्भुजी ने सब विद्रोहियों को निर्दयतापूर्वक मृत्युदण्ड दिया। इसी समय कवि कलश उसके मुँह चढ़ गया और शम्भुजी दिनोदिन निरुद्यमी लापरवाह होकर सुरा और सुन्दरियों में अपने दिन व्यतीत करने लगा।

जहाँ इस प्रकार दुर्व्यवस्था हो रही थी, औरङ्गजेब ने शम्भुजी पर सब ओर से चढ़ाई करने का निश्चय कर लिया। उधर इसी अवसर में शम्भुजी को पुर्तगालियों से भी उलझना पड़ा। इससे उसकी शक्तियाँ और भी क्षीण हो गईं। शाहजादा अकबर तो अपने मतलब को हल करने की फिक्र में था परन्तु शम्भुजी से उसे कोई सहायता नहीं मिल रही थी। शम्भुजी की अयोग्यता और दुराचार के कारण उसके दरबारी, सरदार पहले ही से उसके विरोधी हो गए थे और जो कसर रह गई थी उसे अब औरङ्गजेब की रिश्वतों ने पूरा कर दिया था। परिणाम यह हुआ कि औरङ्गजेब को बराबर सफलता मिलती चली गई। शम्भु जी फिर भी सावधान नहीं हुआ, न उसने औरङ्गजेब के इस बढ़ते हुए खतरे का कोई उपाय किया। उसके सैनिक मुगल प्रदेशों पर लूट मार करते रहे, परन्तु इनका सैनिक परिस्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। न इन छोटी मोटी बातों की तरफ औरङ्गजेब ने ध्यान दिया। उस मराठा राजा के दिमाग में औरङ्गजेब

और शत्रुओं को पकड़ कर कैद कर लिया गया। शम्भुजी के सात साल के पुत्र शाहूजी को राजा की उपाधि देकर और सात हजारी का मनसब देकर कैद में रखा।

इस प्रकार आदिलशाह, कुतुबशाह और शम्भुजी इन तीनों ही दक्षिण के राजाओं का खात्मा हो गया और वे राज्य मुगल राज्य में मिला लिए गए। इस प्रकार १६८९ के अन्त में ऐसा प्रतीत होने लगा कि औरंगजेब ने अब सब कुछ प्राप्त कर लिया, पर वास्तविकता यह थी कि वह सब कुछ खो बैठा था।

मुगल साम्राज्य इतना विस्तार में फैल गया था कि इस काल में एक व्यक्ति के द्वारा एक केन्द्र से उस पर शासन होना सम्भव नहीं था। सभी दिशाओं से इसके शत्रुओं ने सिर उठाया और उसने उन्हें हराया, परन्तु उनका कुचलना सम्भव न था। उत्तरी और मध्य भारत के सब प्रदेशों में अराजकता फैली थी। शासन प्रबन्ध ढीला था भ्रष्टाचार का बोलबाला था। दक्षिण के इस अनन्त युद्ध ने मुगल राज्य का वह अटूट खजाना बिल्कुल खाली कर दिया था जो तीन पीढ़ियों में संचित किया गया था और जिसकी समृद्धि का बोलबाला संसार भर में था।

शम्भुजी की मृत्यु के बाद मराठा संगठन का स्वरूप ही बदल गया। अब वे लूट-मार करनेवाली जाति या विद्रोही मात्र न रहे, मुगल साम्राज्य के एकमात्र प्रबल संगठित शत्रु और दक्षिणी भारत की राजनीति की महत्वपूर्ण शक्ति बन गए। सारे भारतीय प्रायद्वीप में बम्बई से मद्रास तक फैला हुआ सर्वव्यापी यह शत्रु वायु के समान किसी भी पकड़ में न आने वाला था, और मालवा, मध्य प्रदेश, बुन्देलखण्ड तक के मुगल विद्रोही गुट उनके मित्र थे, इसलिए अब औरंगजेब का दिल्ली लौट जाना सम्भव ही न रहा। उसके जीवन के आखरी दिनों में एक ही दुःखद घटना की पुनरावृत्ति होती रही—कि बहुत-सा समय, धन और सैनिकों की बरबादी के बाद वह एक पहाड़ी

मिला कौशल और कुछ ही महीनों बाद मौका पाकर मराठे उसे छीन लेते और बादशाह को फिर चढ़ाई करनी पड़ती। चढ़ी हुई नदियों, दलदल से भरे हुए रास्तों, ऊबड़-खाबड़ पहाड़ियों व पगडण्डियों में चलने से मुगल सैनिक हतोत्साह हो गए। बहुधा मज़दूर भाग जाते। बारबरदारी के जानवर भूख और थकावट से मर जाते और शाही सैनिक हमेशा भूखे रहते, खाने पीने की कमी ही रहती, कभी समाप्त न होने वाले शाही फरमानों से अधिकारीगण थक गए और यह आवश्यक हो गया कि औरंगज़ेब खुद ही प्रत्येक चढ़ाई का संचालन करे। अब वह अठासी वर्ष का बूढ़ा था और मृत्यु उसे चारों ओर से घेरती हुई चली आ रही थी। उसका अर्धशताब्दी का शासन बिल्कुल असफल रहा, यह उसे दीख गया था। शाही कोष खाली हो गया था, साम्राज्य दिवालिया था, तीन तीन साल की तनख्वाहें चढ़ी हुई थीं और भूखों मरने वाले सिपाही विद्रोह पर आमादा थे। शाही राजभवन का खर्चा बंगाल से मुर्शिदकुली खाँ के द्वारा भेजी जाने वाली रकम से किसी तरह चलाया जाता था, जिसकी बड़ी उत्सुकता से इन्तज़ारी की जाती थी। खेतों में न वृक्ष थे न कोई फसल। वहाँ मनुष्यों और पशुओं की हड्डियाँ बिखरी दीख पड़ती थीं। सारा प्रदेश ऐसा वीरान दीखता था कि तीन-चार दिन निरन्तर यात्रा करने पर ही कहीं आग का दीपक दीख पड़ता था।

अकबर का स्थापित किया हुआ और शाहजहाँ द्वारा समृद्ध किया हुआ संसारप्रसिद्ध मुगल साम्राज्य इस बड़े बादशाह के हाथों सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में मृत्यु के मुख में पहुँच चुका था। उसकी फौज में हर साल कुछ मिलाकर एक लाख आदमी मर जाते थे और मरने वाले पशुओं, बारबरदारी के ऊँट बैलों की संख्या तीन लाख से भी ऊपर पहुँच जाती थी। १७०२ से १७०४ तक दो ही वर्षों में दक्षिण में अकाल और महामारी से बीस लाख आदमी मर गए।

अब पूरे राज्य में मराठों का प्रभाव था। उन्होंने सारे रास्ते रोके

हुए थे। अन्न की कीमत बहुत बढ़ गई थी और शाही पड़ाव में लोग भूखों मरते थे। शाही लश्कर के पीछे पचास-साठ हजार मराठे लुटेरों का दल चलता रहता था, जो मौका पाते ही झपटने और खाद्य सामग्री को लूट लेता था। उन्हें अब मुगलों का डर न था। मुगल ही उनसे डरने लगे थे। उनके पास तोपें, बन्दूकें, तीर, तलवारें सब कुछ था। सामान ढोने के लिए हाथी और ऊँट भी थे। और इस प्रकार वे मराठा लुटेरे एक सुगठित सैनिक संगठन में सुसज्जित हो गए थे। अन्त में औरंगजेब बीस जनवरी १७०६ को पूरे तेईस वर्ष बाद अहमदनगर लौटा। इस वर्ष उसकी उम्र नब्बे को पार कर चुकी थी। उसने देखा कि उसके जीवन भर के प्रयत्नों का परिणाम राजनैतिक क्षेत्रों में उलटा ही हुआ। साम्राज्य में अराजकता ही दीख पड़ी। उसके सारे संगी-साथी, अमीर उमराव एक-एक करके मर गए थे। एक वजीर असदखाँ ही जिन्दा था जो उम्र में बादशाह से दो-चार साल छोटा था। उसका दिल बिल्कुल सूना हो गया था। जब वह शाही दरबारियों पर नजर डालता था तो उसे अपने चारों ओर अनुभवहीन, पेटपलन्त, जिम्मेदारी से घबराने वाले थोड़ी उम्र के नौजवान ही नजर आते थे, जो निरन्तर दरबार में षड्यन्त्र करते रहते थे। सिर्फ दो ही आदमी उसके सहचर थे, एक उसकी बेटी जीनत उन्निसा जो अब बूढ़ी हो चली थी और दूसरी उसकी बेगम उदयपुरी महल—कामबख्श की माँ, जो पशु की तरह मूर्ख और शक्की थी। कामबख्श सनकी, मनचला और स्वेच्छाचारी था। उसने कई बार भी उन आज्ञाओं का उल्लंघन किया था। मराठों के उपद्रव बहुत बढ़ गए थे। औरंगजेब की आपत्तियाँ बढ़ती जा रही थीं। शाही लश्कर की हालत संकटपूर्ण थी। मोहम्मद आज़म अपने प्रतिद्वन्द्वियों को रास्ते से हटाकर बादशाह होने की फिक्र में था। वजीरे आज़म असद खाँ भी षड्यन्त्रों में सम्मिलित हो गया था। उसके सब बेटे आपस में लड़ रहे थे। बादशाह को रह-रह कर बेहोशी के दौरे होते थे। उसने

अपने पास से सब वैद्यों को विदा कर दिया। अपनी वसीयत की और मृत्यु का मुकाबिला करने की तैयारी की। बीस फरवरी १७०७ शुक्रवार प्रातःकाल बादशाह ख्वाबगाह से निकला, सुबह की नमाज पढ़ी और हाथ में माला लेकर कल्मा पढ़ने लगा। धीरे-धीरे उस पर बेहोशी छाने लगी, साँस रुकने लगी, फिर भी आठ बजे तक—जब तक उसका दम नहीं निकल गया, उसकी उँगलियाँ निरन्तर माला फेरती रहीं और होंठ कल्मा का उच्चारण करते रहे।

अन्त में उसे शेख जैनुद्दीन की समाधि की चारदीवारी में दफन के लिए दौलताबाद के पास खुलदाबाद भेज दिया गया। वहाँ इसकी हड्डियाँ एक साधारण पुरानी टूटी-फूटी कब्र के नीचे दबी हुई हैं, जिस पर न कोई संगमरमर का चबूतरा है, न शानदार गुम्बज।

॥ समाप्त ॥